अथ

विज्ञाननौका.

॥ श्रीगणेशायनमः॥ ॥ श्रीशंकराचार्येभ्योनमः ॥
श्रीगुरुदेवायनमः ॥ ॥ अथविज्ञाननौकासटीकप्रा
रंभः ॥ ॥ अथमंगलंशार्दूलविक्रीडितछंदः ॥ ॥
ॐतत्सद्गुरुदेवशान्तमनिपाज्ञानीस्वध्यानीसदा ॥
नानायाजगक्लेशलेशनहियेकामादिव्हैनाकदा ॥श्रो
त्रीनिर्विघ्नप्रभृतिवृत्तिसुखदानीकीकृतीआकृती॥भा
वांभावविहीनलीनचिदमेंताकोंकरूंमेनती ॥ १ ॥
द्रुतविलंबितछंदः॥ चरणपंकजश्रीगुरुदेवके॥ मुदि
तभौंमनषट्पदसेवके॥मधुसुगंधसुप्रीतिवखानिये॥
अतिहिलीनभयोचितजानिये ॥ २ ॥ रसमहाद्भुत
पानकियोलियो ॥ परमशांत सुधाइवमानियो ॥ ल
हरमोमनमेंरसकीवढी॥ लवणपूतलिज्यूंजलमेंगढी
॥ ३ ॥ तिहिप्रभावकहोंकछुमेंकथी ॥ जलधिग्रंथन
अंतलहोंमथी॥तदपिमोमतिकीगतिंहजिती॥ हिय
हुलासविलासकहोंतिती ॥ ४ ॥ नकछुयुक्तिनउक्ति
हुहेवनी ॥पारिसुबुद्धिरिजावनकोंभनी ॥ लखिअशु
द्धजुबुधक्षमाकरो॥ जनकपैचवपुत्रइवादरो ॥५॥
गीतिछंदः ॥ विज्ञाननावकाय्यहश्रीशंकरकृतपरम

सुखदजनकों ॥ तिहिभायमेंकरींहोंजीज्ञासीकेश्रे यस्करमनकों ॥ ६ ॥ भवजलनिधिनिधिभवजलअ धाहतृष्णाप्रवाहवेगमहा ॥ प्रारब्धवातकरिअतिग तिउद्भववहुतरंगसोइकह्या ॥ ७ ॥ रागादिकजलजं तूचक्रभ्रमणसोअनंतयानिकही ॥अगाधदुस्तरकहि यततरवेकोयहअपूर्वनावसही ॥ ८ ॥ ॥ ७ ॥ याविज्ञाननौकाकाकर्त्ताजोश्रीमत्शंकराचार्यहै॥ ता कोंमेरानमस्कारहै ॥ श्रीमत्कहियेब्रह्मविद्यारूपा लक्ष्मीकरिकेसोभायमान ॥ शंकरपदकायहअर्थहै॥ शंनामसुखकाहै ॥ ताकूंजोकरेसोशंकरकहियेहै ॥ अ र्थयहकीजगदानंदकर ॥ यातेयहजनायाकिआरुरु क्षोकोवांछितसुखकादेनेहारा ॥ औआचार्यकिसकों काहियेकि जोशास्त्रार्थकाआलोचनकरे॥औअन्यज नोकोंश्रेष्ठाचारविपेस्थापनकरे ॥ औआपवीलोकसं ग्रहार्थआचरे॥तातेसोआचार्यकहेजावैहै॥ इनदोनो सार्थपदयुक्तश्रीशंकराचार्यहै॥ फेरसोकैसाहैं परमकृ पालुहै ॥ अनेकजिज्ञासुजनोकूंनिष्कंपबोधदेकेसंसा रबंधनतेमुक्तकियाहैजिनोने ॥औभ्रांतपुरुषेंप्रणित प्रचंडपाखंडमतरूपघनतिमिरतथावेदव्याख्यानमें संशयभ्रमरूपतिमिरकूंविध्वंसकर्त्तासाक्षातूअपूर्वसू र्य ॥ औप्राणियोंकेकल्याननिमित्तअमितप्रयत्नकि याहैजिनोने ॥ प्रथमसूत्रउपनिपदगीताख्यतनिभा ष्यकिया॥ तदनंतर अनतिप्रज्ञजिज्ञासुजनोकेहिता

थेअनेकप्रकरणग्रंथवेदांतकेरचताभया॥ औअनेकवे दांतकेसारसंग्रहरूपस्तोत्रोंकूंरचताभया ॥ तिनोंमें बीयहविज्ञाननौकासंज्ञकस्तोत्रपरमअद्भुतरच्याहै॥ ऐसापरमकृपालुश्रीशंकराचार्य साक्षात्शिवकाअव तारताकूंमेराभक्तिपूर्वकनमस्कारहै॥औपरमदेवतरू पऔसर्वदेवमयजोब्रह्मविद्याकादाताश्रीसद्गुरुहै ॥ ताकूंमेरावारंवारनमस्कारहै ॥ गुरुर्ब्रह्मगुरुर्विष्णु इ त्यादिवाक्योंमेंप्रसिद्धसर्वदेवमयगुरुकहाहै ॥ ऐसेप रमकृपालुंश्रीशंकराचार्यतथासद्गुरुतथासर्वसंतनकूं नमस्कारकरकेविज्ञाननौकाकीटीकामैंयथामतीअ नुसारकरूंहूं ॥यद्यपिपूर्वसंस्कृतटीकाहैबीतथापिता केविषेमंदबुद्धिपुरुषनकीप्रवृत्तिहोवेनहीं॥ औताका अर्थबीसंकोचसेकियाहै॥विस्तारनहीं ॥ औविस्तार सेंविनास्पष्टप्रक्रियाकाबोधजिज्ञासुकूंहोवेनहीं ॥औ याकेविषेप्रक्रियासर्वस्पष्टहोवेगीयातेंमंदबुद्धिवाले कीबीसुखसेंप्रवृत्तिहोवेगी ॥ औमहतोंकेजोवाक्य हैसोपरमपुनीतहै ॥ ताकापुनःपुनःचिंतनकरना सापरमसेवाहै ॥ ऐसेंऋषभादिकवृद्धोनेंकहाहै ॥ यातेभक्तियंत्रीतहुवालज्जाभयत्यागीके स्वापरहित यथामतिसेंविज्ञाननौकाख्यग्रंथकीटीकाकरूंहूं॥ ता केविषेप्रथमसंस्कृतटीकाकारकृतमंगलदिखावैहैं ॥ ननुप्रयोजनकेउद्देशकियेविना मंदकीबीप्रवृत्तिहोवे नहीं॥ यातेंमंगलकाप्रयोजनकहनाचाहिये ॥ या

शंकाकेहुयामंगलकाप्रयोजनकहेहै ॥ प्रारंभकियेग्रं
थकीनिर्विघ्नसमाप्तिकेअर्थ॥ वाग्रंथकर्त्ताविषेनास्ति
पणेकीभ्रांतिनिवृत्तिद्वाराजिज्ञासुकीग्रंथविषेप्रवृत्ति
केवास्ते ॥ वाश्रेष्ठोंकेआचारपरिपालननिमित्तअथ
वाशिष्योंकेशिक्षार्थमंगलअवस्यकरनाचाहिये॥सो
मंगलआशीर्वादतथानमस्कारतथावस्तुनिर्देशयाभे
दतेतीनप्रकारकेहोवेहै ॥ तिनमेंनमस्कारलक्षणमं
गलएकश्लोकसेंयाग्रंथविषेकियाहै ॥ सोदिखावेहै ॥
नारायणमिति॥श्लोकः॥नारायणंनमस्यामिमोहांध
तिमिरापहम् ॥ प्रकाशकंप्रकाश्यानांशुद्धबुधस्वरू
पिणम् ॥ १ ॥ ॥ छ ॥ ॥
नारायनकूंमेंनमस्कारकरूंहूं सोनारायन केसाहै ॥
मोहांधतिमिरकाहंताऔप्रकाश्योंकाप्रकाशकंऔशु
द्धबुधस्वरूपज्ञतिपदार्थ ॥ १ ॥ ॥ ॥
टीका ॥ मंगलकेश्लोकमेंनतिभादकियाश्रीनारायण
कूंतिसनारायनपदकाअर्थयहहै ॥ आपोनाराइति
प्रोक्ताइसमनुवाक्यतेंनरसंभवजलकानामनाराहै ॥
सोहेअयनजिसकाताकानामनारायनहै ॥ किंवान
रसंभूतहिरण्यगर्भकानामनाराहै ॥ ताकाजोअयन
कहियेआश्रयहैताकानामनारायनहै ॥ हिरण्यगर्भ
नामइहांब्रह्माकाहै ॥ सोब्रह्मदेवकेसाहैकिच्चतुरजा
केमुखहै॥औविसर्गरूपसृष्टिरचीहैजिसने ॥ औसर्व
प्राणिकेहितमेंतत्परहै ॥सोजिसकेनाभिकमलतेंप्रग

टभयाहै ॥ औतासेवदोंकालाभभयाहै॥सो "योब्रह्मा णंविदधातिपूर्वंयोवैवेदांश्चप्रहिणोतितस्मै" इत्यादि श्रुतिविषेप्रसिद्धकहाहै ॥ यद्वाजीवसमुहकानामनारहै॥ सोहैअयनजिसकाताकानामनारायनहै ॥अथवानराज्जातानितत्वानिइसभारतवाक्यतैनरसंभवतत्वोंकानामनाराहैं ॥ सोहैअयनजिसकेताकानामनारायनहै ॥ अथवाकर्मक्लेशादिकसंसारचक्रकाजोअराहैताकाउपादानमायाकानामअरायनहै ॥ सोअरायनरूपामायाजाकेविषेनहींहै ॥ तिसशुद्धचित्तिकानामनारायनहै ॥ इत्यादिव्युत्पत्तिसेनारायनपदकेअनेकअर्थहैं ॥ अबतिसनारायनकेविशेषणोंकाअर्थकरेहैं ॥ सोनारायनकेसाहैमोहांधतिमिरकाहरनेहाराहै ॥ मोहांधकहियेअंधमोहरूपअज्ञानअंधेरेकीन्याइआवरणकरनेवालाताकूंवृत्तिआरुढविशेषचेतनरूपसेविध्वंसकरेहै ॥ सोभगवाननेवीगीताकेदशमेअध्यायविषेकहाहै ॥ तिनभजनेहारेपुरुषनकेताहिअनुग्रहार्थअंतःकरणाविषेस्थितहोइकेअज्ञानजन्यतमकामैंज्ञानदीपककेप्रकाशसेनाशकरुहूंइति ॥ इहांअज्ञानकूंतमकीसाम्यताऔज्ञानकूंदीपककीसाम्यताकही॥ताकाअभिप्राययहहै।अज्ञानअंधेरेकीन्याइआवरणस्वभाववालाहै।जैसेंतिमिरकेयोगतेरज्जुस्थाणुपाषाणादिकविषेसर्पचोरव्याघ्रादिकप्रतीतिहोवैहै ॥ तैसेंअज्ञानयोगतेनित्य

मुक्तअसंगनिर्विकारआत्मावंधसंगीविकारीदीनदुः
खीत्वप्रतीतिहोवेहै॥सोअज्ञानकामाहात्म्यहै॥ शुद्ध
कूटस्थआत्माविषेवंधकीजोप्रतीतिहोवेहै ॥ सोमि
थ्याअध्यासरूपहै ॥ केवलअविद्यादोषसेंहीप्रतीति
होवेहै॥औविचारसागरमेजोदोषतेंविन्याहिअध्या
सनिरूपनकियाहै ॥ सोप्रौढिवादसेंकियाहै ॥ दोष
तेंविन्याअध्यासहोवेनही ॥ जहांकोइवीअध्यासमें
हेतुनहीं तहांवीअविद्यारूपदोषअवश्यहोवेहै ॥ य
हवृत्तिप्रभाकरमेंस्पष्टकहाहै ॥ यातेंसर्वदोषकाआल
यअज्ञानतमकीन्याइआवरणकरेहै॥ तातेंअज्ञानकूं
तमकीसाम्यतावनेहै॥तैसेंज्ञानकूंदीपककीवीसाम्य
तावीवनेहै ॥ काहेतेंजेसेंग्रहकाअंधेराकेवलदीपक
सेंहींनाशहोवेहै ॥ अन्यक्रियांतरसेंनाशहोवेन
हीं ॥ तैसेंहृदयगतअज्ञानहैसोवीकेवलज्ञानसें
नाशहोवेहै ॥ अन्यसाधनसेंनाशहोवेनहीं ॥ औ
दीपकवीजेसेंतैलवर्त्तिआदिकसामग्रीसेंहोवेहै ॥ ते
सेंज्ञानवीश्रद्धाभक्तिआदिकसामग्रीसेंहोवेहै ॥ औ
जेसेंदीपकजिसमंदीरमेंप्रज्वलितहोवेतिसग्रहमध्य
केअंधेरेकूंदूरीकरेहै ॥ अन्यग्रहांतरकेतमकूंहरणकरे
नहीं ॥ तैसेंवृत्तिज्ञानवीजिसकेअंतःकरणमेंप्र
गटहोवेताकेहृदयगतअज्ञानकूंध्वंसकरेहै ॥ अ
न्यपुरुपनकेअज्ञानकूंनाशकरेनहीं ॥ यातेंज्ञानऔ
म्यतासंभवेहै ॥ यातेंयहसिद्धभयाकि

नारायणवृत्तिआरुढहोयकेअज्ञानरूपअंधकारकूंहरे है ॥ सोअज्ञानआवरणकिसकूंकरेहै ॥ याआकाक्षाहुयाकेहैहै ॥ अज्ञानआवरणविक्षेपादिकसारीअवस्थासाभासअंतःकरणकीहै ॥कूटस्थआत्माकीकोइवीअवस्थानहीं ॥ किंतुकूटस्थआत्मानिर्विकारहै ॥यद्यपिवहुतआचार्योनेंस्वाश्रयस्वविपयअज्ञानअंगीकारकियाहै ॥ यातेंशुद्धचेतनकेआश्रयऔशुद्धचेतनकूंहींविपयकरेहै॥ औकोइआचार्यनेब्रह्मकासतचिदजोसामान्यरूपहैसोअज्ञानकाआश्रयमान्याहै औआनंदअद्वयताजोविशेपस्वरूपहै ॥ सोअज्ञानकाविपयमान्याहै ॥ औकिसिनेजीवअज्ञानकाआश्रयमान्याहै ॥ औब्रह्मअज्ञानकाविपयमान्याहै ॥ औकिसिनेएकजीववादमानिके एकअज्ञानमान्याहै ॥ किसिनेनानाजीववादमानीकेनानाअज्ञानमान्याहै ॥ औकिसिनेनिरंशअज्ञानमान्याहै ॥ किसिनेसअंशअज्ञानमान्याहै ॥ इत्यादिकअनेकप्रकारसेंअज्ञानकाआश्रयाविपयता आचार्योनेप्रतिपादनकियाहै ॥ तथापिअज्ञानकाअभिमानीचिदाभासहै अहंआत्मानजनामि ॥अथवाअहंब्रह्मनजनामिवाब्रह्मात्माका. ऐक्यत्वकाअस्फुरणलक्षणआज्ञनसाभासअंतःकरणमेंहीअभिव्यक्तहोवेहै ॥ औसुपोप्तिमेअनभिव्यक्तअज्ञानरहै ॥ तोवीअकिंचित्करहै॥ यातेंअंतःकरणमेअभिव्यक्तजोअज्ञानहै ॥ सो

इस्थाधिष्ठानआत्माकूंआवरणकरेहै ॥ यहप्रतीति
होवेहै ॥ औअज्ञानकृतबंधबीआत्माविषेहीप्रतीति
होवेहै॥औसूक्ष्मविचारसेंदेखियेतोआत्माअज्ञानसे
परेहै ॥ सदानिरावरणनित्यमुक्तस्वरूपहै ॥ सोसम
स्तसाक्षीतमतेंपरेहै ॥ औआदित्यवर्णचेतनात्मा
तमतेपरेहै इत्यादिश्रुतिस्मृतिविषेप्रसिद्धकहाहै॥ जे
सेंघनछिन्नदृष्टिपुरुषघनछिन्नसूर्यकूंमानेहै॥तेसेंमूढों
कीदृष्टिसेआत्माआवरणसहितऔबंधकीन्याइप्रती
तिहोवेहै ॥ यहहस्तामलकाचार्यकेवाक्यतेंबीकेव
लबुद्धिकेहींदोषहै॥ आत्माकूटस्थविषेकिसिदोषका
संभवनहींयहअर्थसिद्धभया॥ अबप्रकाशकंप्रकाश्या
नांयाद्वितियाविशेषणकाअर्थकेहेहै॥प्रकाशनेयोग्यहो
वेसोप्रकाश्यकहियेहै ॥ औजोप्रकाशनेवालाहोवेसो
प्रकाशककहियेहै ॥ अव्यक्तादिपृथ्वीपर्यंतकारणका
र्यभूतभौतिकसाराप्रपंचदृश्यहोनेतेप्रकाश्यहै ॥ ता
कोंप्रकाशनेहारास्वयंज्योतिस्वरूप प्रत्यगभिन्नपर
मात्माप्रकाशकहै ॥ यद्यपिबाह्यघटादिकपदार्थनकूं
सूर्यादिकबीप्रकाशेहै ॥ तथापिसोसूर्यादिकज्योति
यांपरिछिन्नहै ॥औतिनज्योतियोंकाबीप्रकाशकचैत
न्यआत्माहिहै॥तिसाचिदवपुनारायनकेप्रकाशसेंहीं
सूर्यादिकोंकाप्रकाशहोवेहै ॥ तिनज्योतियोंविषे
स्वतंप्रकाशतानहीं॥ सो "तस्यभासासर्वमिदंविभा
ति ॥ ज्योतिषामपिनज्ज्योति" इत्यादिश्रुतिस्मृति

याविषेतिसपरमात्माकेप्रकाशते । तिनोंकाभान ॥ औसोज्योतियोंकाबीज्योति एसेप्रसिद्धकहाहैं ॥ सोज्योतिबीअग्निकीन्याईदीप्तिरूपनहीं ॥ किंतुज्ञप्तिरूपहै ॥ यातेंयहासिद्धभयाकिअंतरबाह्यसारेदृश्यपदार्थनकातथासूर्यादिकसर्वज्योतीयोंकाप्रकाशकएकचिदात्मानारायनहीहै ॥ फेरसोकेसाहैकिशुद्धहै ॥ शुद्धकहियेअविद्यादिमलसेरहितहै ॥ यद्यपिमलनामिपापकाबीहै ॥ औरागादिकमानसदोषनकोंबीशास्त्रोंविषेमलकहाहै ॥ तथापिसोसारअविद्याकेहीअंतर्भूतहै ॥ यातेअविद्याकेनिषेधसेतिनसर्वमलोंकानिषेधहै ॥ यातेसोनारायनशुद्धहै ॥ औबुधस्वरूपहै ॥ बुधकहियेज्ञानरूपहै ॥ ज्ञानगुनवालानहीं ॥ काहेतेंगुणहोवेसोआगमापायिहोवेहै ॥ यहज्ञानआगमापायिनहींकिंतुनित्यज्ञानरूपहै ॥ जेसेंसूर्यप्रकाशस्वरूपहै ॥ औअग्निउष्णस्वरूपहै ॥ तेसेंपरमात्माज्ञानस्वरूपहै ॥ जिसचेतनकेप्रकाशपाइकेअबोधात्मकचक्षुरादिइंद्रियांअपनेंअपनेविषयविषेप्रवृत्ततेहैं॥ननुविज्ञानस्वरूपबुद्धिबीशास्त्रोंसेसुनियतहेतासेंइंद्रियांकीप्रवृत्तिक्युंनहोवेगी ॥ यसशंकाकासमाधानयहहै ॥ साबुद्धिबीज्ञानस्वरूपनहीं॥काहेतेबुद्धिसत्वगुनकाकार्यहै ॥ यातेचेतनकेप्रतिबिंबग्रहनंकरनेयोग्यहै ॥ तातेतिसविषेज्ञानकीसामर्थ्यताहै॥औविज्ञाननामकूंपावेहै॥परंतु

स्वतःजडहै॥ताकेविषेज्ञानहोनावीस्वतःदुर्लभहै॥तो विशेषज्ञानरूपविज्ञानतोकेसेंसंभवे ॥किंतुयाचितमं डनन्यायकरी॥अथवाकृष्णसंनिधिअर्जुनकेसामर्थ्य कीन्याइ चेतनरूपआत्माकीसंनिधिसेंहीज्ञानकेयो ग्यताकूंपावैहै॥ औक्रमक्रमसेंविषयकूंप्रकासेहै॥ औ आत्माक्रमसेंविन्यायुगपतसर्वपदार्थनकूंप्रकाशैहै ॥ औबुद्धिअपनेप्रकाशमेंचेतनकीअपेक्षाकरैहै ॥ औ आत्माअपनेप्रकाशमेंबुद्धिकीवाअन्यकिसिकीअपे क्षाकरेनहीं ॥ यातेंबुद्धिज्ञानस्वरूपनहीं ॥ किंतुता केविषेगोणविज्ञानशब्दकाप्रयोगहै ॥मुख्यज्ञानस्वरू पआत्माहीहै ॥ सोअनेकश्रुतिस्मृतिशास्त्रविषेकहा है ॥ यहअर्थविस्तारसेंआगेकहेंगे ॥ इहांदिङ्मात्र कहाहै॥ उक्तकहेविशेषणोंकरिकेविसिष्टजोनारायण है ॥ ताकूंमेराअभेदरूपकरिकेनमस्कारहै ॥ इतिमं गलश्लोकार्थः ॥ १ ॥

इसप्रकारसेंग्रंथकेआरंभमेंमंगलकरिकेअबमूलनव श्लोकात्मकविज्ञाननौकाकीटीकाकाआरंभकरैहै ॥य हविज्ञाननौकाकेसीहै ॥ किसंसाररूपसमुद्रतरने काँदृढजहाजहै ॥ तामेंसद्गुरुरूपीकरणधारकाआ श्रयलेकेंऔयाकाविचारकरकेताकेतात्पर्यमेंवृत्तिसं पादनजोकरेगा ॥ सोअनायाससेंभवसागरतरकेप रेपारकूंपोंचेगा ॥ संसारकूंसागररूपसेंश्रुतिस्मृ तिविषेप्रसिद्धकहाहै. ॥ जन्ममृत्युरूपयाकेविषेज

लहै ॥ रागादिकनक्रमकरादिजंतुहै ॥ शोकरूपवड वानलहै॥सुखदुःखाकारवृत्तियांतरंगहै ॥ भ्रमरूपभ्र मरिहै॥तिससागरकापारपरब्रह्महै॥जाकूंपाइकेफेर संसारमेपतनहोवेनहीं॥सो"नसपुनरावर्त्तते", याश्रु तिनेप्रसिद्धकहाहै ॥ याहिकूंहीपरमधामगीतामेकहा है ॥ यातेंसर्वश्रुतियांकासिद्धांतरूपयाविज्ञाननौका काजिज्ञासुअवश्यविचारकरे॥अबयाकेअनुबंधचतु ष्टयवेदांतप्रतिपादितदिखावेहै ॥ काहेतेअनुबंधजा नेविन्याजिज्ञासुकीग्रंथमेप्रवृत्तिहोवेनहीं ॥ औग्रंथ कातात्पर्यवीजान्याजावेनहीं॥ यातेंअनुबंधअवश्य ज्ञातव्यहैसोअनुबंधयहहै ॥ अधिकारीसंबंधविषय औप्रयोजनइनच्यारिकानामअनुबंधहैमलविक्षेप दोषतेरहित औच्यारिसाधनसहितऔस्वरूपकाजा कूंअज्ञानहोवैसोयाग्रंथकाअधिकारीहै ॥ सोयाकेप्र थमश्लोकमेदिखायाहै॥यहअधिकारीकीप्रक्रियाप्रथ मश्लोककीटीकामेंस्पष्टहोवेगी ॥ औप्रतिपादकप्रति पाद्यताभावग्रंथब्रह्मकासंबंधहै॥तेसेंहीज्ञानग्रंथकाज न्यजनकभाव॥औअज्ञानग्रंथकानिवृत्यनिवर्तकभा व ॥ औप्रयोजनअधिकारीकाप्राप्यप्रापकभावसंबंध है॥एसेओरवीसंबंधजानिलेने ॥ननुब्रह्मवाणिकाअ विषयश्रुतिनेकहाहै ॥ ताकेसाथग्रंथकाप्रतिपादकप्र तिपाद्यताभावसंबंधकहनाअसंभवहै ॥ याशंकाका समाधानमचीकटाकन्यायकरिकेरहै॥यद्यपिशब्दकी

सक्तिवृत्तिसेब्रह्मकाप्रतिपादनअशक्यहै ॥ तथापि लक्षणावृत्तिसेशब्दब्रह्मकाबोधकरेहै॥यहप्रक्रियापंच मेश्लोकके व्याख्यानमेस्पष्टकहैंगे॥ लक्षकाबोधऔल क्षणाकारूपशक्यार्थसेविन्याहोवैनहीं ॥ यातेंअध्या रोपअपवादन्यायकरिब्रह्मकाबोधशब्दसेंहोइशकैहै ॥यातेप्रतिपादकप्रतिपाद्यताभावसंबंधबनैहै ॥ अब विषयकहेहै॥जीवब्रह्मकीएकतायाग्रंथकाविषयहै ॥ ननु जीवरागादिक्लेशकरीयुक्तहैताकाक्लेशराहितब्रह्म केसाथिअभेदकेसंभवे ॥ याशंकाकासमाधानयह है॥यद्यपिअंतःकरणविसिष्टकीतोब्रह्मसेंएकतानहीं बीवनति तथापिअंतःकरणभागविशेषणकूंछोडीके चेतनभागजोविशेष्यहै ॥ताकीब्रह्मकेसाथिएकताव नेहै॥काहेतेंरागादिकक्लेशविशेषणकेधर्महै॥औविशे ष्यरूपजोसाक्षीहै ॥ सोसर्वक्लेशतेरहितहै ॥ ताकी ब्रह्मकेसाथिसदाअभेदहै॥ यहसर्ववेदांतकासिद्धांत है ॥ यहप्रक्रियाविचारसागरमेविस्तरहै ॥ अबप्रयो जनकहे ॥ परमानंदकीप्राप्तिऔसमूलअनर्थकीनि वृत्तियहग्रंथकामुख्यप्रयोजनहै॥ औअवांतरप्रयोज नज्ञानहै॥ ननुपरमानंदतोजीवकास्वरूपहीवेदमेक हाहै ॥ ताकूंफेरपरमानंदकीप्राप्तिकहनाअसंभवहै ॥ याशंकाकासमाधानयहहै ॥यद्यपिपरमानंदजीवका स्वरूपहीहै॥तथापिअज्ञानकालमेंताकीप्रतीतिहोवै नहीं ॥ किंतज्ञानकालमेंहीप्रतीतिहोवैहै ॥ यातेकं

ठचामीकरन्यायाकरीप्राप्तिकीप्राप्तिवींसंभवेहै ॥ यह्च्यारिअनुबंधनकासामान्यरूपसेंनिरूपनकियाहै ॥ ग्रंथविस्तारकेभयसेविस्तरकह्यानहीं ॥ पूर्वकहे अधिकारीकेलक्षणमेंयहजिज्ञासाहोवेहै ॥ मलविक्षेपदोषोंकीनिवृत्तिकिससाधनसेहोवेहै ॥ औच्यारिसाधनकोनहै ॥ तिनचतुष्टयसाधनकीउत्पत्तिकिसउपायसेंहोवेहै ॥ औअज्ञानकीनिवृत्तिकासाधनकोनहै ॥ औअज्ञानकीनिवृत्तिहुयाअधिकारीकूं क्यालाभहोवेहै ॥ इतनेप्रश्नोंकाउत्तरयाप्रथमश्लोकसेंऔताकेव्याख्यानसेदिखावेहै ॥ श्रीमच्छंकराचार्यनेअपनेशिष्योंकेताहिसाधनोंसहिततत्वकाउपदेशदिग्विजयादिकग्रंथनविषेकियाहै सोइसारसंग्रहयाग्रंथमेंसारेपदार्थदिखायाहै ॥ तामेप्रथमअधिकारीकेसाधनदर्शनपूर्वकस्वानुभवकहेहै ॥ तपोयज्ञदानादिभिरिति ॥

तपोयज्ञदानादिभिःशुद्धबुद्धिर्विरक्तोनृपादौपदेतुच्छबुद्ध्या ॥परित्यज्यसर्वंयदाप्नोतितत्त्वं परंब्रह्मनित्यंतदेवाहमस्मि ॥१

तपयज्ञदानादिकोंकरकेशुद्धभईहै बुद्धिजिसकियातें नृपादिकपदविषेमिथ्यात्वबुद्धिसेविरक्तभयाहै ॥सो

सर्वकापरित्यागकरके जिसनित्यरूपपरब्रह्मतत्वकूं प्राप्तहोवेहेसोइमेहूंइतिपदार्थः ॥ टीका ॥ स्ववर्णाश्रमधर्मानुष्ठानकानामतपहे ॥ सोब्राह्मणादिच्यारिवर्णोंकाऔब्रह्मचर्यादिच्यारिआश्रमोंकाधर्ममनुआदिस्मृतिविषे औभारतभागवतधर्मसिंधुआदिकशास्त्रोंविषेप्रसिद्धकहाहे ॥ अथवाकरणग्रामकेसंयमकानामतपहे ॥ वाकृच्छ्रचांद्रायणकानामतपहे ॥ तैसेंवैराग्यकूंतपकहेहे ॥ औविचारकूंवीतपकहेहे ॥ एसेंतपशब्दकाअर्थ बहुतप्रकारसें शास्त्रोंविषे कहाहे ॥ अथवागीताविषेसात्विकराजसतामसभेदसें तीनप्रकारकातपकहाहे.॥ तिनमेंसात्विकतपअनुष्ठानीयहै ॥ सोवी शारीरवाङ्मयऔमानसया भेदसेंतीनप्रकारकाहे ॥ तिनमेंदेवद्विजगुरुप्राज्ञकापूजनऔशौचआर्जवब्रह्मचर्यअहिंसायहशारीरतपहै ॥ औअनुद्वेगकरऔसत्यऔप्रियऔहितवचनकाउच्चार औवेदाभ्यासकरनायहवाङ्मयतपहे ॥ औमनकाप्रसादऔसौम्यताऔमौनऔअंतःकरण कानिग्रहऔभावसंशुद्धियहमानसतपकहाहे ॥ इत्यादिकतपजानने ॥अबयज्ञपदकाअर्थकहेहै॥ ईश्वरार्पणबुद्धिसेंसर्वअंगयुक्तयजनकानामयज्ञहे ॥ सोश्रौतस्मार्त्तभेदसेंऔअधिकारीभेदसेंऔमुख्यगौणभेदसें अनेकप्रकारकेहै ॥ वृहस्पतिसवराजसूयवैश्यस्तोम इत्यादिश्रौतयज्ञहे ॥ सोब्राह्मणक्षत्रियवैश्ययथाक्र

मकरे ॥ औदेवयज्ञऋषियज्ञपितृयज्ञादिकपंचमहा
यज्ञहै ॥ सोस्मार्तयज्ञहै ॥ सोनित्यगृहस्थकूंकर्तव्य
है॥ तेसेदर्शपूर्णमासादिवानप्रस्थकूंकहाहै ॥ औ द्र
व्ययज्ञतपयज्ञयोगयज्ञस्वाध्याययज्ञज्ञानयज्ञ इत्या
दिगीताविषेगौणयज्ञकहाहै ॥ सोयथाअधिकारसर्व
आश्रमियोंकोंकर्तव्यहै ॥ अबदानकेहैहै ॥ दान
सात्विकराजसतामसभेदतेंतीनप्रकारका भगवान
नेंकहाहैतिनमेमुमुक्षुकूंसात्विकदानदातव्यहै ॥ उ
त्तमदेशउत्तमकालविषेउत्तमपात्रकेतांइयत्किंचित्
जोदियाजावेसोसात्विकदानहै ॥ सोअन्नवस्त्रआ
त्मतुल्यहिरण्यगोदानादिकद्रव्यसाध्यदानसर्वकूय
थाशक्तिदातव्यहै ॥औदानकेपात्रोंकाभेदशास्त्रोंमेंप्र
सिद्धहै॥सर्वदानोंविषेअन्नकादानप्रधानहै ॥ताकास
र्वअधिकारीहै ॥ औधनदानविषेपात्रअपात्रकाअव
स्यविचारकर्त्तव्यहै॥यहतपयज्ञदानइनतीनोंपदोंका
व्याख्यानकिया ॥ औआदिशब्दसेंअनुक्तसोरकर्मो
काऔसगुनउपासनाकाग्रहणहै ॥ काहेतेंनित्यनैमि
त्तिकादिककर्मवीपापोंकेनासकशास्त्रोमेप्रसिद्धकहा
है॥औतीर्थस्नानादिकवीचित्तशुद्धिकाहेतुकहाहै॥या
तेताकूंवीकरे ॥ गंगादिकनदीयांकानामतीर्थहै ॥ औ
गुरुपादोदकपरमतीर्थहै ॥ काहेतेंसप्तसागरपर्यंतती
र्थस्नानादिककाजोफलहै ॥ तासेंगुरुरंघ्रिकेजलसह
स्त्रांशकरकेवीदुर्लभहै ॥ एसेशास्त्रे सिद्धकहा

औसत्यक्षमाइंद्रियकानिग्रहसर्वभूतदया औआर्ज
वयेसारेअंतरतीर्थहै ॥ सोवीशास्त्रोंमेंप्रसिद्धहै ॥ द
याक्षमाअनसूयाशौचअनायासमंगलअकार्पण्यऔ
अस्पृहायेअष्टसर्ववर्णाश्रमकेसाधारणधर्महै॥ इत्या
दिककर्म औपरमेश्वरकाध्यानलक्षणउपासनाकोंक
रेयेआदिशब्दसेंआचार्यनें दिखायाहै॥तिसश्रौतस्मा
र्त ॥ तपयज्ञदानादिककर्मोंकेअनुष्ठानसेंबुद्धिशुद्धहो
वेहै ॥ नामसेंमलदोषकीनिवृत्तिहोवेहै ॥ औउपासा
नासेंचित्तकीचंचलतादोषदूरीहोवेहै ॥ ननुकर्मसें
पितृलोककीप्राप्तिवेदमेंकहिहै ॥ यातेंकर्मसेंअंतःकर
णकीशुद्धिकहनाअसंभवहै ॥ याशंकाकासमाधान
यहहै॥सकामबुद्धिसेंकियेकर्मसेंहिउत्तमलोककीप्रा
प्तिवेदनेंकहिहै ॥ निष्कामकर्मसेंनहीं ॥ किंतु"धर्मे
णपापमपनुदाति" इसश्रुतिने धर्मानुष्ठानसेंपुरुषके
पापरूपमलकीनिवृत्तिहिकहिहै ॥ यातेंतपयज्ञादि
ककर्मोनिष्कामकूंअंतःकरणशुद्धिकेहेतुहै ॥ सो
"यज्ञोदानंतपश्चैवपावनानिमनीषिणां"यास्मृतिवा
क्यसेंयज्ञदानतपबुद्धिमानोंकोंपावनकरप्रसिद्धकहा
है ॥ यातेंनिष्कामकर्मसेंपितृलोकादिककीप्राप्तिसं
भवेनहीं किंतुअंतःकरणकीशुद्धिहोवेहै ॥ तासेंज्ञान
होयकेमोक्षहोवेहै यहवेदकासिद्धांतहै॥ ननुजनका
दिकनकूं कर्मकरकेहीसंसिद्धिस्मृतिमेंकहिहै॥ याते
मुमुक्षुकूंकर्मसेंहीमोक्षहोवेगा ज्ञानकरकेक्याहै ॥ या

शंकाकासमाधानयहहै ॥ "नास्त्यकृतकृतेन नकर्म णानप्रजया" इत्यादिकश्रुतियोंने कर्मकूंमोक्षकाअ हेतुपणाप्रसिद्धकहाहै ॥ औस्मृतिमे जनकादिकोंकूं कर्मसेंसंसिद्धिकहिहै सोसंसिद्धिशब्दकाअर्थमोक्षन हीं, किंतु अंतःकरणकीशुद्धिहीसंसिद्धिशब्दकाअर्थ है ॥ औकर्मसेंउत्पाद्यप्राप्यसंस्कार्यविकार्यरूपफल होवेहै सोअनित्यहै॥ तैसें मोक्षबी कर्मकाफलमाने तोअनित्यहोवेगा॥ औएकभाविकवादिनेजोकाम्य निषिद्धकूंछोडिके नित्यनैमित्तिककर्मके अनुष्ठानसें मोक्षमान्याहै ॥ वाएकभावीजन्मअंगीकारकिया है सोवादभाष्योविषे निराकरणकियाहै औवार्त्ति कारनें नैष्कर्म्यसिद्धिविषेभलिप्रकारसेखंडनकिया है॥यातें कर्मसेंमुमुक्षुकूंवांछितवस्तुकीप्राप्तिहोवेनहीं किंतुचित्तशुद्धिहिकर्मसेंहोवेहै॥सो"चित्तस्यशुद्धयेक र्म नतुवस्तूपलब्धये"इत्यादिवाक्यसेंग्रंथांतरमेप्रसि द्धकहाहै॥ कर्मयोगीशरीरमनबुद्धिइंद्रियाकरकेजोक र्मकरेहै सोचित्तशुद्धिवास्तेकरेहै॥एसेस्मृतिविषेबीक हाहै॥यातेंकर्मसारेअंतःकरणशुद्धिकेहेतुहै॥अथवाचि त्तशुद्धिद्वाराविविदिषाकेहेतुहै॥ अथवावैराग्यकेहेतुहै ॥वावैराग्यादिसाधनचतुष्टयकेहेतुहै ॥ तासें तत्व बोधहोयकेमोक्षहोवेहै ॥ पूर्वकहेतपयज्ञादिकक र्मविविदिषाकेहेतुकहेसोवेदविषेप्रसिद्धकहाहै ॥ त थाश्रुतिः " ब्राह्मणाविविदिषंतियज्ञेनदानेनतपसा

ऽनाशकेन " इति ॥ याकाअर्थयहहै ब्राह्मणो यज्ञकरकेदानकरकेतपकरकेऔअनाशककरकेविवि दिपाकरेहै॥जाननेकिइच्छाकानामविविदिपाहै॥नि षिद्धऔअनिषिद्धविषयनकेअसेवनकानाम अना शकहै॥वाअहिंसावृत्तकानाम अनाशकहै ॥ यज्ञादि कोंकाअर्थतोउक्तकहाहै ॥ इसप्रकारसें कर्मविविदि पाकेहेतुहैं ॥ औईश्वरजिसपरप्रसन्नहोवे सोवैराग्य फलकूंपावेहै ॥ इसप्रकारसें ईश्वरसमर्पितकर्मों कावैराग्यरूपफल व्यासमुनिनेंकहाहै ॥ जिहासा कानामवैराग्यहै ॥ इसलोककेअथवापरलोककेदुः खदायकभोगमेंरेकूंमतहोवौ ऐसीत्यागकीइच्छाका नामजिहासाहै ॥ ननुसर्वपुरुष भोगनकूंचाहेहैसर्व भोगनकात्याग अशक्यहै ॥ याशंकाकासमाधानय हहै॥ यद्यपिमूढविषयभोगका त्यागनहिंचहाते का हेतें तिनोंकाअंतःकरणमलीनहै यातेभोगाभिलाषा त्यागनि तिनोकोंअशक्यहै॥तथापिपुन्यभाजनशुद्ध चित्तवालेप्रेक्षावंतभोगासाकूंत्यागेहैतहांश्रुति॥"परी क्ष्यलोकान्कर्मचितान्ब्राह्मणोनिर्वेदमायादिति॥" अर्थयह॥ब्रह्मजिज्ञासुकर्मरचितस्वर्गादिलोकनकूंवि चारिकेवैराग्यकूंपावेहै॥यातेएहिपरमेश्वरकाअनुग्रह है॥औभोगैश्वर्यताकीप्राप्तिईश्वरकीकृपानहीं॥याते यहसिद्धभया ईश्वरार्पितकर्मसेचित्तशुद्धिद्वारा वैरा ग्यहोवेहै॥ तिसवैराग्यकूं अबआचार्यकहेहैं॥विरक्तो

नृपादोइति॥नृपादोकहियेराजातेंआदिलेकेब्रह्मापर्यं
तयावत्भोगैश्वर्यहै ॥ ताकूंतुच्छत्वनिश्चयकरकेशुद्ध
चित्तवालाजिज्ञासु विरक्तहोवैहै ॥वीतरागकूं विरक्त
कहेहैं ॥ सोविरक्तसारेसंसारकूंतृणवत्तुच्छजानेहै ॥
सोशास्त्रोंविषेप्रसिद्धकहाहै ॥ यातेंपरमवैराग्यहिनि
ष्कामकर्मोंकाफलहै ॥ जबतक वैराग्यप्रगटनहींहो
वेतबतकजिज्ञासुकर्मकूंअवश्यकरे ॥ जबआपनेहृ
दयमेंसंसारभोगनतेवैराग्यउदयहुयाजानेऔमनमें
दुरवासनाउदयनहींहोवेतबबुद्धिकीशुद्धिनिश्चयकरे
॥ यातेवैराग्यउदयपर्यंतहीकर्मकर्त्तव्यहै ॥ तदनंतर
नहीं ॥ सो "तावत्कर्माणिकुर्वीत ननिर्विद्येतयाव
ता"याभागवतवाक्यसेयावत्वैराग्यकूंनहींपावेताव
तहींपुरुषकर्मकूंकरे औ " संनस्यश्रवणंकुर्यात् " या
श्रुतिनेचित्तशुद्धिअनंतरकर्मकासंन्यासपूर्वकवेदांत
काश्रवण हि वीतरागजिज्ञासुकूंविधानकियाहै॥ या
तेमलविक्षेपकी निवृत्तिपर्यंतकर्मउपासनारूपबहिरं
गसाधन कर्त्तव्यहै ॥ तदनंतरकर्मकात्यागकरकेअं
तरंगसाधनहीं तत्वज्ञाननिमित्त संपादनीयहै ॥
ननुंजावतजीवेंतावतअग्निहोत्रादिककर्मकूंकरेएसा
वेदविषेप्रसिद्धकहाहै यातेंकर्मकात्यागअसंभवहै ॥
किंतुज्ञानकर्मदोनु मिलकेमोक्षके हेतुहै ॥ औश्रुति
स्मृतिविषेबहुतस्थानमेसमुच्चयसुनियतहैतातेंकर्म
सदाकर्त्तव्यहै ॥ याशंकाकासमाधानयहहै ॥ वेद

विषैकहा जोजीवेतावतकर्मकरे ताकाकर्मविषैबाहि मुखोकूंप्रवृत्तिकरावनेमेतात्पर्यहै॥ तासेचित्तशुद्धिक रायकेप्रवृत्तिमार्गसेछोडायकेनिवृत्तिमार्गसंन्यासका हिश्रुतिविधानकरेहै॥औज्ञानकर्मकाविरोधिस्वभाव होनेतेंतिनदोनोंकासमुच्चयबनेनहीं॥औतिससमुच्च यवादकाखंडनसूत्रकारभाष्यकारनेबहुतस्थानमेकि थाहै ॥ औ रामगीताविषैबीसमुच्चयवाद प्रसिद्धनि पिद्धकियाहै ॥यहवार्त्ताआगेस्पष्टहोवेगी ॥औश्रुति स्मृतिविषैजोकर्मज्ञानकासमुच्चयप्रतीतिहोवेहै सो समसमुच्चयनहीं किंतु क्रमसमुच्चयहै॥यातेंयहसिद्ध भयाकि निष्कामकर्मकाफल चित्तशुद्धिवाशुद्धिद्वा राविविदिषावाविषयोंतेंवैराग्यवावैराग्यादिचतुष्टय साधनकीप्राप्तिहुयाताकेअनंतरकर्मकात्यागकरकेत त्वविचारहींकर्त्तव्यहै ॥सो"अथातोब्रह्मजिज्ञासा" या०यासमूत्रविषैबीचतुष्टयसाधनप्राप्तिअनंतरउत्क टजिज्ञासापूर्वकब्रह्मविचारहीकर्त्तव्यकहाहै ॥ सोसा धनचतुष्टयईश्वरार्पितकर्मोंसेईश्वरकीप्रसन्नतासेहो वेहै ॥ सोअन्यशास्त्रमेबीकहाहै ॥ स्ववर्णाश्रमध र्मकरके औतपकरके औसर्वभूतदयालक्षणहरितोष णधर्मकरकेपुरुषोंकोवैराग्यादिसाधनचतुष्टयप्रगट होवेहैइति॥ तिनच्यारीसाधनोकानाम 'यहहै॥विवे कवैराग्यशमादिपट्संपत्तिऔमुमुक्षुता॥ कहांवैराग्य आदिकहाहै सोवलिष्ठहोनेतेंकहाहैं अनुक्रमसेनि

त्यानित्यवस्तुकाविवेकहीप्रथमहै ॥ अवइनच्यारी साधनोंकाक्रमतेलछनकहेहै ॥ आत्मानित्यऔसुख रूपहै ॥ औतासेभिन्नदृश्यजगतसाराअनित्यऔदुः खरूपहै याज्ञानकानामविवेकहै ॥ ताविवेकसेवैरा ग्यउत्पन्नहोवैहै ॥ काहेतेंजोपदार्थअनित्यऔदुःख रूपनिश्चेहोवेताकेविषेहियबुद्धिहोवैहै ॥ जैसेंमृगतृ ष्णाकेजलादिक औविषसंयुक्तअन्नादिकनकूंमिथ्या दुःखप्रदजानेतेंताकेविषेहेयबुद्धिहोवैहै ॥ तैसेंविषय भोगनविषेवी शास्त्रोक्तनानादोषावलोकनतें जिहा साहोवैहै॥सोदोषआगेस्पष्टकहेंगे॥ अववैराग्यकाल छनकहेहे ॥ ब्रह्मलोकपर्यंतयावत्दृष्टअनुश्राविक भोगहै सोसारेकाकविष्ठावत्वास्वानवांतवत्त्यागकी इच्छाकानामवैराग्यहै ॥ यावैराग्यकूंनिर्मलऔ तीव्रतरऔवसीकारसंज्ञा करिकेविद्वान्कहेहै ॥ याकेविशेषस्वरूपहेतुफलादिकऔअवांतरवैराग्यके भेदआगेकहेंगे ॥ अवषट्संपत्तिकेनामकहेहै ॥ श मदमश्रद्धासमाधानउपरतिऔतितिक्षाइनषट्लछ नकीप्राप्तिकानामषट्संपत्तिहै ॥ तिनमेंशमकाल छनयहहै ॥ सदैववासनाकात्याग सोशमकहि येहै ॥ वासनानाम सूक्ष्मसंस्कारकाहै ॥ ता कीउपेक्षाकानामवासनाकात्यागहै ॥ उपेक्षाना मतिरस्कारकाहै ॥ व्याकरणरीतिसेशमनामचित्त केउपशमकाहै॥औश्रुतिमेंशांतिपदकरिकहाहै। औ

शास्त्रोमेंमनकानिरोधशमकालक्षणकियाहै ॥ निरो
धनामसंयमकाहे ॥ दमकालछनयहहै ॥ वा
ह्यवृत्तिइंद्रियोंकानिग्रहदमकहियेहै ॥ योगशास्त्र
मेंयाकूंप्रत्याहारकहेहै ॥ श्रुतिमें याकूंदांतिकहाहै ॥
तिनइंद्रियग्रामकानिरोध मनकेनिरोधाधीनहै ॥ र
थयंत्रितअश्वोकानिरोधजसें रस्मिसेहोवेहै॥ तेसंश्रु
तिमेंशरीररूपरथकहाहै इंद्रियाकूंहयकहाहे ॥ मन
कूंरस्मिकहाहै ॥ वुद्धिकूंसारथिकहाहै ॥ जेसें सतुसा
रथीरस्मिकूंखेचके वाजियोंकूंनिरोधकरीसिधेराह
चलावेहै तैसेंविवेकवतिवुद्धिमनकूंनिग्रहकरकेइंद्रि
यांकूंविषयनते निरोधकरके मोक्षमार्गमेप्रवृत्तकरेहै॥
अवश्रद्धालछनकहेहै ॥ वेदगुरुकेवाक्योंविषे जोवि
श्वाससाश्रद्धांकहियेहै॥सत्यत्वमतिकानामविश्वास
है॥याकहनेसेंईश्वरगुरुभक्तिकावीसूचनकिया ॥काहे
तेंजाकेविषेजिसकीप्रीतीहोवे ताकेवचनोमेंतिसकी
श्रद्धाहोवेहे ॥साश्रद्धाजिज्ञासुकूं अवस्यसंपादनीय
है॥काहेते"श्रद्धाभक्तिध्यानयोगादवेहि"या श्रुतिनं
श्रद्धाभक्तिध्यानयोगतेंजान याप्रकारसेज्ञानप्राप्ति
निमित्तश्रद्धाकाविधानाकियाहै ॥औ"श्रद्धावान्लभ
तेज्ञानं"यास्मृतिसेंवीश्रद्धावानकूंहिज्ञानकीप्रातिक
हिहै ॥ यातेश्रद्धाअवस्यसंपादनीयहै ॥ अवसमाधा
नकालछनकहेहै ॥चित्तका शुद्धब्रह्मविषे वाश्रवणवि
षेस्थापनसमाधानकहियेहै ॥ आधाननामस्थापन

काहै ॥ सम्यक्आधानसमाधानहै॥तिसकरीयुक्तकूं श्रुतिविषेसमाहितकहाहै ॥ अबउपरतिकालक्षण कहेहै ॥ विषयोंतेपरांमुखवृत्तिउपरतिकहियेहै ॥वा विषयऔ ताकेसाधनस्त्रीयादिकविषे स्वानवांतकी न्याइअत्यंतगिलानिहोनीताकानामउपरतिहै ॥ अथवासाधनसहितकर्मकेसंन्यासकानामउपरतिहै ॥ अबतितिक्षाकालक्षणकहेहै ॥ श्रवणादिकानमित शीतउष्णऔक्षुधातृषादिकद्वंद्वोंकाचिंताविलापरहि तसहनस्वभावताकानामतितिक्षाहै ॥ येशमादिषट् मिलकेषट्संपत्तिकहियेहै ॥अबमुमुक्षुताकालछनक हेहै ॥परमानंदरूपब्रह्मकीप्राप्तिऔकारणसहितजग तअनर्थकीनिवृत्तिकानाममोक्षहै॥ताकीइच्छाकाना ममुमुक्षुताहै ॥सामुमुक्षुतामंदमध्यमऔतीव्रयभेद तेतीनप्रकारकीहोवेहै॥ तिनमेंतीव्रहोवेतोसद्यःफलि तहोवे ॥ औमंदमध्यमहोवेतोसद्यफलीतहोवेनहीं किंतुगुरुसेवादिकसेवृद्धिहोयकेताकेप्रसादतेफलीत होवेहै ॥ इनच्यारिसाधनकरकेयुक्तजोहोवे सोज्ञान काअधिकारीहै॥ तिनच्यारिसाधनकेसद्भावहुयासत् निष्ठाहोवेहै ॥ औतिनोंकेअभावसेंसन्निष्ठाहोवेनहीं ॥ एसेंअन्वयवितिरेकविचारकरकेसाधनचतुष्टयजि ज्ञासुकूंअवश्यसंपादनीयहै॥याच्यारिसाधनोंसंयुक्त जोविरक्तहैसोसर्वराज्यपदव्यादिहिरण्यगर्भके भोगे पर्यंतसर्व . . . स्वानवत् तुच्छ

नसर्वकापरित्यागकरके अर्थात्‌तत्वज्ञानसेंशुक्तिरज
तादिवत्‌बाधितकरकेपरमतत्वकूंपावेहै॥ननुयालोक
केविषययद्यपितुच्छहै ॥ ताकात्यागकरनाउचितहै॥
तथापिहिरण्यगर्भादिकऐश्वर्यउत्कृष्टहै ताकात्याग
अनुपपन्नहै ॥ याशंकाकासमाधानयहहै. जैसेंकर्म
रचितयहलोकक्षयहोवेहै ॥ तेसैंपरलोकवीकर्मरचि
तहोनेतेक्षयहोवेहै ॥ यहश्रुतिकालेखहै ॥ औब्रह्म
भुवनादिलोकसारेपुनरावर्त्तिवालेहै यहस्मृतिकाले
खहै ॥ यातेंयालोककीन्याइपरलोकवीनश्वरहै ॥
औ "सर्वमेवदुःखंविवेकिनः" यहपतंजलीसूत्रसेंविवे
किकूंसर्वभोगदुःखरूपहिकहाहै॥ औइंद्रलोकविषेम
हतदुःखतेसेंप्रजापतिलोकविषेमहत्तरदुखहै इत्या
दिशास्त्रोंकेवचनसें ॥ औहेकौंतेयइंद्रियसंबंधिजो
भोगहैसोदुःखोंकाकारणहै ॥ औआदिअंतवालेहैत्ति
नोविषेपंडितनहिरमतेयभगवतवचनतें॥औयोवांध
वोंकूंदग्धअन्नवत्‌दूरतेतेजेहै॥औसंगतेभुजंगकीन्याइ
त्रासमानेहै॥औभोगनकूंरोगसमजानेहै ॥औस्त्रीयां
कतृणवत्‌देखेहै मित्रामित्रविषेसमदयाकरेहैएसाजा
काचित्तहै ताकूंसर्वत्रमंगलहै ॥तुच्छत्वात्सर्वभावानां
इत्यादिशास्त्रोंकेवाक्यसेंदृष्टादृष्टभोगसारेदूषितहै ॥
तिनमेंबीजलांशरूपविषयमहानदुष्टहै ॥जसनेब्रह्मा
दिपिपिलीकादिकसारेविश्वकूंवसिकृतकियाहै ॥ सो
अन्यशास्त्रविषेवीकहाहै ॥" इंद्रियाभ्यामजय्याभ्यां

द्राभ्यामेवहृतंजगत् ॥ अहोह्युपस्थजिव्हाभ्यांब्रह्मा दिमशकावधि” इति ॥ यातेंब्रह्मलोकादिकनकेंभो गवीविरक्तकीदृष्टिसेंतुच्छहै ॥ यातेवातांशनवत्दोष बुद्धिसेअथवा मरुजलकीन्याइमिथ्यात्वबुद्धिसेंपरि त्यागकरेहै॥यद्यपिमरुजलप्रत्यक्षप्रतीतिहोवेहै॥तो वीताकूंमिथ्यानिश्चयकिये अनंतरतिसउदकनिमि त्तपुरुषउद्यमकरेनहीं ॥ तेसेप्रत्यक्षप्रतीयमानजगत ब्रह्मविषेवीअपरोक्षमिथ्यात्वनिश्चयकीये अनंतरवि द्वानकीपुरुषार्थबुद्धिसेंप्रवृत्तिहोवेनहीं सोअन्यशास्त्र विषेवीकहाहै॥यद्यपिविश्वप्रत्यक्षप्रतीतिहोवेहैतोवी अमलअव्यक्तरूपब्रह्मविषेरज्जुसर्पकीन्याइ मिथ्या है॥अवस्तुरूपहोनेंतेवस्तुतेंनहीहै॥याज्ञानतेविश्वका विलयहोवेहै इति॥ इसरीतिसेशुद्धबुद्धिविरक्तअधि कारीतत्वज्ञानसेंसर्वविधिप्रत्ययगोचरप्रपंचकूं अधि ष्ठानब्रह्मविषेबाधलक्षणपरित्यागकरके जिसतत्वकूं प्राप्तहोवेहै ॥ सोनित्यकहियेत्रिकालाबाध्यपरंब्रह्म मैंहूं ॥ इहांअधिकारीकूंतत्वकीप्राप्तिकहिसोअनारो पितवस्तुकानामतत्वहै ॥ एसाब्रह्महै॥ताकीप्राप्तिक हियेसोब्रह्ममैंहूंमेरेतेंब्रह्मअन्यनहि एसेसाक्षात्कार करेहै ॥यातेपरमानंदकीप्राप्तिऔअनर्थकीनिवृत्तिरू पपरमफलभागीहोवेहै॥ सो “ब्रह्मविदाप्नोतिपरम्‌त रतिशोकमात्मवित्” याश्रुतियोंनेप्रसिद्धकहाहै ॥या काअर्थयहहै ब्रह्मवेत्तापरंकाहियेनिरतिशयआनंद

रूपब्रह्मकूंप्राप्तहोवैहै ॥ आत्मवेत्ताशोकरूपसंसार कूंतरेहैइति ॥ कदाचित्कोइइहांएसीशंकाकरेजोस्व र्गादिकअप्राप्तहै ताकीप्राप्तिरूपफलतोसंभवेहै ॥ प रंतुसदाप्राप्तरूपब्रह्मकीप्राप्तिरूपफलकहना संभवेन हीं ॥ ताकायहसमाधानहै॥करकंकणकीन्याइवादल मकीन्याइप्राप्तिकीप्राप्तिवीसंभवेहै ॥ यातेंअसंभ वनहीं ॥औयाश्लोककेतुरीयापादसेंकहाजोपरंब्रह्म नित्यंतदेवाहमस्मितासेंआचार्यनेस्वानुभूतिदिखा यकेजिज्ञासुकूंमहावाक्यकाअखंडार्थदरसायाहै ॥ यहप्रक्रियाआगेस्पष्टकहगे ॥ १ ॥ ॥ ६९ ॥

: याग्रंथकेप्रथमश्लोकविषेअधिकारीकूंपरमतत्त्वकी प्राप्तिकहीसोगुरुउपदेशपूर्वकश्रवणमनन निदिध्या सनसेंहोवैहै ॥ अन्यथापरमतत्त्वकीप्राप्तिसंभवेनहीं यातेंद्वितीयश्लोकसेंगुरुभक्तिपूर्वकज्ञानकेसाधनकहे है ॥ दयालुमिति ॥

दयालुंगुरुंब्रह्मनिष्ठंप्रशांतं समा राध्यभक्त्याविचार्यस्वरूपं ॥ यदाप्नोतितत्त्वंनिदिध्यासवि द्वान् परंब्रह्मनित्यं० ॥ २ ॥

दयालुब्रह्मनिष्ठऔप्रशांतजोगुरुताकासम्यक्आ राधनकरकेऔस्वरूपका विचारकरकेऔनिदिध्यास

नकरकेविद्वानजिसब्रह्मकूंप्राप्तहोवेहै ॥ सोनित्यऔ
निरतिशयब्रह्ममेहूं ॥ इतिपदार्थः ॥ २ ॥ टीका
जिसगुरुकीजिज्ञासुशरणजायकेताकीसेवाकरे औ
जाकेप्रसादतेपरमतत्त्वकीप्राप्तिहोवे तिसगुरुपदका
अर्थऔताकेलक्षणकहेहैं ॥गृणातीतिगुरुः याव्युत्प
त्तिसेतत्त्वकाउपदेशकरे सोगुरुकहियेहै ॥ यद्वागुकार
अंधकारकावाचकहै ॥ औरुकारजोहैसोताकेनिरो
धकजोतेज ताकावाचकहै ॥ तिनगुकाररुकारकासा
मानाधिकरणसेऐक्यार्थपरब्रह्महै ॥ सोइगुरुशब्दसे
कहेजावेहै ॥अथवासर्वसेअधिकजोवस्तुहोवे ताका
नामगुरुहै ॥ ऐसाआत्माहै ताकीप्राप्तिकरनेहारा
बीगुरुकहेजावेहै ॥ अथवातुच्छरूपजोअज्ञानहै ता
कानामलघुहै॥तिसलघुताकीनिवृत्तिकरनेहाराहोवे
ताकानामगुरुहै ॥ ऐसाब्रह्मविद्याकाउपदेष्टाब्रह्मवि
द्‌महात्माहै ॥ सोइपरमगुरुहै ॥ अबताकेविशेषण
कहेहैं॥ सोगुरुकैसाहै [illegible]
[illegible]
दयालुकहियेहै ॥ एसेसर्वभूतानुकंपीब्रह्मविदुत्तमसं
तहैसोइसर्वथाजन्मादिसंसारदावतापकरिकेसंतप्त
जनोंकूंशांतकरेहै॥सोदयाबीकारणसेविनाकरेहै॥ए
साअहेतुकदयासिंधुगुरुपरमदुर्लभहै॥ औ॥वित्तापहा
रकतोगुरुबहुतहै॥सो॥शिवभगवाननेबीकहाहै ॥ हेदे
वी॥शिष्योंकेवित्तापहारकगुरुतोबहुतहै॥ परंतुशिष्य

केसंतापेंकाहर्तागुरुयालोकमेदुर्लभहैइति ॥औ नि
स्पृहगुरुसेंविन्यानिरपेक्षबोधवीहोवेनहीं सोशास्त्रों
विषेप्रसिद्धकहाहै ॥ यातेंनिस्पृहहितोपदेष्टाआत्मो
पमेयदयाकरनेहारेदैशिकसेंहीमुमुक्षुकूं वांछितफल
कीसिद्धिहोवेहै ॥ सोअन्यशास्त्रविषेवीकहाहै ॥ आ
त्मौपम्येनसर्वत्रदयांकुर्वंतिसाधवइति ॥ यहदयालु
पदकाअर्थकिया॥अवब्रह्मनिष्ठयापदकाअर्थकहेहै ॥
अपरिछिन्नवस्तुकानामब्रह्महै॥ ताकेविषेजाकीस्थि
तिहोवेसोब्रह्मनिष्ठकहियेहै ॥ अर्थयहकिप्रत्यगभि
न्नब्रह्मकाजाकूंदृढअनुभवहोवे ताकानामब्रह्मनिष्ठ
है॥यहब्रह्मनिष्ठत्वविशेषणश्रोत्रियत्वकावीउपलक्ष
णहै॥काहेतें श्रुतिविषेश्रोत्रियब्रह्मनिष्ठदोनोंलक्षण
वालागुरुकहाहै॥ ताकेशरणेमुमुक्षुजावे ॥ तहांश्रुति
"तद्विज्ञानार्थंसगुरुमेवाभिगच्छेत्समित्पाणिःश्रोत्रि
यं ब्रह्मनिष्ठमिति" ॥ याकाअर्थयहहै सोजिज्ञासुस्व
रूपसाक्षात्काररलक्षणविज्ञानकेअर्थहस्तविषेकछुवी
भेटलेकेश्रोत्रीयऔब्रह्मनिष्ठगुरुकेसमीपजावेइति॥
प्रमाणकुशलकूंश्रोत्रियकहेहै॥प्रमाणनामवेदकाहै ॥
ताकेअर्थविषेनिष्णातहोवेताकानामश्रोत्रियहै ॥ य
द्यपिप्रत्यक्षानुमानादिकनकूंवीप्रमाणकहेहै ॥ तथा
पिसोसारेप्रमाणाभासहै॥काहेतेसोसारेप्रतिभासमा
त्रज्ञातसत्तावाले अनात्मपदार्थगोचरप्रमाके करण
है ॥ औअज्ञातवस्तुब्रह्मगोचरप्रमाताकेकरणनहीं॥

अज्ञातअर्थज्ञापकताप्रमाणकालक्षण वेदविषेहीसं भवेहै ॥ यातेंपरमप्रमाणवेदहीहै तिसवेदकेअर्थकूं भलिप्रकारसेंजाननेवालाश्रोत्रियकहियेहै ॥ इस प्रकारसेंअधितवेदपूर्वोक्तलक्षणब्रह्मनिष्ठहींश्रुतिनेंगु रुकहाहै ॥ औअधितवेदवीहोवे परंतुजाकेब्रह्मनिष्ठा होवेनहींसोगुरुनहीं ॥ काहेतेकेवलश्रोत्रियहैतिसतें अपनातापवीदूरीहोवेनहींतोअन्यके संतापकूंकेसेंह रेंगे ॥ औश्रोत्रियकूंअन्यजीवनतेंवीअधिकताप होवेहै ॥ यहवार्ताछांदोग्यउपनिषदमेंनारदनेंस्वा नुभूतप्रसिद्धकहीहै ॥ यातेकेवलश्रोत्रियआचार्य नहीं ॥ औजाकेब्रह्मनिष्ठातोहोवेपरंतुवेदकाअध्य यनहिंकियासोवीआचार्यनहीं ॥ काहेते शिष्यकेचि त्तमेंप्रतीतजोहोवेहै नानाभेदभ्रमसोसारेपरिहारकर नेविषेसमर्थनहीं ॥ भेदपंचप्रकारकेहै ॥ औभ्रमवी पंचप्रकारकेहै ॥ ताकाउपपादनऔनिराकरणआगे करेंगे ॥ यातेकेवलब्रह्मनिष्ठवीगुरुनहीं ॥ यद्यपि सोआपतोमुक्तहै ॥ औउत्तमसंस्कारवालेजिज्ञासुकूं वीतत्त्वकाउपदेशवीकरेहै ॥ तथापिसर्वजिज्ञासुकेसं शयपरिहारपूर्वक बोधकरनेकूंयोग्यनहीं॥ यातेंसोदे शिकनहिंकह्याजावे ॥ किंतु श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठदोनो लक्षणयुक्तजोहोवेसोइगुरुहै ॥ तासेंमुमुक्षुकूंवांछि तपदकीप्राप्तिहोवेहै ॥ जेसेनदीकेपारजानेकूंइच्छ तापुरुष

पेअंध अथवापंगुसमर्थहोवेनहीं ॥ किंतुचक्षुपादउभ
यकरणसंयुक्तहीनदीतेपारलंघायके वांछितस्थानदि
खावनेमेसमर्थहोवेहै ॥ तैसें श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठगुरुसं
सारनदीतेंपारलंघायके परब्रह्मरूपनिजस्थानादिखा
वेहै॥जेसेंकेवलश्रोत्रियकूंतापहोवेहै ॥ तेसेंब्रह्मनिष्ठा
संयुक्तकूंतापहोवेनहीं याअर्थकेजनावनेनिमित्तआ
चार्यनेप्रशांतविशेपणकहाहै ॥ प्रशांतकहियेक्षोभ
तेंरहितब्रह्मनिष्ठहोवेहै ॥ तिनक्षोभकानिमित्तअने
कहै ॥ अध्यात्मादिक वा विद्याअभ्यासविस्मरणा
दिक वा रजतमगुणसंबंधि वा कामक्रोधादिकजन्य
वाकर्त्तव्याकर्त्तव्यजन्य एसेअनेकनिमित्तसंताप ज्ञा
नहीनकूंहोवेहै ॥ सोब्रह्मनिष्ठकूंहोवेनहीं यातेंप्रशांत
कहाहै॥अध्यात्मादिकतीनतापप्रसिद्धहै॥औअभ्या
सविस्मरणमानभंगगर्वयेचारिविद्याध्ययनविपेताप
है॥सोअध्यात्मादिकतीनतथाअभ्यासविस्मरणादि
चारीमिलकेसप्ततापनारदनेंप्रसिद्धकहाहै ॥ रजतम
औतदजनितकामादितापलोकशास्त्रमेंप्रसिद्धहै॥ति
नकामादिकक्षोभतेंरहितहैसोतुर्लभहै॥सोगीताकेपंच
मेंअध्यायमेंप्रसिद्धकहाहै ॥ औकर्त्तव्याकर्त्तव्यकाता
पअज्ञोकूंतपावेहै औतज्ञकूंतपावेनहीं सो"नेनंकृता
कृतेतपतः"याश्रुतिमेंप्रसिद्धकहाहै ॥ यहप्रशांतपद-
सेंब्रह्मनिष्ठकूं जीवनमुक्तिकीवृत्तिजन्यविशेप सुखा
नुभूतिकावीसूचनकिया ॥ काहेते शांतिसुखकीअ

भिव्यंजकहै ॥ सोशास्त्रोंमेंप्रसिद्धकहाहै ॥ औशांति
तेविन्याअशांतपुरुषकूंसुखहोवेनहीं ॥सोभगवानने
द्वितीयाध्यायमेंप्रसिद्धकहाहै ॥ औप्रशांतपुरुषकूं
सर्वदिशाविषेसुखहै ॥ सोभागवतकेएकादशस्कंधमे
प्रसिद्धकहाहै ॥ इसप्रकारसे उक्तकहेदयालुब्रह्मनि
ष्ठप्रशांतविशेषणविशिष्टजोगुरु सोज्ञानदानकादा
ताहै॥एसेंऔरबीगुरुकेविशेषणअनेकहै॥विष्णुचेता
प्रशांतआत्माविमन्युऔसर्वनरोंका सुहृदऔलोको
विषेश्रेष्ठहै सोगुरुकहियतहैइति ॥ औसंस्कृतअथ
वाप्राकृतभाषाकरके वागद्यपद्यअक्षरोंकरकेवाशिष्य
कदिशभाषाकरके जोबोधदेके कृतार्थकरे सोगु
रुकहियतहैइति॥इसतेआदिलेकेअनेकविशेषणगुरु
केग्रंथांतरोंविषेकहाहै ॥ सोसारेब्रह्मनिष्ठगुरुविषेस्व
भावसिद्धहै॥एसाअनेकसद्गुणसंयुक्तजोगुरुहै ॥ताके
शरणजायकेजिज्ञासु तिसगुरुकाभक्तिसंयुक्तआराध
नकरे ॥ भक्तिनामइहाप्रेमविशेषकाहै॥औआराधन
नाम सेवनकाहै ॥जोपुरुषप्रेमसहितगुरुकीसेवाकरे
है॥ताकूंदृष्टअदृष्टउभयफलकीप्राप्तिहोवेहै ॥ गुरुसे
वासेंधर्मकीउत्पत्तिहोनीसोअदृष्टफलहै ॥ औज्ञान
कीउत्पत्तिहोनीसोदृष्टफलहै॥ औगुरुभक्तिहीनकूंस
द्विद्याकालाभहोवेनहीं ॥ किंतुगुरुभक्तकूंहिहोवेहै ॥
सोशास्त्रोंमेंप्रसिद्धकहाहै ॥ यातें विद्याप्राप्तिकाअंत
रंगसाधनईश्वरगुरुकीभक्तिकहिहै ॥ सो " यस्यदेवे

पराभक्तिर्यथादेवेतथागुरौ" याश्रुतिनेवीकहाहै कि
जिसपुरुषकीदेवविषे पराभक्तिहै ॥ औजेसीदेव
विषेहै ॥ तेसीभक्तिगुरुविषेहै तिसविवेकीकेताईवे
दप्रतिपादितअर्थोंकाप्रकाश होवेहैइति ॥ याश्रुति
काअभिप्रायविशेषगुरुभक्तिमहात्म्यशंकरानंदस्वा
मिनेआत्मपुराणविषेविस्तरकहाहै ॥ यातें मुमुक्षु
निर्मायनिष्कामबुद्धिसेप्रीतिपूर्वकशरीरवाणिमनध
नादिकसमर्पिकेसद्गुरुकीसेवाकरे ॥ शरीरसेपाद
संवाहनअर्चनआज्ञापालनादिसेवनकरे ॥ वाणिसे
स्तवनादिककरै ॥ औमनविषेगुरुमूर्त्तिकाध्यानक
रे ॥ औधनशब्दसेप्रियपदार्थगुरुआगेसमर्पनकरे ॥
औशिष्यरीतिअनुसारसर्वदा कालयथाशास्त्रविधी
अधिकारपालनकरे ॥ औगुरुविषेपरमेश्वरबुद्धिकरे
मनुष्यभावनाकदाचितकरेनहीं ॥ काहेतें गुरुविषे
नरबुद्धिकियेसेमहानअपराधहोवेहै ॥ सो "गुरुं
योमानवैरन्यैःसमंपश्यतिमोहतः ॥ नतस्यास्मिन्‌भ
वेल्लोकेसुखंनैवपरत्रच ॥ सयातिनरकान्‌इत्यादि
शास्त्रवचनोंसेप्रसिद्धकहाहै ॥ यातेंगुरुविषेमनु
ष्यबुद्धिजिज्ञासुकदाचित्‌नहींकरे ॥ किंतुभग
वत्‌बुद्धिहींकरे ॥ सोस्मृतियांविषेवीकहाहै ॥
"आचार्यमांविजानीयादिति" सर्वदेवयाचार्यमू
र्तिस्थइति॥याकाअर्थयहहैआचार्य मेरेकूंजानेयह
भगवत्‌वचनहै॥ औपरमात्माहीशिष्योंकेसदोपदेश

केलियेआचार्यमूर्त्तिसेंस्थितहैंइति॥इसरीतिसेंसद्भा
वनासे शिष्यगुरुकीसेवाकरकेऔनमनविनयसेंप्रश्न
करके ताकेउपदेशकूंपायके कृतार्थहोवेहै॥ सोभगवा
ननेंवी "तद्विद्धिप्रणिपातेन" याश्लोकसेंकहाहै॥ हेअ
र्जुन प्राणिपातकरके परिप्रश्नकरके औसेवाकरके ति
सज्ञानकूंजान॥तेरेतांइतत्त्वदर्शीज्ञानिज्ञानकाउपदे
शकरेंगेइति॥याकहनेसेंयहसिद्धभयाकिगुरुसेंविना
स्वबुद्धिबलसेज्ञानहोवेनहीं ॥ किंतुआचार्याधीनहीं
ज्ञानहै॥ननुकर्मउपासनाकरकेशुद्धभयाहै चित्तजिस
काएसाजिज्ञासुआपहीवाक्यार्थविचारीकेही ब्रह्म
कूंजानेगा गुरुकरकेक्याहै॥ औताकेसेवनकरकेक्या
है ॥ यांशंकाकासमाधानयहहै ॥ गुरुसेंविनाज्ञानहो
वेनहीं ॥ काहेते आचार्यवान्पुरुषोवेदयाश्रुतिनेगु
रुउपसदनवानकूंहीज्ञानकीप्राप्तिकहिहै॥यातेंआचा
र्यलभ्यहीब्रह्मविद्याहै ॥ स्वतःज्ञानहोवेनहीऔगु
रूतेविनावेदादिकका अध्ययनकरनासोसागरकेजल
वतहै ॥ द्वैतरूपछारकाहीअनुभवहोवेहै ॥ औगुरुमु
खअध्ययनकियेमेघसेंमधुरजलवत् अद्वैतामृतकाहे
तुहोवेहै ॥ औगुरुसेविनाअन्यसाधन वैद्यसेविना
धातुभक्षणादिवत्खेदकेहेतुहोवेहै॥ यातेंमोक्षमार्गमे
गुरुकृपाहीमुख्यहै ॥ ताकेआगेअन्यसाधनगंगाका
ठेकूपखननकीन्याइहै ॥ औगुरुभक्तिसेविनाक
दाचितज्ञानहोवेनहीं ॥ औजोकदाचितवाक्पा

टवताहोवेगीतोवीशितासुखताकूंहोवेनहीं ॥ यातें यावतआयुहै तावतसर्वदाकालगुरुउपासनीयहै ॥ सो "यावदायुस्त्रयोवंद्या" याश्लोकसेंअन्यशास्त्रविषे वीकहाहै ॥ यावतआयुहैतावतवेदांतगुरुऔईश्वर येतीनोवंद्यहै ॥ औतत्त्वज्ञानकीसिद्धिवास्तेऔ ताकेपीछेकृतघ्नतादोषनिवृत्तिकेनिमित्तइति ॥ औ रामकृष्णादिकोंनेवी लोकसंग्रहार्थगुरुकासेवनकि याहै ॥ तोअन्यकीकहाकथाहै ॥ औगुरुकाजोउप कारहै ॥ ताकीप्रतिकृतिकरनेविषेकोइवीसमर्थनहीं यातेंसद्गुरुसदासेवनीयहै ॥ सोजिज्ञासुअपनेश्रेय वास्तेसेवाकरे ॥ औआचार्यकूंसेवनादिककीकछुवी अपेक्षानहीं ॥ काहेतेंसोसर्वकासुहृदहै ॥ औसदा तृप्तकामहै ॥ केवलब्रह्मविद्याकादानहींदेवेहै ॥ यातें सोगुरूसाक्षात्‌शिवरूपहै सोअन्यशास्त्रविषेवीकहा है ॥ जोपरमअद्वैतवस्तुकाविज्ञानकृपाकरकेशिष्यकं ताइदानदेवहैसोगुरुसाक्षात्‌शिवरूपहै ॥औसाक्षात् गुरुवीसोइहै ॥ तिसगुरुकेउपकारकोंविद्वान्‌जानेहै॥ औविषयासक्तमूढनहींजानते ॥ जिसनेंगुरुप्रभावकूं जान्याहै ॥ सोताकेउपकारकास्मरनकरकेयाप्रकार सेंस्तवनकरेहैं॥ भोस्वामीन्‌स्वाराज्यसाम्राज्ययाय हविभूतिहै ॥ सातुमारीकृपाकेमहिमाप्रसादतेंमेंप्रा प्तभयाहूं ॥ एसाजोआपमहात्मासद्गुरुतिसकेताइ [illegible]स्कारहै ॥ सो "स्वराज्यसाम्राज्यवि

भूतिरेषाभवत्कृपायामहिमप्रसादात् इत्यादिकशा-
स्त्रवाक्योंकरकेप्रसिद्धकहाहै॥एसाउत्तमब्रह्मविद्गुरु
कूंछोडिकेजोसंप्रदायप्राप्तद्वैतवादीगुरुकासंगकरैहै ॥
सोअपूर्वप्रगटमधुरजलकूंत्यागिके पितामहराचितकू
पकेक्षारजलकेपानकरनेकीन्याईअसदाग्रहहै ॥ या
तेंपूर्वकहेगुरुतेंहीअद्वयब्रह्मकाबोधहोवेहै ॥ ननुसोगु
रुअतत्त्ववित्हैवातत्त्ववित्है ॥जोअतत्त्ववित्कहोगे
तोतासैपरमार्थतत्त्वकाउपदेशसंभवेनहीं काहेतेसो
आपबीअज्ञहै॥औजोतत्त्ववित्कहोगेतोताकूंतत्त्वबो
धकेउदयहुयाअज्ञानकेनाशतेंताकेकार्यसूक्ष्मस्थूल
शरीरकेसंबंधकाअसंभवहै ॥ यातेतासेवीतत्त्वउपदे
शसंभवेनहीं ॥ अन्यशंका ॥ सोतत्त्ववित्द्वैतदर्शी
है ॥ वाअद्वैतदर्शीहै ॥ जोद्वैतदर्शीकहोगेतोतासेंअ
द्वैतउपदेशबनेनहीं ॥ औअद्वैतदर्शीकहोतोसोस्वाप
रभेददृष्टिसेरहितहै ताकूंशिष्योंकूंउपदेशकरनाअसं
भवहै ॥ अन्यशंका ॥ अद्वैतदर्शीगुरुशिष्योंकेता
ईसगुनब्रह्मकाउपदेशकरैहै ॥ अथवानिर्गुनब्रह्मका
बोधकरैहै ॥ जोसगुनब्रह्मकाकहोगेतोसगुनकेसाथि
जीवकेअभेदकेअसंभवतेपुरुषार्थकी सिद्धिबनेनहीं
॥ औनिर्गुनकाकहोगेतोसोवाणिकाविषयनहींकिंतु
अनिर्देश्यहै ताकाउपदेशकरनेविषेकोइबीसमर्थहै
नहीं ॥ यातेंदोनोप्रकारसेंगुरुतेंजिज्ञासुकूंवांछित
कीसिद्धिबनेनहीं ॥ कम

करेहै ॥ पूर्वकहाजोउपदेष्टाअतत्त्ववित्है ॥ अथवात
त्त्ववित्है सोअतत्त्वज्ञश्रुतिस्मृतिरूपनेत्रतेंहीनहोने
अंधकेसमानहै तासेंतत्त्वकायथार्थउपदेशहोवेनहीं॥
सोअन्यशास्त्रविषेवी कहाहै ॥ विद्वानोंके श्रुतिस्मृ
तिउभयनेत्रहै ॥ तिनमेंएकतेंरहितहोवेसोकाणा
है ॥ औदोनोतेंरहित अंधहै इति ॥ तिनश्रुतिस्मृ
तिदोनोंकाविषयएकअद्वयब्रह्महै ॥ सो "वेदाब्रह्मा
त्मविषयाः" यावाक्यसेंभागवतमेंप्रसिद्धकहाहै॥ जै
सें दोनोनेत्रका एकसूर्यविषयहोवेहै ॥ तैसेंश्रुतिस्मृ
तिदोनोंकाविषयएकब्रह्महै इति ॥ इहांसूर्यकाउदा
हरणकाअभिप्राययहहैजैसेंनेत्रकांप्रकाशकवीसूर्यहै
औविषयवीहोवेहै।तैसेंश्रुतिस्मृतिवीब्रह्मकरकेप्रका
शितहै ॥ औब्रह्मकूंहिविषयकरेहै।ताविषयआवरणभं
गतामात्रविषयता हैयहवार्त्ताआगेकहेंगे॥तिसअद्वै
तब्रह्मविषयकश्रुतिस्मृतिकेसिद्धांतकाअनभिज्ञजो
अतत्त्वज्ञहै ॥ सोतत्त्वउपदेशकरनेविषेसमर्थनहींहै॥
किंतुश्रुतिस्मृतिवित्ब्रह्मनिष्ठहै सोइउपदेशकरनेवि
षे समर्थहै ॥ औपूर्वकहाजोज्ञानिकूंअज्ञाननिवृत्ति
हुवेशरीरकेसंबंधकाअसंभवहै, ॥सोशंकाबनेनहीका
हेतेंकारणकेनाशहुयावीकार्ययत्किंचित्कालरहेहै ॥
जैसेंरज्जुकेज्ञानसेंसर्पकीनिवृत्तिहुवेवीकंपादिकरहेहै
॥ तैसेंअज्ञानकेनाशहुवेवीपरिशेषप्रारब्धकर्मसेंश
रीरकिस्थितिसंभवेहै ॥ यातेंआचार्यसंप्रदायका

उच्छेदहोवेनहींसंप्रदायक्रमानुसारसो ज्ञानिशिष्यों प्रतिउपदेशकरेहै ॥ औडुसरीशंकाकायहसमाधा नहै ॥ द्वैतदर्शीसेंअद्वैतकाबोधसंभवेनहीं ॥ काहे तेंरोगीवैद्यकीन्याइआपवीद्वैतकूंहिदेखेहै सोअन्यकूं अद्वैतवस्तुकेसेदरसावेगा ॥ जेसेंकसिकेनेत्रविषेए सारोगथाकिएकपुरुषकूंदोदेखे सोरोगनिवृत्तिअर्थवै द्यकेपासगयातहांतिसवैद्यके नेत्रविषेएसारोगथाए कपुरुषविषे तीनदेखेसोरोगीनेवैद्यकारोगअपनेसेअ धिकजन्यातंबातिसवैद्यकात्यागकरके अन्यअरोगीवै द्यकेपासजायकेरोगकूंनिवृत्तकिया तेसेंरोगीवैद्यकी न्याइद्वैतदर्शीगुरुकीउपेक्षाकरके अद्वैतदर्शीज्ञानीगु रुहिउपासनीयहै औपूर्वकहाजोअद्वैतदर्शीद्वैतनहि देखतातासेंबीउपदेशसंभवेनहीं॥याशंकाकायहसमा धानहै ॥ जेसेंकिसिधनीकूंज्वररोगनिमितसें संन्निपा तहुवातबअपनागुप्तधनवी कहिदियासो आपनहि जानताजोमेंकिसिकेताहिगुप्तधनदरसायदेताहुं॥ ते सेंब्रह्मानंदविषेनिमग्नब्रह्मविद्उत्तममहात्मा स्वभा विकतत्त्वकाउच्चारकरेहै तासेउत्तमजिज्ञासुकृतार्थहो वेहैजेसेंसिद्धोंतेंआत्मगीतसुनके जनकराजाकृतार्थ भयायहगाथावासिष्ठमेंप्रसिद्धहै ॥ अथवाअंतरजिस कूंअद्वैतनिष्ठाहै ताकूंशास्त्रशिक्षाशिष्यादिप्रतिभास मात्रद्वैतदृष्टिसेंपरमार्थविषेकछुवीहानिहोवे नहीं ॥ सोग्रंथांतरविषेवीकहाहै ॥ कदाचिद्व्यवहारे[illegible]

पिपश्यति ॥ बोधात्मन्यतिरेकेणनपश्यतिचिद
न्वयादिति ॥ याकाअर्थयहहै ॥ कदाचित्व्यवहा
रविषेविद्वान्यद्यपिद्वैतकूंदेखताहै ॥ तथापिज्ञान
स्वरूपआत्मासेंव्यतिरेकनहीदेखताकाहेतेंसर्वचिद
अन्वयहोनेतेंइति ॥ औतीसरीजोशंकाकरीथीअ
द्वैतदर्शीज्ञानीसेंवीतत्वकाउपदेशकरनाअशक्यहै ॥
ब्रह्मअनिर्देश्यहोनेतेवाणिकाविषयनहीं ॥ ताकास
माधानयहहै ॥ यद्यपिसाक्षात्वाणिकाविषयब्रह्म
नहींहै ॥ ताकावाणिसेउपदेशकरनाअशक्यहै ॥
तथापि अध्यारोपापवादाभ्यांनिष्प्रपंचंप्रपंचतेइस
न्यायकाआश्रयकरकेब्रह्मवित्उपदेशकरनेकूंशक्य
होवेहै वस्तुविषेअवस्तुकाकथनअध्यारोपकहियेहै॥
औअवस्तुकावस्तुमात्रस्वरूपदर्शनअपवादकहियेहै
॥जैसेरज्जुविषेसर्पकाकल्पनहोवेहैसोअध्यारोपहै॥
औसर्पकूंरज्जुस्वरूपदेखनासो अपवादहै॥ तैसेंब्र
ह्मविषेमायासेआकाशतासेंवायुतासें अग्नितासेआ
पतासेपृथ्वी॥ औपंचभूततेंइंद्रियप्राणअंतःकरणरू
पभौतिकऔस्थूलब्रह्मांडइत्यादिइच्छासेआदिलेके
प्रवेशपर्यंतईश्वरसृष्टिअथवाजाग्रतसें आदिलेकेमो
क्षपर्यंतजोजीवसृष्टिसोसाराअध्यारोपहै॥औनेतिने
तिवाक्यनसेसर्वमायाऔमायाकेकार्यकाअधिष्ठान
ब्रह्मविषेनिषेधकरकेनिषेधावधिदर्शनसोअपवादहै॥
याप्रकारसेअध्यारोपअपवादकरकेनिष्प्रपंचका प्रपं

चनकरेहै ॥ यहआचार्योंनेमुमुक्षुजनोंकेबोधनिमि
तउपदेशक्रमकल्पाहै ॥ यातेज्ञानीगुरुसेतत्वकाबो
धजिज्ञासुकूंहोइशकेहै ॥ ननुब्रह्मतत्वअतिगोप्यहै
सोजिसिकिसिआगेकहनेयोग्यनहीं सो विद्वान्जि
ज्ञासुकेताहिकैसेंकहेगेयाशंकाकिहुयाकेहहै ॥ यद्यपि
ब्रह्मकाज्ञानअतिगुह्यहैसोजहांतहांकहनेलायकनहीं
॥औं"नापुत्रायाशिष्यायवैपुनःयाश्रुतिनेवी"अपुत्र
केताहिऔ अशिष्यकेताहितत्वोपदेशकानिवारन
कियाहै ॥ 'तथापिसंनिग्धशिष्यायशमान्वितायगो
प्यमपिब्रूयात्याप्रकारसेंस्नेहवालेशिष्यकेताइऔश
मअन्वितकेताइविद्वान्गोप्यतत्ववीकहेंयहविधान
कियाहै ॥ यातेंविद्वान्नेजिज्ञासुकेताहिउपदेशक
रनाउचितहै ॥ तहांगुरुभक्तशिष्यनेसमित्पाणिहु
इब्रह्मनिष्ठगुरुके शरणजायकेपादपद्मविषेशिरनवा
यकेविनयसहितअभिमतएसेप्रश्नकरना ॥ भोभग
वन्मेंकोनहूंऔयहसंसारबंधप्रीतिहोवेहैताकाकारन
कोनहै ॥ औसंसारबंधकीनिवृत्तिकिसउपायसेंहोवे
है ॥ एसाशिष्यकाप्रश्नोकुंसुनिकेप्रथमप्रश्नकाउत्त
रगुरुकहेहै ॥ हेप्रियदर्शनयोतीनदेहोंकाद्रष्टा औ अव
स्यातीनकासाक्षीऔपंचकोशातीतऔ सताचिदआ
नंदरूपप्रत्यगात्माब्रह्माभिन्नहै सोइतेरास्वरूपहै ॥
यहकहनेसेदेहादिभिन्नब्रह्माभिन्नतत्वकागुरुनेउपदे
शकिया ॥ सोसर्ववेदांतकासारहै ॥ याकाविचा

रकियेसेंब्रह्मात्माकाएकत्व निश्चयलक्षणज्ञानउदय
होयके सद्यहृदयग्रंथिकाभेदनहोवेहै ॥ सोश्रुतिवि
षेवीकहाहै ॥ भिद्यतेहृदयग्रंथिःछिद्यंतेसर्वसंशयाः
॥ क्षीयंतेचास्यकर्माणितस्मिन्दृष्टेपरावरेइति॥ या
काअर्थयहहै ॥परब्रह्मकेसाक्षात्कारहुवेहृदयग्रंथिका
भेदनहोवेहैऔसर्वसंशयोकाछेदनहोवहै॥औइसावि
द्वानकेकर्मसर्वक्षीणहोवेहैइति ॥ तीनशरीरकोनहै ॥
स्थूलसूक्ष्मऔकारणयेतीनशरीरहै ॥ स्थूलशरीरकि
सकूंकहेहै ॥ पंचीकृतपंचमहाभूतनकाकार्यऔ क
र्मरचितऔ भोगनकाअयतनइंद्रियगोचरसोस्थूल
शरीरकहियेहै ॥ जिनभूतनकापंचीकरणकियाहोवे
सोपंचीकृतभूतकहियेहै ॥ पंचमहाभूतकोनहै ॥
आकाशवायुतेजजलऔपृथ्वीयेपंचमहाभूतहै ॥ ति
नोकापंचीकरणहोवेहै ॥ प्रत्येकभूतनकेपंचपंचभा
गकरकेपरस्परमेलनकानामपंचीकरणहै ॥ सोपंची
करणयाप्रकारसेंहोवेहै।एकएकभूतकेदोदोभागसमा
नहोयकेएकएकभागअपनाछोडकेदूसरेभागका फेर
च्यारिच्यारीभागहोयकेअपनेसें भिन्नच्यारिभूतन
केसाथिमेलनसोपंचीकरणकहावेहैं ॥ याप्रकारसेपं
चीकरणकियेभूतनसेंस्थूलशरीरहोवेहै॥सोस्थूलवपु
पंचीसतत्वोकाहै ॥ सोपंचीसतत्वकोनहै, पंचपं
चतत्वपांचोभूतनकेमिलकेपंचीसतत्वहोवेहै ॥ तिन
मेआकाशकेपंचतत्वयहहै ॥ श्लोकः ॥ कामःक्रोध

स्तथालोभोमोहमात्सर्यमेवच ॥ वियत्पंचविधंज्ञे यंदष्टव्यंदेहमध्यतः ॥ याग्रथांतरवाक्यसे कामक्रोध लोभमोहमात्सर्ययेपंचतत्वदेहविषे आकाशके जा नणेसोप्रत्यक्षदेखियतहै ॥ मात्सर्यकेस्थानकहाभ यवीकहाहै ॥ यद्यपि कामादिकअंतःकरणकेपरि णामहै सो स्थूलदेहविषेअसंभवहै तथापिस्थूलदे हमेंताकाआवेशहोनेतेस्थूलमेकहाहै ॥ अथवा कटिउदरहृदयकंठशिरगत जो आकाशहै सो स्था नभेदसेपंचविधआकाशग्रंथांतरमेंकहाहै ॥ औच लनवलनधावनप्रसारनसंकोचनये पंचतत्ववायुके हे ॥ औ क्षुधातृषाआलस्यनिद्राकांतियेपंच त त्वतेजकेहै ॥ शुक्रशोणितलालमूत्रस्वेदये पंच तत्वजलकेहे ॥ औअस्थिमांसत्वक्नाडीरोमयेपंच तत्वपृथ्वीकेहै॥येपंचभूतनकेपंचीसतत्वहै ॥ तिनमे लोभआकाशकामुख्यभागशून्यउदरहोनेते ॥ काम वायुकावेगवालाहोनेते ॥क्रोधअग्निकादाहकहोनेतें॥ मोहजलकातार्संद्रवितचित्तहोनेते ॥भयपृथ्वीकापा र्थिवपदार्थसेंहिभयहोवेहै ॥ किंवाशिरावकाशमु ख्यआकाशकाअनाहतशब्दकास्थानहोनेतें॥ कंठा वकाशवायुकामुखनाशिकाविषेसंचरणहोनेतें ॥ हृ दयावकाशअग्निकासदाउष्णास्थितिहोनेतें ॥ उदरा वकाशजलकाजलाशयहोनेतें ॥ कटिअवकाशपृ थ्वीकागंधस्थानहोनेतें ॥ औआपु नि॰

भागसबलहोनेतें ॥ प्रसारणआकाशकाविस्तिरण होनेतें॥वलनतेजकाउत्कृष्टव्यापारवालाहोनेतें॥चलनजलकाशिथिलहोनेतें ॥ संकोचनपृथ्वीकाजाड्यस्वभावहोनेतें ॥ औतेजविषेक्षुधामुख्यभागपाचनस्वभावतें ॥ तृषावायुकाशोषणकंठादिकका होनेतें ॥ आलस्यपृथ्वीकाजाड्यत्वहोनेतें ॥ निद्राआकाशकाशून्यस्वभावहोनेतें॥ कांतिजलका शीतोष्णसंबंधतेकृष्णलोहितत्वहोनेतें ॥ औजल विषेशुक्रमुख्यभागहै गर्भोत्पत्तिकेहेतुवांशुभ्रवर्णहोनेतें ॥ लालआकाशकाउर्ध्वगमनतें ॥ मूत्रतेजकाउष्णहोनेतें॥ स्वेदवायुकाश्रमप्रसंगत्वहोनेतें ॥ औपृथ्वीविषेअस्थिमुख्यभागकाठिन्यहोनेतें ॥ मांसजलकासद्रवत्वहोनेतें ॥ त्वक्वायुकास्पर्शधर्मत्व होनेतें ॥ नाडीतेजकाज्वरविषेपरिक्षाहोनेतें ॥ रोमआकाशकाछेदनविषेदुःखकेअभावतें ॥ यारीतिसेंपंचीसतत्त्वोंकामेलनहोवेहै॥ यातेंइसस्थूलदेहविविषेजोकाठिन्यत्वहै सापृथिवीहैद्रवत्वआपहै उष्णत्वतेजहै ॥ संचरणत्ववायुहै ॥ औजोसुषिरत्वहै सोआकाशहै यहकहाजोपंचीकृतभूतनकाकार्यस्थूलशरीरसोतूंनहीं॥काहेतेंयहजडहैदृश्यहैविकारीहै॥ यातेंअनात्मरूपहै ॥ तूंचैतनदृष्टानिर्विकाररूपआत्माहै ॥ यातेंस्थूलदेहसेभिन्नहै॥औयहदेहसप्तधातुमयहैऔषट्भावविकारकरकेयुक्तहै ॥औदशदोषकर

केदुष्टहै औअतिसयकरकेनिंद्यहै॥यातेताकाकदाचि
तुअभिमानकरनायोग्यनही ॥ सप्तधातुकोन ? रेत
रक्तमांसमज्जामेदअस्थित्वक्येसप्तधातुहैं ॥ षट्वि
कारकोन ? जायते अस्तिवर्धतेविपरिणमतेअपक्षी
यते विनश्यतियेषट् ॥ तिनमेंजायतेनामजन्मता
है अस्तिनामप्रगटताकाहै वर्द्धतेनामवृद्धिकूंपावता
है विपरिणमतेनामपरिणामकूंपावताहैं ॥ अपक्षी
यतेनामक्षीणताकूंपावेहै ॥ विनश्यतिनामनाशकू
पावेहै वृद्धिसेंबाल्यअवस्था ॥ परिणामसेंयौवनअ
वस्था॥अपक्षयसेंवृद्धावस्था ॥ विनाशसेंमरणजान
ो॥येषट्भावविकारयास्फोक्तस्थूलदेहकेहै ॥आत्मा
केनहीं काहेते "नजायतेम्रियतेवाविपश्चित्"यामंत्र
तेवाइसमंत्रपठितगीतावाक्यतेआत्माषट्विकारसे
रहितकहाहैं ॥ औघटकीउत्पत्तिनाशादिकसेघटाका
शकी उत्पत्तिवानाशहोवे नहीं यायुक्तिसेआत्माज
न्मादिविकारसेरहितहै ॥ दशदोषकोनहै? अशुद्धअ
शौच दुर्गंध अस्थिर स्थूल खंड दग्ध शिथिल ना
नारोगग्रस्तअध्रुवआमिषयादशदोषयुक्तहै ॥ सो
अन्यशास्त्रविषेप्रसिद्धकहाहै ॥ यातेअनेकदुर्गुण
काअलयस्थूलहैसोतूंनहीं॥भोस्वामिन्केचित्देहकूं
हेआत्मामानेहै॥ औताकेविषेयुक्तिप्रमाणवीकहेहैं
।तिनोकाक्याअभिप्रायहै ? हेशिष्यदेहकूंजोआत्मा
मानेहै ॥ सोमहामूढअज्ञानीहै॥काहेतेआत्मासदा

ज्ञानमयऔपुण्यरूपहै ॥ औदेहमांसमयअशुचहैति
नदोनोंकूंएककरिकेदेखेहैतिसतेंपरेअन्यअज्ञानक्या
है॥यहीपरमअज्ञानहै॥ ऐसेंग्रथांतरमेंप्रसिद्धकहाहै॥
औ विरोचनमतानुसारीऔमध्यमिकचारवाकलो
कायतपामरदेहकूंआत्मामानेहै ॥ औस्वकपोल्क
ल्पितयुक्तियांकहेहै ॥ तथापिसोसारेवेदविमुखऔ
विवेकतेंशून्यहै ॥ काहेतेश्रुतिस्मृतिशास्त्रसर्वे
आत्मादेहतेभिन्नहीप्रतिपादनकरेहै ॥ औपरलो
कवादीकूंवीदेहआत्माइष्टनहीं ॥ सोअंन्यशास्त्रवि
षेवीकहाहै ॥ कर्मकांडकरकेवीआत्मादेहतेविलक्ष
णकहाहै जिसकारणतेदेहपाततेंअनंतरइहांकियेक
र्मकेफलकूंभोगेहै ॥ यातेंआत्मानित्यहैइति ॥ औदे
हकेनाशतेआत्माकानाशनहींहोवेहै ॥ "सोनजीवो
म्रियतेअविनाशीवाअरेयमात्मा नहन्यतेहन्यमाने
शरीरेइत्यादिश्रुतिस्मृतिवचनोंते आत्माकेनाशका
अभावकहाहै॥औदेहकेनाशते आत्माकानाशमाने
तोकृतहानिअकृताभ्यागमरूपदोषकीप्राप्तिहोवेहै ॥
सोपरलोकवादियोकोवीइष्टनहीं ॥याश्रुतिअनुकूल
तर्कसेवीआत्मादेहसेभिन्नहै ॥ अनिष्टआपादककूंत
र्ककहेहै ॥ औअनुमानसेवीआत्मादेहसेभिन्नहीं सि
द्धहोवेहै ॥आत्मादेहसेभिन्नहै द्रष्टाहोनेतेंघटद्रष्टाकी
न्याइ॥सोग्रंथांतरमेंवीकहाहै ॥ जेसेंघटकाद्रष्टाघटसें
भिन्नहै॥मोसर्वथाघटहोवेनहीं॥ तेसेंदेहकाद्रष्टामेंदेह

नहीहूंएसेनिश्चयकरे इति॥औजैसेंग्रहमेंरहनेहाराग्र हीसोग्रहकदाचित्तहोवेनही॥तैसेंदेहविपेरहनेहारादे हिवीदेहहोवेनहीं॥ यातेंतूंसर्वथादेहात्मबुद्धिकात्या गकर ॥ औदेहात्मवादीकासंगवीकदाचित्नहींकर ना॥ कहेतेंवहदेहात्मबुद्धिवालेमहानदोषभागीहैसो "असूर्यानामतेंलोकाः॥ किंतेननकृतंपापं। देहात्म बुद्धिजंपापं।" इत्यादिश्रुतिशास्त्रोंमेंप्रसिद्धकहाहै॥ यातेंतूंब्रह्मात्मबुद्धिकरकेदेहात्मबुद्धिकात्यागकर ॥ जवदेहअभिमानतूंत्यागेगातवदेहकेधर्मजोविप्रादि च्यारीवर्णऔब्रह्मचर्यादिक आश्रमऔस्त्रीपुरुपादि कलिंग॥ औदेवदत्तादिकसंज्ञाइनसर्वकाअभिमान निवृत्तहोवेगा ॥ काहेतेंवर्णाश्रमसंज्ञादिकस्थूलदे हविपेवीआरोपितहैविच्यारकीयेसें स्थूलविपेवीन हींदिखतातव लिंगशरीरवाआत्माविपेतोकहांतेंहो वे॥ औ ताकाजोधर्महोवेतोअन्यजन्मांतरविपेवीप्र तीतिहूवाचाहीयेसोहोवेनहीं॥तैसेंमनुष्यत्वादिजा तिऔपुरुपादिलिंगवीस्थूलविपेदेखियतहै सूक्ष्मश रीरऔआत्माविपेप्रतीतिहोवेनहीं ॥ यातेंस्थूलकेध र्महै॥तेराधर्मनहीं ॥ सो"नत्वंविप्रादिकोवर्णोनाश्र मीनाक्षगोचरः इत्यादिशास्त्रवाक्योंसेंप्रसिद्धकहाहै यातें आकाशादिपंचभूतऔताकाकियास्थूलशरीर औताकेधर्मजोवर्णाश्रमादितूंनहीं ॥ जैसेंस्थूलशरी रतूंनहींतैसेंसूक्ष्मवीतूंनहीं ॥ सूक्ष्मशरीरकिमर्थकहे

है? अपंचीकृतभूतनकाकार्यऔसतरहतत्वात्मकभोगनकासाधनओ इंद्रियअगोचरसोसूक्ष्मशरीरकहियेहै ॥ जिनभूतनकापंचीकरणनहींकियासोअपंचीकृतभूतकहियेहै ॥ सतरहतत्वकोनहै॥ पंचज्ञानइंद्रियपंचकर्मइंद्रियपंचप्राणऔमनबुद्धियेसतरहतत्वहै ॥ तत्वनामअंशवाभागकाहै ॥ पंचज्ञानइंद्रियकोन, श्रोत्र त्वक् चक्षु जिव्हा औघ्राणयेपंचज्ञानइंद्रियहै॥ येपंचशब्दादिकज्ञानकेसाधनहै ॥ यातेंज्ञानइंद्रिय कहियेहैज्ञानसत्वगुणतेंहोवेहै ॥ तिनज्ञानइंद्रियकी उत्पत्तिभूतनकेपंचोसत्वअंशतेंकहिहै ॥ सत्वांशैः पंचभिस्तेषांक्रमाद्धींद्रियपंचकं इत्यादिवाक्यतेया काअर्थयहहै ॥ तिनभूतनकेपंचसत्वअंशोतेक्रमसेपंचज्ञानेंद्रियउपजेहै ॥ आकाशकेसत्वअंशतश्रोत्र ॥ वायुतेंत्वक्तेजतेंचक्षुजलतेंजिव्हापृथ्वीतेंघ्राण ॥ याप्रकारसेज्ञानइंद्रियजिसजिसभूतसेंजोउपजेहै ॥ सोतिसितिसिकेगुणकूंगृहनकरेहै॥श्रोत्रशब्दकूंत्वक् स्पर्शकूंचक्षुरूपकूंजिव्हारसकूंघ्राणगंधकूं इसरीतिसें पंचविषयनकागृहनपंचज्ञानइंद्रियनसेंहोवेहै॥ कर्म इंद्रियकोनहै? वाक्पाणि पाद उपस्थ गुद येपंचकर्मइंद्रियहै ॥ कर्मकासाधनकर्मइंद्रियकहियेहै ॥कर्म नामक्रियाकाहै ॥ क्रियारजोगुणतेंहोवेहै ॥यातेकर्म इंद्रियकी उत्पत्तिभूतनकेरजोगुणअंशोते कहिहै ॥ रजोंशैः पंचभिस्तेषांक्रमात्कर्मेंद्रियाणितु इत्यादि

वाक्यसे ॥ याकाअर्थयह ॥ तिनपंचभूतन केरजोअंशोकरकेक्रमतेंकर्मइंद्रियउपजेहैं ॥ आकाशकेरजोअंशते वाक्वायुतें पाणि तेजतें पादजलतेंउपस्थपृथ्वीतेपायुयाप्रकारसे भूतनकेपंचरजोअंशोंतेपंचकर्मइंद्रियउपजेहैं ॥ औवचनोच्चारणदानादानगमनरतिभोगानंदमलत्यागयेक्रमते तिनोकाव्यापारहै ॥ येज्ञानइंद्रियकर्मइंद्रियभूतनकाअसाधारणकार्यहै ॥ औप्राणतथाअंतःकरणभूतनकासाधारणकार्यहै॥प्राणस्थानक्रियाभेदसेंपंचप्रकारकाहै॥ औअंतःकरणवृत्तिभेदसेच्यारिप्रकारकाहै ॥ पंचप्राणकोन?प्राणअपानसमानउदानऔव्यानयेपंचप्राणहै ॥ तिनमेंउर्ध्वगतिप्राणहैअधोगतिअपानहै औअपरतीनोनाभिकंठसंधिवर्त्तिहै ॥ तिनपंचोकास्थानक्रियाक्याहै ? प्राणकाहृदयस्थानक्षुधापिपासाक्रियाअपानकागुदास्थानमलमूत्रअधोनयन क्रिया ॥ समानकानाभिस्थानभुक्तपीतअन्नजलपचनयोग्यसमकरणक्रिया ॥ उदानकाकंठस्थानश्वासक्रिया ॥ व्यानकासर्वांगस्थानरसमेलनक्रिया ॥ कहांस्वासक्रियाप्राणकी स्वप्नहिडकिहितानननाडीगतउदानकीक्रियाकहीहै ॥ याप्रकारसेस्थानक्रियाभेदसेप्राणपंचेविधहै ॥ औस्वरूपसेवायुविशेषस्वरूपसेंएकहीहै ॥ कोइकनागादिकउपप्राण पंचाभिलायकेदशप्राणकहे तुमपंचप्राणक्युं कहते हो ?

यद्यपियोगग्रंथादिकविषेनागकूर्म कृकलदेवदत्तधनं
जययेपंचउपप्राणऔ उदगारनिमेषछीकजृंभाइमृ
तशरीरफुलावनयेक्रमतेतिनोंकिक्रियाकहिहै॥ तथा
पियहप्रक्रियावेदांतग्रंथनमेनहीं ॥ किंतुपूर्वकहेपंच
प्राणहिलिख्याहै ॥ सोभूतनकेमिलेरजोगुणअंशते
उपजेहै ॥ औमिलेसत्वअंशतेअंतःकरणउपजेहै ॥
शरीरकेअंतरहै औकरणकहिये ज्ञानकेसाधनहै ॥
यातें अंतःकरणकहिये है ॥ ताकी पाचकपाठक
कीन्याइवृत्तिभेदसेच्यारिसंज्ञाहोवैहैसो च्यारिसंज्ञा
कोन ? मनबुद्धिचित्तऔअहंकारयेच्यारिनामअंतः
करणकेहोवेहै ॥ तिनमेसंकल्पविकल्परूपअंतःकर
णकापरिणाममन निश्चयरूपपरिणामबुद्धि चिंतन
रूपपरिणामचित्तअहंतारूपपरिणामअहंकार ॥ ये
च्यारिअंतःकरणकेपरिणामहै ॥ यातेंतिनोकोंबीअं
तःकरणकेहैहै ॥ औमंतव्यबोधव्यचिंतव्यअहंकर्त
व्ययेक्रमतेंतिनोका विषयकहियत हैं ॥ तिन
च्यारोंमेचित्तअहंकारकामनबुद्धिविषे अंतरभावमा
निकेदशइंद्रियपंचप्राणसे मन बुद्धिकूंमिलायकेस
तरहतत्वकासूक्ष्मशरीरवेदांतशास्त्रोंविषे कहाहै ॥
शरीरंसप्तदशभिःसूक्ष्मंताल्लिंगमुच्यतेइत्यादिवाक्यो
तें॥सोसप्तदशतत्वोकरीकेयुक्तजोसूक्ष्मशरीरताहिकूं
लिंगशरीरबीकहेहै ॥ औग्रंथांतरमेसूक्ष्मशरीरकूं
पुरिअष्टकरूपसेबीवरणनकियाहै॥पुरिअष्टककोन ?

सोपुर्यष्टकयहहै ॥ पंचकर्मेंद्रियकी पंचज्ञानेंद्रियकी पंचप्राणनकी पंचसूक्ष्मभूतनकी च्यारिअंतःकरण की कामकीकर्मकी औ अविद्याकी॥तदुक्तं॥वागादि पंचश्रवणादिपंच प्राणादि पंचाभ्रमुखानिपंच॥ बुद्ध्याद्यविद्याऽपिचकामकर्मणि पुर्यष्टकंसूक्ष्मशरीर माहुरिति॥याकाअर्थ स्पष्टहै॥ यापुर्यष्टककूंविद्वान् सूक्ष्मशरीरकहतेहै ॥ सोसूक्ष्मदेहअनात्मरूपहै ॥ तिसविषेजोतादात्म्याध्यासकरेहै ॥ सोनवगुनग्र सितहोवेहै ॥ नवगुनकौन ? तहांतकहेहै॥बुद्धिराग द्वेषप्रयत्नसंस्कारधर्मअधर्मसुख औ दुःख येनवगुन लिंगदेहकेहै ॥ ननुयेसारेधर्मआत्माकेक्युंनहोवे ॥ समाधान॥ येधर्मआत्माकेनही काहेतैं अन्वयव्य तिरेकदृष्टिसैं येसारेगुनलिंगदेहविषेहीं प्रतीतिहोवे है॥जाग्रत्स्वप्नअवस्थाविषे लिंगदेहके सद्भावहुया तिनगुनोंकीप्रतीति औ सुषुप्ति विषे लिंगके अभाव हुया तिनगुनोंकीप्रतीतिहोवेनहीं ॥ यातेंलिंगशरी रकेधर्महै आत्माकेनहीं ॥ औश्रुतिस्मृतिविषेबी कामसंकल्पादिमनका औ इच्छाद्वेषादिक्षेत्रकाध र्मकहाहै ॥ साश्रुतियहहै ॥ कामःसंकल्पोविचिकि त्साश्रद्धाऽश्रद्धाधृतिरधृतिर्ह्रीर्धीर्भीरित्येतत्सर्वम न एवेति ॥याकाअर्थयहहै॥ कामसंकल्पसंशयश्र द्धा अश्रद्धा धृति अधृति लज्जा निश्चय औ भय एसे यह सर्व मनहीपरिणामपावेहै इति ॥ औ

स्मृति यह है॥ इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना धृतिः॥ एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृत मिति॥ याकाअर्थ यहहै ॥ इच्छाद्वेष सुख दुःख संघात चेतना धृति यह संक्षेपसें विकारसहित क्षेत्रएसेंकहाहैइति॥तेसेंषट्ऊर्मिवी स्थूलसूक्ष्मसंघात काधर्महै आत्माकेनहीं॥ तदुक्तं॥ क्षुत्पिपासेहि प्राणस्यमनसः शोकमोहकौ॥ जन्ममृत्यूशरीर स्यषडूर्मिरहितः शिवइति॥ याकाअर्थ यहहै॥ क्षुधापिपासा दोनोंप्राणकाधर्महै॥ शोकमोह दोनोंमनकाधर्महै॥ औ जन्ममृत्युदोनोंस्थूलदेह काधर्महै॥औ शिवस्वरूपआत्माइसषट्ऊर्मितें रहितहैइति॥ तेसें कर्तत्व भोक्तृत्ववीसंघातकाधर्महै॥ आत्माकेनहीं॥काहेतें कर्मकाआश्रयदेहहै करणइंद्रियाहै कर्ताअहंकारहै चेष्टकप्राणहै औ प्रकाशक दैवतहै॥इमपांचोंकरकेकायिकवाचिक मानसव्यापाररूप शुभाशुभकर्महोवेहै॥आत्माताकासाक्षीहै॥ ताकूंजोकर्तामानेहै॥ताकूंभगवाननेदुर्मतिकहाहै॥एसेंहीभोगनकाअयतनस्थूलशरीरहै इंद्रियांसाधकहै साभासबुद्धिभोक्ताहै॥ औविषयभोग्यहै॥ तिनचारोंकाआत्माप्रकाशकसाक्षीहै॥औ तिसआत्माकूंजोभोक्तामानेहै॥ सोमूढोंकाराजाहै॥ एसेंअंधत्वपटुत्वादिचक्षुरादि इंद्रियकेधर्महै॥ आत्मा तिनसर्वधर्मोसेंरहितहै॥ यहधर्मोसहित सूक्ष्म

शरीरकहासोतूंनहीं॥तदुक्तं॥नत्वंदेहो नेंद्रियाणिन प्राणोनमनोनधीः ॥ विनाशित्वाद्विकारित्वादृश्य त्वाच्चघटोयथेति ॥ याकाअर्थस्पष्टहै ॥ अवकारण शरीरकास्वरूपकहेंहै ॥ पूर्वकहेस्थूलसूक्ष्मदोनो शरीरका जो उपादानकारण अज्ञान ताका नाम कारणशरीरहै ॥ सो अज्ञान अनादिहै ॥ काहेतें ताकीउत्पत्तिमाने तोआपसेंआपकी उत्पत्ति अंगी कारकिये, आत्माश्रयदोषकी प्राप्तिहोवेहै ॥ औ अन्यकारणताकामाने तो वेदांतविषे जडचेतनदो पदार्थहीं कहाहै ॥ तिसविषे जडपदार्थसारेअज्ञान केकार्यहै ॥ तासेंतोअज्ञानकी उत्पत्तिसंभवेनहीं ॥ औ चेतनकूं कारणमाने तोबी जीवईश्वरपनातो दोनोअज्ञानकरकेहींसिद्धहै ॥ यातेंतिनदोनोंसेंतो अज्ञानकीउत्पत्तिकहनीसंभवेनहीं ॥ औ परिशेष जोशुद्धचेतनहैं सोअसंगहै ॥ तासेंअज्ञानकीउत्प त्ति अंगीकारकिये चेतनविकारीहोवेगा ॥ यातेंअ ज्ञानअनादिहै ॥ सोइकारणशरीरहै ॥ ननुअज्ञान कूं अनादिअंगीकारकिये नित्यताकी प्राप्तिहोवे गी ॥ काहेतेंजन्यपदार्थकाहीनाशदेखीयतहै॥याशं कासमाधानयहहै ॥ अज्ञानप्रागभावकीन्याई अ नादिसांतहै ॥ ज्ञानसें ताका अंत कहियेनाशहोवे है ॥ यातेंनित्यताकीप्राप्तिहोवेनहीं ॥ तिसअज्ञा नकीदोसक्तिहै ॥ एकआवरणरूप दूसरी विक्षेपरू

प ॥ असत्वापादक औ अभानापादकइनदो
नोंअंशकानामआवरणहै ॥ औभ्रांतिकानामविक्षे
पहै स्थूलसूक्ष्मदोनोशरीरबीभ्रांतिरूपहोनेतेविक्षे
पहीहै ॥ तिसअज्ञानकाअपरनामअविद्याहै ॥
सा अविद्याअनिर्वचनीयरूपहै ॥ जाका किसी
धर्मसेंनिरूपणहोइसकेनहीं ताकानाम अनिर्वच
नीयहै ॥ औअद्भुतरूपहै ॥ तदुक्तं ॥ सन्नाप्यसन्ना
प्युभयात्मिकानो भिन्नाप्यभिन्नाप्युभयात्मिकाने।
॥ संगाप्यनंगाह्युभयात्मिकानो महाद्भुतानिर्वच
नीयरूपेति ॥ याकाअर्थयहहै ॥ साअविद्यासत्
वा असत् अथवाउभयरूपकहिजावेनहीं ॥ औ चे
तनसेंभिन्नवाअभिन्नअथवाउभयरूपतावीकहिजा
वेनहीं ॥ औ अंगसहितवाअंगरहित अथवा उभ
यरूपताकहिजावेनहीं ॥ ऐसी महाअद्भुतशक्ति
अनिर्वचनीयरूपाहै इति ॥ सा अविद्या त्रिवि
धप्रकारसे लोकविषे प्रतीतिहोवेहै ॥ जीवन्मुक्त
विद्वान्की दृष्टीसेंतुच्छा औ मुमुक्षुकूं अनिर्वचनीय
औमूढनकूं सत्तारूपसें प्रतीतिहोवेहै ॥ तदुक्तं ॥
तुच्छानिर्वचनीयाचवास्तवीचेत्यसौत्रिधेति ॥ ता
कीनिवृत्तिबी श्रुतीनें त्रिविधप्रकारसें कहिहै ॥ वे
दांतशास्त्रकेश्रवणसें परमार्थबुद्धि अविद्याकीनाश
होवेहै ॥ औ अपरोक्षज्ञानसें कार्यक्षमतानिवृत्त
होवेहै ॥ औप्रारब्धकेनाशतें प्रतिभासकानाशहो

वेहै ॥ यहकारणशरीरका स्वरूप कहा ॥ तदुक्तं ॥
अनाद्यविद्यानिर्वाच्या कारणोपाधिरुच्यते इति॥
येपूर्वोक्तस्थूलसूक्ष्म कारणशरीरत्रयसोआत्माकी
उपाधिरूपहै ॥ तिसत्रिविधउपाधियोगतें आत्मा
जीवकह्याजावेहै ॥ तदुक्तं ॥ स्थूलसूक्ष्मकारणा
ख्यमुपाधित्रितयंचितेः ॥ एतैर्विशिष्टो जीवःस्या
द्वियुक्तः परमेश्वरइति ॥ याकाअर्थस्पष्टहै ॥ तिन
तीनोंशरीरोंविषे पंचकोशहै ॥ पंचकोशकोन ! त
हांकहेहै ॥ अंन्नमयादिपंचकोशहै ॥ तिनपांचेमेंउ
त्तरउत्तरअंतरहै ॥ तिनोंकेविवेकसे आत्माकाप्रका
शहोवेहै ॥ तदुक्तं ॥ अन्नप्राणमनोमयविज्ञानानं
दपंचकोशानाम् ॥ एकैकांतरभाजांभजतिविवेका
त्प्रकाशतामात्मेति ॥ याकाअर्थयहहै ॥ अन्नम
य प्रणमय मनोमय विज्ञानमय औ आनंदमय
येपांचकोश एकएककेअंतरभजनेहारेहै ॥ तिनोंके
विवेचन करनेसेंशुद्धआत्माप्रगटताकूंपावेहै इति॥
तिनकोशनकास्वरूप यहहै ॥ अन्नकापरिणामस्थू
लशरीरअन्नमयकोशकहियेहै ॥ काहेतेंपितामाता
करकेभुक्तपीतअन्नसेंषट्कोशहोयकेशरीरहोवेहै ॥
तदुक्तं ॥ पितृभ्यामशितादन्नात्षट्कोशंजायतेव
पुरिति ॥ याकाअर्थयहहै ॥ मातापिताकरकेअश
नकियेअन्नतेषट्कोशात्मकवपुउपजेहै ॥ सोषट्
कोशयहहै ॥ स्नायुअस्थिऔमज्जाये तीनकोशपि

तातैं॥औ त्वक्मांसओ शोणितयेतीनमातासेहोवे
है ॥ तिसपट्कोशमयस्थूलदेहहै ॥ यातेंअन्नमय
है ॥ औ कोशकारकीटकेकोशकीन्याइवाअसिको
शवत्आत्माकाआछादकहै ॥ यातेंकोशकहियेहै
॥औपंचकर्मेंद्रियसहितपंचप्राणसोप्राणमयकोशक
हियेहै॥औ पंचज्ञानेंद्रियसहितमनकूंमनोमयको
शकहेहै ॥ कहांकर्मेंद्रियसहितमनकूंमनोमयकोश
वीकहाहै ॥ औपंचज्ञानेंद्रियसहितबुद्धिकूंविज्ञान
मयकोशकहेहै ॥ औसुपुप्तिगतअज्ञानावृतप्रतिबिं
बरूपआनंदकेअभिमानकानामआनंदमयकोशहै
॥ अथवा जाग्रत्स्वप्नविषेप्रियमोदऔप्रमोदरूप
त्रिविधवृत्तिआनंदकानामआनंदमयकोशहै ॥ सु
पुप्तिविषेआनंदमयकीस्पष्टप्रतीति औजाग्रत्स्वप्न
विषेकिंचित्प्रतीतिहोवेहै ॥ तदुक्तं ॥ आनंदमय
कोशस्यसुपुप्तौस्फूर्तिरुत्कटा॥ स्वप्नजागरयोरीषदि
ष्टसंदर्शनादिनाइति ॥ इष्टदर्शनादिनाकहियेइष्टप
दार्थकेदर्शनसेंप्रियवृत्तिउदयहोवेहै औताकेलाभसें
मोदऔभोगसें प्रमोदजाग्रत्स्वप्नविषेहोवेहै ॥ अन्य
अर्थस्पष्टहै ॥ इनपंचकोशनकेविवेककियेविनाआ
त्माकायथावत्भानहोवेनहीं किंतुपंचकोशनविषे
तत्तन्मय प्रतीतिहोवेहै ॥ तदुक्तं ॥ पंचकोशादियोगे
नतत्तन्मयइवस्थितः ॥शुद्धात्मानीलवस्त्रादियोगेन
स्फटिकोयथेति॥याकाअर्थयहहै ॥ जैसेंनीलपीतव

स्त्रादियोगसैंस्फटिकनीलपीतादिरंगसहितप्रतीति होवेहै तेसैंअन्नमयादिपंचकोशनकेयोगसैंशुद्धात्मा तिसतिसकोशमयप्रतीतिहोवेहै इति ॥ तात्पर्ययह कि मैंमनुष्यहूंमैंक्षुधापिपासावानहूं मैं संकल्पवान हूंमैंकर्ताहूंमैंभोक्ताहूं औ वेदांतविचारशून्यकितनेक वादिमुख्यआत्माकूंनजानिकेतिसतिसकोशविषे आत्मबुद्धिकरकेपरस्परकलहकरेहै ॥ जेसैंकोइपं चपुरुषकिसिस्थानविषेपृथक्पृथक् रंगवाले पंचपु ष्पाच्छादितस्फटिककूंदेखके आपसमेंविवादकरते भये ॥ फेरकिसीअन्यज्ञातासैंपूछीके पुष्पोंके अ पसरणद्वारास्फटिकका यथावत्‌रूपजान्या ॥ तेसैं वादीबीसाक्षी आत्माकूं नजानिके विवादकरेहैं ॥ कोइदेह आत्मामानेहै कोइइंद्रिया आत्मामानेहै कोईप्राणआत्मानेहै ॥ कोईमनआत्मामानेहै ॥ ॥ कोइछिनकविज्ञानरूपबुद्धिकूं आत्मामानेहै ॥ कोइशून्यहीपरमतत्त्वमानेहै ॥ कोइजडचे तनउभयात्मक मानेहै ॥ कोइकेवलजडऔज्ञान गुणवाला आत्मामानेहै ॥ कोइआत्माकाअणुरू प मानेहै ॥ कोइ मध्यपरिमाणवालामानेहै ॥ को इविभुइत्यादिस्वस्वबुद्धिकल्पितमानेहै ॥ औस्व स्वपक्षविषेश्रुत्याभास युक्तियां औअनुभवकहेहैं ॥ सोसारेमत श्रुतिस्मृतिसैं विरोधहै ॥ औआचा र्योंकरकेखंडितहै ॥ देहआत्मवाद विषे कृतहानी

अकृताभ्यागमनादिदोषहै॥ इंद्रियात्मवादविषे प्र
त्येकआत्मा मानेतेंअनेकात्मा एक शरीरविषेसिद्ध
होवेगासोविरुद्धहै ॥ औसमुदाय आत्मामानेतो
एककिसिइंद्रियके अभावतें आत्माकाअभावरूप
दोष ॥ औकिसिएक इंद्रियकूं आत्मामानेंविषे
प्रमाणयुक्तिका अभावरूपदोष ॥ प्राणआत्मामा
ने तो जडत्वकीआप्ति ॥ जीवनहेतुप्राणकहे
तो रक्तविषे अतिव्याप्ति इत्यादिदोषहै ॥ मन
आत्मामानेतो विकारित्वकीप्राप्ति ॥ औममपद
काअस्पदत्वऔवास्यादिवत् करणत्वकी प्राप्ति
रूपदोषोंकीप्राप्ति ॥ बुद्धिआत्मामानेतो परिणा
मित्व औ कर्तृत्वऔसुषुप्तिविषेविलयत्वकी प्राप्ति
होवेगी इत्यादिदोषहै ॥ औशून्यआत्मामानेतोपु
रुषार्थकी हानी औ अनुभव कर्ता अन्यहोनेतें शू
न्य आत्मानहीं ॥ औ ज्ञानगुणवाला आत्मामा
नेतो ज्ञानकूं अनित्यत्वकी प्राप्तिरूपदोष ॥ औ
चेतनजडउभयात्ममानेतो श्रुति अनुभव विरु
द्धरूपदोष ॥ औअणुमानेतो शरीरके एकदेश वि
षे ज्ञान अन्यदेश विषे सुखदुःखके ज्ञानका अभा
वरूपदोष ॥ मध्यमपरिमाणमाने तो अन्यछोटे
वा वडेशरीरकी प्राप्तिहुया संकोच विकाशत्वमा
नना होवेगा ॥ औविभुमानिके जडमानने विषे
श्रुति युक्ति औ अनुभवसें विरुद्धरूपदोष होवे

गा ॥ इत्यादि तर्करूप युक्तिसें औ देहआत्मान भवति दृश्यत्वात् घटवत् ॥ इंद्रिय आत्मा न भवति करणत्वात् वास्यादिवत् ॥ प्राण आत्मा न भवति वायुविशेषत्वात् बाह्यवायुवत् ॥ मनआत्मा न भवति करणत्वात् बाह्येंद्रियवत् ॥ बुद्धिः आत्मानभवति क्षणपरिणामित्वात विद्युद्वत् ॥ शून्यआत्मा न भवति निस्तत्त्वत्वात् खपुष्पवत् ॥ इत्यादिअनुमानरूप युक्तिसें ॥ औ "अशरीरोनिरिंद्रियोऽप्राणोऽमनास्सच्चिदानंदमात्रः" इत्यादिश्रुतिसेंदेहइंद्रिय प्राणादिसेंआत्माभिन्नहींसिद्धहोवेहै॥यातें आत्मा देहादिपंचकोशनतेभिन्नहै॥ननु "सवाएपपुरुपोऽन्नरसमयः" इत्यादिश्रुतिसेंअन्नरसमयदेहआत्मा सुनियतहै ॥ यातें देहादिकहीं आत्माहोवेगा ॥ याशंकाकासमाधानयहहै ॥ यद्यपिश्रुतिनेंअन्नरसमयपुरुषकहाहै ॥ तथापिताकादेहआत्माकहनेविषेतात्पर्यनहीं ॥ किंतु गौणात्माकीव्यावृत्तिमें तात्पर्यहै ॥ अभिप्राययहहै ॥ आत्मात्रिविध कहाहै ॥ गौणात्मा मिथ्यात्मा औमुख्यात्मा ॥ तिसविषे पुत्रादिककूं गौणात्माकहेहैं ॥ औअन्नमयादिपंचकोशमिथ्यात्माकहेहैं ॥ औसाक्षीमुख्यात्माहै ॥ तिसपुत्रादिक विषे मूढनकूं आत्मबुद्धिहोवेहै ॥ ताकी निवृत्ति अर्थश्रुतिने

मयदेहकूं आत्माकहाहै ॥ फेरसोपानश्रुतियोंसें क्रमसें पंचकोशनविषे आत्मा भ्रांतिकी व्यावृत्तिकरके चंद्रसाखान्यायकरके वाअरुंधति दर्शन न्यायसें शेषश्रुतिने मुख्यात्मासाक्षी दिखायाहै ॥ सो सोपानश्रुतियोंयहहै ॥ " तस्माद्वा एतस्मादन्नरसमयादन्योंतरात्मा प्राणमयः ॥ तस्माद्वा एतस्मात्प्राणमयादन्योंतरात्मा मनोमयः ॥ तस्माद्वा एतस्मान्मनोमयादन्योंतरात्मा विज्ञानमयः ॥ तस्माद्वाएतस्माद्विज्ञानमयादन्योंतरात्मा आनंदमयः ॥ ब्रह्मपुच्छ प्रतिष्ठेति " इनोंका अर्थयहहै ॥ तिसतें वा इसतें अन्नरसमयदेहतें अन्यअंतरआत्माप्राणमयहै ॥ तिसतें वाइसतें प्राणमयतें अन्यअंतरआत्मामनोमयहै ॥ तिसतें वाइसतें मनोमयतें अन्यअंतरआत्माविज्ञानमयहै ॥ तिसतें वा इसतें विज्ञानमयतें अन्यअंतरआत्मा आनंदमयहै ॥ औ आनंदमयकी प्रतिष्ठारूपब्रह्महीशेपहै इति ॥ इसरीतिसेंपंचकोशनकूं पक्षिरूपसें आत्मबुद्धिसें उपासना दिखायके पंचकोशतेंपरआत्मादिखावनेविषे श्रुतियोंका तात्पर्यहै ॥ ननु पंचकोशनतें परआत्माकोइहोवे तो पंचकोशनकीन्याइ प्रतीतिहुवा चाहिये ॥ याशंकाकासमाधानयहहै ॥ पंचकोशजिसकरके जान्याजावेहै सोइआत्माहै ॥ सो अनभवकावि

पयमतहोवो किंतु सो आपहीअनुभवरूपहै ॥ त
हांश्रुतिः ॥ " येन सर्वं विजानाति तं केन विजा
नीयादिति " याकाअर्थयहहै ॥ जिसकरके सर्व
जान्याजावैहै तिसआत्माकूं किसकरणकरके पुरु
षजानेगा इति ॥ इनपंचकोशनके विवेकतें पंच
क्लेशोंकी निवृत्तिहोवैहै ॥ तिनक्लेशोंकास्वरूपआ
गेकहेंगे ॥ येपंचकोशतीनशरीरविषेस्थितहै ॥ अ
न्नमयकोश स्थूलशरीरहै ॥ प्राणमयमनोमयवि
ज्ञानमय येतीनकोशसूक्ष्मशरीरविषेहै ॥ औ आनं
दमयकोशकारणशरीरहै ॥ सो पंचकोशात्मकती
नोंशरीर तीनअवस्थाविषे व्यभिचारीहोनेतेंअनि
त्यहै ॥ तीनअवस्था कौन तहां कहेहै ॥ जाग्रत्
स्वप्न औ सुषुप्ति ये तीनअवस्थाहै ॥ कालविशेष
कानामअवस्थाहै ॥ जहां बाह्येंद्रियोंकरके पदा
र्थोंकी उपलब्धिहोवे सा जाग्रत्अवस्था ॥ तदुक्तं॥
यत्रार्थं व्यवहारःस्या दिंद्रियैर्बाह्यचारिभिरिति
॥ याकाअर्थ स्पष्टभाव यहहै ॥ जाग्रत्का व्यव
हारसाराचौवात्रिपुटीयासे होवैहै ॥ तीनपुटोंकाना
मत्रिपुटीहै ॥ पुटनाम अवयवकाहै ॥ इहांअध्या
त्म अधिभूत औ अधिदैवयेतीनों अवयवमिल
के त्रिपुटी होवैहै ॥ जोसंघात विषे स्थित होवे
औ ज्ञानकर्मका साधनहोवे सो अध्यात्मकहिये
है ॥ एसा दशइंद्रिय औ च्यारि अंतःकरणहै ॥

औ संघातसें भिन्नकरणोकाविषयहोवे औ भूतन
के आश्रयहोवे सो अधिभूतकहियेहै ॥ एसाश
ब्दादिविषय औ वचनादिव्यापार औमंतव्यबोध
व्यादिपदार्थहै ॥ औइंद्रियअंतःकरणके अनुग्राह
कदिशावायुसूर्यादिचौदांदेवतातिनकानाम अधि
दैवहै ॥ सोश्रोत्रअध्यात्मा शब्दअधिभूत औ दि
शाअभिमानीदेवता अधिदैव यारीतिसें चौदांत्रि
पुटीयां जानिलेनी ॥ तिसजाग्रत्काअभिमानी
विश्वहै ॥ औ जहांमनोमात्रअंतरविषयोका ज्ञा
नहोवेसा स्वप्नअवस्थाकहियेहै ॥ तदुक्तं ॥ स्वप्न
संस्कारजोज्ञेयोमनोमात्रैकहेतुकइति ॥ याका
अर्थ यहहै ॥ स्वप्न संस्कारजन्य जानणा मनमा
त्रहीएककाकेविषेहेतुहै इति ॥ तात्पर्ययहहै कि
स्वप्नविषेसारी त्रिपुटी मनोमयहोवेहै ईश्वररचित
नहीं ॥ औ तिसस्वप्नके अभिमानीका नामतैज
सहै ॥ साहंकारसर्वत्रिपुटीयोंका विलयताकाना
म सुषुप्तिहै ॥ तदुक्तं ॥ सुप्तौविलीयतेसर्वमिति।
तिस सुषुप्तिके अभिमानीका नामप्राज्ञहै ॥ येअ
वस्यातीनोत्रिगुणजन्य बुद्धिवृत्तिकीहैसोदृश्य व्य
भिचारिहैं ॥ तदुक्तं ॥ स्वप्नोजागरणेऽलीकः स्वप्नेपि
जागरेनहि ॥ द्वयमेवलयेनास्तिलयोपिह्युभयोर्न
चइति ॥ याकाअर्थयहहै ॥ स्वप्नजाग्रत् विषे अली
कहै नामजूठाहै॥औजाग्रत्स्वप्नविषेनहीहै ॥ औद्व

यंकहिये जाग्रत्स्वप्नदोनो लये कहियेसुषुप्तिविषे नास्तिनामनहींहै ॥ औलयअवस्थातिनजाग्रत् स्वप्नदोनोविषे नहीं इति यातें येतीनोअवस्थाव्य तिरेकहै ॥ औ तिनतीनोअवस्थाकासाक्षी आत्मा तीनोविषे अन्वयहै ॥ इहां व्यतिरेकनाम व्यावृत्ति काहै ॥ अन्वयनाम अनुवृत्तिकाहै ॥ इनतीनोअव स्थाका विशेषनिरूपण आगे होवेगा जैसें तीनोंअ वस्थाव्यतिरेकहै ॥ तेसें तीनअवस्थाविषेस्थित पं चकोशरूप तीनशरीरवीव्यतिरेकहै ॥ औ आत्मा अन्वयहै ॥ स्वप्नविषेस्थूलदेहका अभानहै औ आ त्माकाभानहै ॥ सुषुप्तिविषे लिंगदेहकाअभान औ आत्माकाभानहै ॥ औ समाधिविषे अज्ञान रूप कारण देहकाअभान औ निरावरणरूपसे आत्माकाभानहोवेहै ॥ यातें तीनोंदेहव्यतिरेकहै॥ औ आत्मा सर्वत्र अन्वयहै ॥ सो ग्रंथांतरमें " अभाने स्थूलदेहस्य स्वप्ने यद्भानमात्मनः " इत्यादि वाक्यनसें प्रसिद्धकहाहै ॥ इतनेपर्यंत द्रे ष्टादिभिन्नतत्त्वका विचारकहा ॥ तासेंतादात्म्य भ्रांतिका परिहारकिया ॥ अब भेदभ्रांतिकी नि वृत्ति निमित्त ब्रह्माभिन्नतत्व निर्णय करेहै ॥ जै सें जीवके व्यष्टि तीनशरीर औ पंचकोशहै ॥ ते सें ईश्वरकेवी समष्टि तीनशरीर औ पंचकोश शा स्त्रकारोंनेकहाहै ॥ विराट सूत्रात्मा औ अव्याकृ

त येतीनईश्वरकें शरीर ॥ औ ब्रह्मांड अन्नमयको
शहै ॥ औ हिरण्यगर्भ गतज्ञान क्रियाबलरूप त्रि
विधसक्ति सो त्रिविधकोश सूक्ष्मशरीरगतहै ॥
औ मायाआनंदमयकोशहै ॥ जैसें जीवके कोश
नविषे आत्मबुद्धिकरके वादी कलहकरेंहै ॥ तैसें
ईश्वरकेकोशनविषे परमात्माबुद्धिकरकेबी कलहक
रैंहै ॥ कोई अंतर्यामि कोइ नित्यज्ञानइच्छाप्र
यत्नवान ॥ कोइ हिरण्यगर्भ ॥ कोइ विराट ॥
कोइ प्रजापति ॥ कोइ विष्णु ॥ कोइ त्रिनेत्र ॥ को
इ गणेशइत्यादि ईश्वरकास्वरूपकहे है ॥ तदुक्तं॥
"अंतर्यामिणमारभ्य स्थावरांते शवादिनः इति"
याका अर्थयहहै अंतर्यामिसेलेके स्थावरपर्यंत ई
श्वरवादीहै इति ॥ औ जैसें व्यष्टिशरीरकोशनतें
जीवसाक्षीभिन्नहै ॥ तैसें समष्टिशरीरकोशनतें ई
श्वरसाक्षीबीभिन्नहै ॥ यातें मुंझइषीकान्यायतें व्य
ष्टिसमष्टि उपाधितेचेतनकूं विवेचनकरके भिन्नजाने
॥तिसचेतनकूं सदाअभेदजाने ॥ काहेतें जीवईश्व
रका उपाधिसेंभेद प्रतीतिहोवेहै ॥ परमार्थसें नहीं
॥ तदुक्तं ॥ कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्व
रः ॥ कार्यकारणतां हित्वा पूर्णबोधोवशिष्यते इति
॥ याका अर्थयहहै ॥ कार्यउपाधिजीवहै ॥ कारणो
पाधिईश्वरहै ॥ कार्यकारणता दोनोंउपाधिके त्या
गकिये पूर्णबोधस्वरूपही अवशेषरहेहै इति ॥ जै

सें घटमठ दोनोंउपाधितें घटाकाश मठाकाश दो कह्याजावेहै ॥ घटमठ दृष्टिकेत्यागकिये आकाश सदा एकहीहै ॥ तैसें अल्पमहत् उपाधिदृष्टिसें जीवईश्वर दो कह्याजावेहै ॥ औ दोनोंउपाधि दृष्टिके त्यागकिये शुद्धचेतन सदाएहहीहै ॥ यह युक्तिसें ईश्वरजीवका अभेदकह्या ॥ सोइ अबवेदोंकेमह. वाक्यनसे निरूपणकरेहै ॥ चारिवेदोंके महावाक्य चारिहैं ॥ "प्रज्ञानमानंदब्रह्म" यहऋग्वेदकावाक्यहै ॥ "अहंब्रह्मास्मि" यहयजुर्वेदकावाक्यहै ॥ "तत्त्वमसि" यहसामवेदकावाक्यहै ॥ औ "अयमात्माब्रह्म" यहअथर्वणवेदकावाक्यहै ॥ तिस एकएकवाक्यविषे तीनतीनतीनपदहै ॥ प्रज्ञानंआनंद औब्रह्मयेतीनपद प्रथमवाक्यकेहै ॥ औद्वितीयवाक्यविषे अहं ब्रह्म औअस्मि ये तीनपदहै ॥ औतृतियवाक्यविषे तत् त्वं औअसि ये तीनपदहै ॥ औचतुर्थवाक्यविषे अयं आत्मा औ ब्रह्मयेतीन पदहै ॥ प्रथमवाक्यके तीनपदोंमें प्रज्ञानपदका वाच्यार्थजीवहै ॥ ब्रह्मपदका वाच्यअर्थ ईश्वरहै ॥ शुद्धब्रह्मनहीं काहेते शुद्धकिसिवचनका वाच्यहोवे नहीं ॥ औआनंदपद जीवका विशेषणहै ॥ औआनंदरूप प्रज्ञानब्रह्महै॥ यहवाक्यार्थहै औ अहंब्रह्मास्मि इसद्वितीयवाक्यके तीनपदनविषे अहंपदका वाच्यजीवहै ॥ ब्रह्मपदका वाच्यईश्वरहै ॥

रिमपदअभेदसूचकहै ॥ ताकावाच्यवालक्ष्य अर्थ संभवेनहीं ॥ मैब्रह्महूं यहवाक्यार्थहै ॥ औतत्त्वमसि इसतृतियवाक्यके तीनोंपदनविषे तत्पदका वाच्यईश्वरहै ॥ त्वंपदका वाच्यजीवहै ॥ औअसि पद अभेदसूचनार्थहै ॥ वाअसिपदका कछुवीअर्थ नहीं ॥ औअसिपदका कोइकैवल शुद्धब्रह्मअर्थक हेहै सोसंभवेनहीं ॥ सोईश्वरतूंहै यहवाक्यार्थहै ॥ औअयमात्मा ब्रह्मइसचतुर्थवाक्यके तीनोंपदन विषे आत्मापदका वाच्यजीवहै ॥ ब्रह्मपदका वाच्यईश्वरहै ॥ औअयंपदजीवके लक्ष्यरूपका अं परोक्षबोधकहै ॥ यहआत्माब्रह्महै यहवाक्यार्थहै ॥ इनचारिमहावाक्यनविषे जीवईश्वरका अभेदक हाहै ॥ तिनचारिवाक्यनविषे तत्त्वमसि उपदेश वाक्यहै ॥ सोउद्दालक ऋषीनें अपनें पुत्रश्वेतके तुकेताइ छांदोग्यउपनिषदके षष्ठप्रपाठकविषे जगत्का कारणपरमात्मा दिखायेके फेरकहा तत्त्वमसि नामसो परमात्मातूंहै ॥ एसेंईश्वरजीवका एकत्वउपदेशकिया सोतत् औत्वंपदके वाच्यअर्थविषे एकतासंभवेनहीं ॥ किंतु लक्षणासें एकत्वकहाहै ॥ याअर्थके जनावनेवास्ते तत्पद औत्वंपदके वाच्यईश्वर औजीवका स्वरूपकहेहै ॥ शुद्धसत्त्वप्रधानमायाविषे चेतकाआभास औ मायाका अधिष्ठान चेतनमिलके ईश्वरकहियेहै॥

औमलीनसत्वप्रधान अविद्याविषे चेतनकाआभा
स औअविद्याका अधिष्ठानचेतनमिलके जीवकहि
येहै ॥ यद्यपि अवच्छेदवादमें मायाविसिष्टईश्वर
औअविद्यावसिष्ट जीवकहाहै ॥ औबिंबप्रतिबिंब
वादमेंअज्ञानविषे प्रतिबिंबजीव औबिंबईश्वर क
हाहै ॥ इत्यादिईश्वरजीवके स्वरूपनिर्णयविषे
बहुतवादहै॥तथापिपूज्यपाद श्रीभगवत्पादतथावि
द्यारण्यस्वामीने ग्रंथोंमेआभासवादहीं लिख्या
है ॥ यातें प्रथमकहाजोईश्वरजीवका स्वरूप सो
इ जानणा ॥ तिसईश्वर औ जीवका धर्म अब
कहेहै,॥ सोईश्वर सर्वज्ञहै ॥ सर्वसक्तिहै ॥ विभु
है ॥ सर्वकानियंताहै ॥ स्वतंत्रहै ॥ परोक्षहै ॥
मायाजाके आधीनहै ॥ बंधमोक्षभ्रांतिरहितहै ॥
जगतका कर्ताहै ॥ औ जीवनके कर्मफलकादाता
है ॥ इत्यादिधर्मवालाईश्वरहै ॥ औ जीव अल्प
ज्ञहै ॥ अल्पसक्तिहै ॥ परिच्छिन्नहै ॥ नियम्यहै॥
परतंत्रहै ॥ प्रत्यक्षहै ॥ अविद्यामोहितहै ॥ बंध
मोक्षभ्रांतिसहितहै ॥ शुभाशुभकर्मका कर्ताऔता
केफलकाभोक्ताहै ॥ इत्यादिधर्मवाला जीवहै ॥
तिनदोनोंकी वाच्यअर्थ करकेएकताबनेनहीं॥ या
तेंमहावाक्यके पदोंमेलक्षणाका अंगीकारहै ॥ प
दकीवृत्तिदोप्रकारकी होवेहै ॥ एकसक्तिवृत्ति दूस
री लक्षणावृत्ति होवेहै ॥ जिसपदमें जि...

बोधकरनेकी सामर्थहोवे सा सामर्थरूपपदकी स
क्तिहै ॥ औ कोइईश्वरकी इच्छा रूपकोइ योग्य
तारूप कोइभेदाभेदरूपतादात्म्यसक्तिमानेहै ॥
सोमत सारेविरुद्धहै ॥ अवलक्षणाका वीज तथा
स्वरूपकहेहै ॥ वक्ताकेतात्पर्यकी अनुपपत्तिलक्षणा
कावीजहै ॥ औ सक्यकासंवधसो लक्षणाकास्व
रूपहै ॥ तात्पर्ययहहै ॥ सक्ति वृत्तिसें जिसपदा
र्थका वोध होवेसोसक्यकहियेहै ॥ औ लक्षणासे
जाकावोधहोवेसो लक्ष्यकहियेहै ॥ तिससक्यलक्ष
दोनोके संवंधका नामलक्षणाहै ॥ सोलक्षणा तीन
प्रकारकीहोवेहै ॥ एकजहल्लक्षणा दूसरीअजहल्लक्ष
णा औ तीसरी जहदजहल्लक्षणा ॥ जहांसारेवाक्य
अर्थकात्यागकरके सक्यसंबधिका वाक्यसेंबोध हो
वे तहां जहल्लक्षणाहै ॥ जेसें गंगायां गोषःया वा
वाक्यविषे गंगानाम देवनदीके प्रवाहकाहै ताकेवि
षेगौकेगोष्ठकीस्थिति संभवेनहीं ॥ यातेंशक्य क
हियेवाच्यअर्थ सारेकाजहत्‌कहिये त्यागकरके ता
के तीरविषेगोष्ठहै ॥ यहजहल्लक्षणासें वोधहोवे
है ॥ काहेतेंशक्यगंगा औ लक्ष्यतीर तिनदोनोका
संवंधहै ॥ औ जहांशक्यार्थकूं न त्यागके शक्यसं
बंधिका वोधहोवे तहां अजहल्लक्षणा होवेहै ॥ जे
सें शोणो धावति इहांशोणनामलाल रंगकाहै ता
केवलमें धावन संभवेनहीं ॥ यातें शोणपदका श

क्यार्थताकूं अजहत् नामनत्यागिके ताकासंबंधिअ श्वधावनकरेहै ॥ यहअजहल्लक्षणातें बोधहोवेहै ॥ इहांकाकेभ्योदधिरक्षतां इत्यादिअन्यवी उदाहर णजानिलेने ॥ यहदोनों लक्षणामहावाक्यमें सं भवेनहीं ॥ काहेतें जहल्लक्षणाके अंगीकारकिये त त्पदकावाच्य ईश्वर औ त्वं पदकावाच्यजीव ति न दोनोंका त्यागहोवेगा ॥ औ तिनदोनों विषे हींचेतनप्रविष्टहै ॥ यातेंभिन्न लक्ष्यकोइसंभवेन हीं ॥ यातें जहल्लक्षणाकाअंगीकारइहांनहीं ॥ ते सेंअजहल्लक्षणावी इहांसंभवेनहीं ॥ काहेतें अजह ल्लक्षणाविषेवाच्यकेन त्यागतें ईश्वरजीवविषे वि रोधदूरी होवेनहीं ॥ यातें परिशेषजो तीसरी जह दजहत्कहिये भागत्याग लक्षणाहै ॥ ताकाहीं म हावाक्यमेंअंगीकारहै ॥ तदुक्तं ॥ एकात्मकत्वाज्ज हती न संभवेत्तथाजहल्लक्षणताविरोधतः ॥ सोयं पदार्थाविवभागलक्षणा युज्येत तत्त्वं पदयोरदोष तः इति ॥ याकाअर्थ यहहै ॥ परमात्माजीवात्मा का एकात्मकत्वहोनेतें अर्थात् वाच्यते भिन्नलक्ष्य के अभावतें जहतीलक्षणा संभवेनहीं ॥ तेसेंही वा च्यविषे विरोधहोनेते अजहल्लक्षण तावीसंभवे न हीं ॥ किंतु सोयहपदार्थहै ताकीन्याइ दोषके अभा वते भागलक्षणाही संभवेहै इति ॥ अभिप्राययह है॥जेसें कोइकाश्मीरका राजाहोवे सो फेरकाशीमे

जायके भिक्षुहोइजावे ॥ ताकूं कोइदेखके ज्ञातासें पूछेयहकोनहै ॥ ताकूंवक्ताकहे सोयंदेवदत्तः ॥ इहांसऔ अयंइनदोपदकावाक्यजो परोक्षदेश औ अतीतकाविसिष्टराजा ॥ औ अपरोक्ष देश औव र्तमानकालविसिष्टभिक्षुताकीतो एकतायद्यपिन हींबीबनतितथापि परोक्षत्वअपरोक्षत्वादिविरोधां शत्यागिके अविरोधांशदेवदत्तशरीर विभागलक्षणा सें अंगीकारकिये विरोधनहीं ॥ तैसें तत्पदके वा च्यविषे औ त्वंपदके वाच्यविषे प्रतीति जो होवे है विरोधिधर्म ताकासाभासमाया अविद्यासहित त्यागकरके विभागलक्षणासें चेतनमात्रका अंगी कारहै ॥ ताके विषे विरोधनहीं ॥ सोवीमहावा क्यके एकपदविषे लक्षणाके अंगीकारकिये पुरु षार्थकी सिद्धिहोतेनहीं ॥ किंतु दोनोपदोंविषे अं गीकारकिये सिद्धिहोवेहै ॥ औ महावाक्यमें सा मानाधिकरणादि त्रिविधसंबंधहै ॥ तदुक्तं ॥ "सा मानाधिकरण्यं तदनुविशेषणविशेष्यताचेति ॥ अ थलक्ष्यलक्षकत्वं भवति पदार्थानांचसंबंधइति" याकाअर्थयहहै ॥ तत्त्वंपदोंका सामानाधिकरण्य भावसंबंधहै ॥ औ तिसतें अनंतरपदोंके अर्थका विशेषण विशेष्यताभावसंबंधहोवेहै ॥ औ विरो धांशत्यागपूर्वकवर्तनसे पदपदार्थोंका लक्ष्यलक्षण भावसंबंधहोवेहै इति ॥ भिन्नप्रवृत्ति निमित्तवा

लेपदोंका एकार्थ निष्ठत्वसामानाधिकरण्य कहि येहै ॥ वासमानविभक्तिवालेपदोंका तात्पर्यकरके एकअर्थीविषे परिअवसानिताकानाम सामानाधि करण्यहै ॥ औ परस्परभेदव्यावर्तवताकरके पदों केअर्थका संबंधविशेषणविशेष्यभावसंबंधकहियेहै ॥ सोतत्त्वं त्वंतत् अहंब्रह्म ब्रह्मअहं प्रज्ञानब्रह्म ब्रह्मप्रज्ञान औआत्माब्रह्म ब्रह्मआत्मा यारीतिसे परोक्ष परिच्छिन्नताकी व्यावृत्तिकरके ओतप्रोत महावाक्यनविषे होवेहै ॥ औ विरोधांशका त्याग करके लक्षणासेंलक्ष्यसेंसंबंध ताकानाम लक्ष्यल क्षणभावसंबंधहै ॥ तिसलक्षणासें अखंडार्थका बोधहोवेहै ॥ सोईविद्वानोंकरके संमतहै ॥ तदुक्तं ॥ संसर्गोवा विसिष्टोवा वाक्यार्थोनात्रसंमतः ॥ अखंडैकरसत्वेन वाक्यार्थोविदुषांमतः इति ॥ या काअर्थ यहहै ॥ संसर्ग अथवाविसिष्टवाक्यका अर्थसंमतनहीं किंतु अखंड एकरसत्वकरकेही वा क्यार्थ विद्वानोनेमान्याहै ॥ ननु महावाक्यसें अ खंडार्थका बोधसंभवेनहीं काहेते महावाक्यमें ल क्षणाके अंगीकारकिये असंगताकीहानि औ लक्ष णाके अनंगीकारसेंलक्ष्यका ज्ञानसंभवेनहीं ॥या शंकाकासमाधान यहहै ॥ चेतनकाउपाधिसें मु ख्यसंबंधकेअभाव तेंवीकल्पिततादात्म्यसंबंध स्वा प्नपदार्थनसें स्वप्नद्रष्टाकी न्याइसंभवेहै ॥ यातेंपर

मार्थसें असंगताकीबीहानीनहीं ॥ औलक्षणाके संभवसे लक्ष्यकाबोधबीसंभवेहै ॥ यहब्रह्मा भिन्नत त्त्वका विचारकहातासें भेदभ्रांतिका परिहारदिखा या ॥ इसरीतिसें गुरुमुखतें परमतत्त्वका जिज्ञासु श्रवणकरीताका वारंवारविचारकरके तिसतत्त्वका निदिध्यासनकरे ॥ काहेतेंनिदिध्यासनसें विना अविद्याका सूक्ष्मसंस्कार रूपविपर्ययभावना दूरी होवेनहीं ॥ तदुक्तं॥निदिध्यास न शून्यस्यनास्त्य विद्या। परिक्षयः इति ॥ याकाअर्थस्पष्टहै ॥ विजा तीयवृत्तियोंके तिरस्कारपूर्वक सजातीयवृत्तिका प्रवाहनिदिध्यासनकहियेहै ॥ प्रमाणसंशय् विल्पा दिवृत्तियेंका नामविजातीयवृत्तियांहै ॥ औब्रह्मा रवृत्तिकी आवृत्तिसजातीयवृत्ति प्रवाहहै ॥ एसे विचारनिदिध्यासनसेंतत्वका साक्षात्कारके पूर्वो क्तशिष्यकृतार्थभया ॥ श्रवणमननं औनिदिध्या सनका विशेपनिरूपन आगेकरेंगे ॥ औनिदिध्या सनकरताहुवा विद्वान्जिसतत्त्वकूं पावेहै ॥ सो नित्यपरब्रह्मस्वरूपमहींहूंइतिसंबंधः ॥ २ ॥

पूर्वद्वितीय श्लोकमें तत्वबोधकासाधनविचार सां गनिरूपणकीया ॥ अबइस श्लोकमें ज्ञेयब्रह्म का स्वरूप औ ताकीअवगमकवृति दिखावेहै ॥ यदानंदेति ॥

यदानंदरूपं प्रकाशस्वरूपं
निरस्तप्रपंचंपरिच्छेदशून्यं ॥
अहंब्रह्मवृत्येकगम्यंतुरीयं॥
परंब्रह्मनित्यंतदेवाहमस्मि॥३

जोआनंदरूपहै औ प्रकाशस्वरूपहै औ निरस्तप्रपंचहै औपरिच्छेदतें शून्यहै औ अहंब्रह्म याएक वृत्तिकरकेगम्यहै औ तुरीयहै ॥ सोनित्यपरब्रह्ममेहूं ॥ इतिपदार्थः ॥ टीका ॥ जोब्रह्मआनंदरूपकहिये निरतिशयसुखरूपहै ॥ ननुविषयोंविषेहीं प्रत्यक्ष सुखप्रतीतिहोवेहै ॥ औ ब्रह्मआनंदरूपहै याकेविषेकोइ प्रमाणनहीं ॥ याशंकाकासमाधान यहहै ॥ ब्रह्महीं सुखरूपहै ॥ विषयोंमेंसुखनहीं ॥ सोजीवन्मुक्त विद्वानोंकरि सदाअनुभूतहै ॥ औ योवैभूमातत्सुखंनाल्पे सुखमस्ति । आनंदो ब्रह्मेतिव्यजानात् ॥ आनंदंब्रह्मणो विद्वान्नबिभेति कदाचन । एषह्येवानंदयाति । एषोस्यपरमआनंदःरसंह्येवायंलब्ध्वानंदीभवति । यंलब्ध्वाचापरंलाभंमन्यतेनाधिकंततः इत्यादि श्रुतिस्मृतियों याकेविषे प्रमाणहै॥ इनोंकाअर्थयहहै ॥ योभूमा कहिये अपरिच्छिन्नरूप ब्रह्महै सोइवैनामानिश्चय

सुखरूपहै ॥ औ अल्पेकहियेपरिच्छिन्न विपयोविपे सुखनहीं इति ॥ औ आनंदरूपब्रह्मएसें जानेइ ति ॥ औ आनंदरूपब्रह्मकूं ज्ञानणेहाराकदाचि त् भयकूंनहीं पावता इति ॥ औ यहपरमात्मा हीं जगतकूं आनंददेवेहै इति ॥ औ यहहींविद्वान् कापरमआनंदहै इति ॥ औ यहविद्वानरसरूप ब्र ह्मकूंही लभके आनंदीहोवेहै इति ॥ स्मृतिकाअ र्थ यहहै. ॥ योगी जिसब्रह्मानंदपरमलाभकूं लभ केतिसतें अधिकअपरलाभनही मानता इति ॥ न नुसो ब्रह्मानंदस्वर्गसुखकी न्याइपरोक्षहोवेगा ॥ याशंकाकासमाधानयहहै ब्रह्मसर्वकाआत्माहोने सें नित्यअपरोक्षहै ॥ सो " यत्साक्षादपरोक्षाद्ब्र ह्म " याश्रुतिनें साक्षात्अपरोक्ष ब्रह्मप्रसिद्ध कहाहै ॥ यातें सुखपरोक्षनहीं ॥ ननुनित्यअपरोक्ष प्रत्यग भिन्न ब्रह्मसुखरूपहोवें तोविपयों विपेप्रेम औ इ च्छानहुइचाहिये.॥ याकासमाधानयहहै ॥ विप योविपेजोप्रीतिहोवेहै सोआत्मावास्ते प्रीतिहोवे है ॥ विपयोंविपेस्वतः प्रेमनहीं ॥ यातेंपरमप्रेम काआस्पदआत्माहीहै ॥ सोयाज्ञवल्क्य ऋपीनेमै त्रेयिप्रति बृहदारण्यके पष्ठध्यायकेपंचमे ब्राह्मण विपे " नवाअरेपत्युः कामायपतिः प्रियोभव त्यां त्मनस्तुकामायपतिः प्रियोभवति " इसवाक्यसें आदिलेके " नवाअरेसर्वस्य कामाय सर्वंप्रियंभव

त्यात्मनस्तुकामायसर्वं प्रियं भवति ” इसवा
क्यपर्यंत कहाहै ॥ याकाअर्थयहहै ॥ अरेमैत्रेयी
वैनिश्चय पतिकीकामनाकेलीये पति प्रियनहींहो
वेहै ॥ किंतुस्वकामनाकेलियेपतिप्रियहोवेहै ॥ ते
सेंहींजायाकी कामनाकेलियेजाया प्रियनहीं ॥
पुत्रकीकामनाकेलिये पुत्रप्रियनहीं ॥ वित्तकीका
कामनाकेलिये वित्तप्रियनही ॥ औ ब्राह्मणकी
कामनाके लिये ब्राह्मण प्रियनहीं ॥ औ क्षत्रिय
कीकामनाके लिये क्षत्रिप्रियनहीं ॥ औ लोककी
कामनाके लिये लोक प्रिय नहीं ॥ औ देवन
की कामनाके लिये देव प्रियनहीं ॥ औ भूतन
की कामनाके लिये भूत प्रियनहीं ॥ एसें क
हिके अंत विषे सर्वकी कामनाके लिये सर्व प्रिय
नहीं. किंतु आत्माकी कामनाके लिये सर्व प्रियहो
वेहै एसें कहाहै ॥ यातेंबाह्यविषयोंमें स्वतः प्रिय
त्वनहीं ॥ किंतु जिस आत्मावास्तै प्रियहोवेहै सो
आत्माहीं परमप्रियहै ॥ ननु बाह्यपुत्रधनादिक
स्वतः प्रियमतंहोवो तोबी देहइंद्रियसो स्वतः प्रि
य होवेगा ॥ याशंकाका समाधानयहहै ॥ जेसें
वित्तादि स्वतः प्रियनहीं तेसें देहादिकबी प्रियनहीं
॥ किंतु सर्वसें अंतरजो आत्माहे सोइ परमप्रिय
है ॥ तदुक्तं ॥ वित्तात्पुत्रः प्रियः पुत्रात्पिंडः पिंडा
त्तथेंद्रियम ॥ इंद्रियाच्चप्रियः प्राणः प्राणादात्मा

प्रियः परः इति ॥ याकाअर्थयहहै ॥ वित्ततें प्रिय पुत्रहै औपुत्रतें प्रियशरीरहै ॥ औ तैसेंशरीरते प्रिय इंद्रियांहै ॥ औ इंद्रियेंतें प्रिय प्राणहै ॥ औ प्राणतेपरमप्रियआत्माहै इति ॥ औ " प्रेयःपुत्रात् प्रेयोवित्तात् प्रेयोऽन्यस्मात्सार्वस्मादंतरतरं यदयमात्मा " इसश्रुतिनेबी पुत्रवित्त औ सर्वदेहादिकतेंअंतरतर आत्माहीं परमप्रियकहाहै ॥ यातै आत्मासेभिन्न कोइबीपदार्थ प्रेमकाविषय नहीं ॥ किंतु ब्रह्मस्वरूपआत्माहीं परमप्रेमका आस्पदहै ॥ एसेंजानिके विषयपदार्थनकीउपेक्षा करनि.यह पूर्वोक्तश्रुतियोंका अभिप्रायहै ॥ औं पूर्वकहाजो आत्मासुखरूपहोवै तो विषयोंकीच्छानहुइचाहिये ताकाउत्तरयहहै किआत्मज्ञानरहित मूढनकूंविषयोंकी इच्छाहोवेहै ॥ औ तिन विषयो विषे सुखकी प्रतीतिभ्रांतिसेंहोवेहै ॥ औ ताकेनिमित्त अनेकप्रयत्नकरेहै ॥ औसदाभ्रमताफरताहै ॥ औ ज्ञानवानकी जो शरीरयात्रानिमित्त जो कदाचितक प्रवृत्ति प्रारब्धकर्मसें होवेहै ॥ साप्रवृत्ति सुखबुद्धिसेंनही ॥ किंतु वेष्टिगृहीतवत् प्रतिबंधापनय निमित्तहोवेहै ॥ जैसें क्षुधानिवृत्तिकेअर्थ भोजनविषे प्रवृत्तिहोवेहै ॥ याते ज्ञानीकिवृत्ति गंगागौकीन्याइहैं ॥ जेसें प्रथमप्रसूतगौ परप्रेरीत जंगलमेंजावेहै ॥ तहांबीवत्सकाचिंतन करतिहुइ सद्यवत्सके स

मीपआवेहै ॥ तेसें ज्ञानीकीवृत्तिबी भोजनादिक विषेबीतत्वचिंतनकरतिहुइ तिसि व्यवहाकेसिद्धहु वेजटितप्रत्यक् प्रवणहोवेहे ॥ औमूढनका चित्त उष्ट्रकीन्याइसदा भटकता रहताहै ॥ जैसेंउष्ट्रवनते वनांतरविषेकंटकवृक्षों विषे भ्रमताहै ॥ तेसें मूढवि षयतें विषयांतर विषे भ्रमताहै॥ औ तिनविषयोमें सुखनहीं ॥जब विवेक शून्यकूं वांछित पदार्थकी प्रा प्तिहोवेहै ॥ तबईच्छाके अभावतें क्षणमात्रचित्तशां तहोवेहै॥तिसकालविषे अंतरउदयहुइ सात्विकवृ त्ति विषे आत्मानंदका प्रतिबिंबहोवे है ॥ ताकाआ स्वादकरके ज्ञानहीनकूं विषयविषे सुखका भ्रमहो वेहै॥फेर अन्य विषयकी इच्छाके उदय हुवे आनंद का प्रतिबिंब वृत्तिमेंहोवेनहीं ॥याते विषयोंमें सुख हे नहीं॥ जोविषयनमें सुखहोवेतो समाधि औ सु षुप्ति विषेसुखकाअनुभवनहींहुवाचाहिये ॥ काहेते तहांविषय कोइ हेनही औ सुखकाअनुभवहोवेहै ॥ समाधिकासुख जीवन्मुक्तोंकअनुभवसिद्धहै ॥ औ श्रुतिनेबी कहाहै ॥ " समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत् ॥ न शक्यतेवर्णयितुं गिरा तदा स्वयंतदंतः करणेन गृ ह्यते इति"॥ याकाअर्थयहहै समाधिसें धोयगहे है चित्तकामलजिसका औ आत्माविषे निवेशित चित्तभयाहै ॥ ताकूंजो तबसुखहोवेहै सोगिराकर

केवर्णन होइ नहि शकता ॥ सोस्वयंतिसके अंतः करणकरके ग्रहनहोवेहै इति औ सुषुप्तिकासुख सर्वलोकोके अनुभवसिद्धहै॥ औश्रुतिनेंबी शकुनि औ श्येनपक्षी औ महाकुमार औ महाराजा औ महाब्राह्मणके दृष्टांतोसेंसुषुप्तिका सुख वर्णन कीयाहै ॥ औ विषयो विषे सुखहोतातो भर्तृहरिमुचुकुंदादि राज्यविभूतिका त्याग नहि करते ॥ औ "नचेंद्रस्यसुखं किंचित् न सुखं चक्रवर्तिनः इत्यादि शास्त्रबी निषेधनहि करते ॥ यातेंविषयोंमें सुख नहीं ॥ औकदाचित् कोइएसाआग्रहकरे विषयोंसें सुखअनुभवहोवेहै ॥ ताकूंहमपूछेहै ॥ क्युंवैषयिक सुखविषयोंका धर्महे वा करणोंकाधर्महे ॥ वाकर्मकाधर्महै वाभोक्ताकाधर्महे वादेशकाधर्महै वाकालकाधर्महै वाअज्ञानकाधर्महै अथवाज्ञानकाधर्म है ॥ जोविषयोंकाधर्म कहे तो जिसविषयसे एककूं सुखहोवेहै तिसिसें सर्वकूं सुखहुवाचाहियें ॥ औ विषयके सन्निधिहुवे सर्वकालसुखहुवाचाहियेसोहोवेनहीं ॥ अन्यपदार्थकी इच्छाहुइ तिसक्षणमेंसुखकोअदर्शनदेखियतहै ॥ औ करणकाधर्मकहेतो विषयकेव्यवधानहुवे सुखहुवाचाहियेसोनहिदेखियतहै ॥ औकर्मकाधर्मकहेतो "कर्मानुष्ठान कालमे हुवाचाहिये ॥ औ भोक्ताकाधर्म कहेतो विक्षेप नहुवाचाहिये सो सदादेखियतहै ॥

औ देशका धर्म कहेतो सर्वदेशमें सुख होनेतें स्वर्ग गमनकी इच्छा नहींहोइ चाहिये जो स्वर्गमें माने तो तहांबी शास्त्रोंसे दुःख सुनियतहै ॥ इंद्रलोके महद्दुःखमिति ॥औ कालधर्म कहेतो शीतातपवत् सर्वत्र सर्वकूं सुख हुवाचाहिये ॥ औ अज्ञानका धर्म कहेतो भोग्यत्व ज्ञानसे बिना सुखहुवाचाहिये सो नहिदेखियत है ॥ औ जो ज्ञानका धर्म कहे तो विषयोंके ज्ञानसे विरक्तोंकूंबी सुखहुवाचाहिये सो होवेनहीं ॥ प्रत्युत द्वेषहोवेहै ॥ यातें विषयन में सुख नहीं ॥ किंतुजिस ब्रह्मानंदके लेश करके सारा विश्व आनंदवानहोवैहै सो ब्रह्मही आनंदरूपहै ॥ ननुसो ब्रह्मआनंदरूप होवे तोबी स्वरूपसें जडहोवेगा ॥ या शंकाके हुयाआचार्यकहेहै ॥ प्रकाशस्वरूपमिति ॥ सो ब्रह्म प्रकाशस्वरूपहै ॥ सो प्रकाशबी अग्निआदिककी न्याइ दीप्तिरूपनहीं किंतुज्ञप्तिरूपहै ॥ औ सर्वसूर्यादिज्योत्योंका ज्योतिरूपहै ॥ सो " ज्योतिषामपितज्ज्योतिः " यावाक्यसे भगवानने त्रयोदशेऽध्यायमे प्रसिद्ध कहाहै ॥ औ सोपरमात्मा आपस्वयंप्रकाशस्वरूप है ॥ औ सूर्यादि ज्योत्यों ताकेप्रकाशनेविषे समर्थ नहीं ॥ तहांश्रुति " नतत्रसूर्योभातिनचंद्रतारकंनेमाविद्युतोभांतिकुतोयमग्निरिति " याकाअर्थ यहहै ॥ तिसस्वयंज्योति परमात्मदवके विषे

यंप्रकाशताहै ॥ न चंद्रतारक प्रकाशताहै ॥ नयह
विजलीप्रकाशतीहै औ यहअग्नितो कांसेंप्रकाशि
शकेइति ॥ तथाचस्मृतिः " नतद्भासयतेसूर्यो न
शशांकोनपावकः इति " याका अर्थयहहै न तहां
सूर्यप्रकाशताहै न चंद्रमानअग्निप्रकाशताहै इति
औ सोपरमात्मा नकिसिइंद्रियका विषयहै ॥ न
किसिप्रमाणका विषयहै॥तहांश्रुति " नतत्र चक्षुर्ग
च्छाति नवागगच्छति नोमनःइति"याकाअर्थस्पष्टहै
॥औ"यतोमानानिसिद्धयंति " याशास्त्रवाक्यविषे
यतोकहिये येजिसचेतन आत्मातें मानानिकहिये
प्रत्यक्षअनुमानादिप्रमाणो सिद्धहोवेहै या कहनेसें
प्रमाणोकावी प्रकाशक होनेतेंप्रमाणोका विषय न
हीं ॥ औ सोइस्वप्रकाशरूप परमात्मदेव सर्वभूत
नके हृदयविषे साक्षीरूप होयके सर्वत्रिपुटीयोंकू
क्रमसेंविनासूर्यवत् प्रकाशताहै ॥ औ अखंडज्ञान
स्वरूपहै॥सो ज्ञानआत्माकागुण वाधर्म नहीं॥तदु
क्तं " ज्ञानं न चात्मनोधर्मो नगुणोवा कथंचन॥ज्ञा
नस्वरूपएवात्मानित्यः सर्वगतः शिवः इति " या
का अर्थयहहै ॥ ज्ञानआत्माकाधर्म अथवा गुणकि
सिप्रकारसे संभवे नहीं किंतु ज्ञानस्वरूपहीनित्यस
र्वगत शिवरूपआत्माहै इति ॥ औ छिनकविज्ञान
वादी बुद्धिकूं स्वप्रकाशमानहै औ तार्किक तिस बु
द्धिकं ज्ञानरूपआत्माकागुण कहेहै॥ सोसर्वयाविरु

द्धहै ॥ औ स्वप्रकाशरूपप्रत्यगभिन्न ब्रह्महीहै ॥ यातें यहसिद्धभया ब्रह्मप्रकाशस्वरूपहै ॥ ननुब्रह्म आनंदऔप्रकाशरूपहोवो तोवीसप्रपंच होवेगा ॥ या शंकाकेहुयाआचार्य कहेहै ॥ निरस्तप्रपंचमिति ॥ निरस्तकहिये निवृत्तभयाहै प्रपंचजिसते ॥ तात्पर्य यहकि भूतभौतिक सर्वजगत्विषे व्याप कहुयावी सर्वसें निर्लेपहै॥ जेसेंसुर्यसर्वकूं प्रकाशता हुवा सदासर्वसें निर्लेपहै औ जेसेआकाशसर्वगत स्थितहुवासर्वसेंनिर्लेपहै ॥ तेसें सर्वभूतनका प्रकाशकसर्वांतरस्थितसर्वात्मारूपब्रह्मसदानिर्लेपहै ॥ तहांश्रुति॥" सुर्यो यथासर्वलोकस्यचक्षुर्नलिप्यते॥ चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः ॥ एकस्तथासर्वभूतांतरात्मान लिप्यते लोकदुःखेनवाह्येति ॥ तथाचस्मृतिः ॥ यथासर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशंनोपलिप्यते ॥ सर्वत्रावस्थितोदेहे तथात्मानोपलिप्यतेइति " ॥श्रुतिका अर्थयहहै ॥ जैसें सर्वलोकके चक्षुका प्रकाशक औ चक्षुविषे स्थितजो सुर्य सो चक्षुसंबंधिवाह्यदोषों करके लिपायमान नहिहोता॥तेसें सर्वभूतांतरएक आत्मा वाह्यलोकोंके दुःखकरके लिपायमान नहि होताइति ॥ औ जैसेंसर्वत्रपंकादिविषेवीस्थितआकाशसुक्ष्मऔ असंग होनेतें पंकादिकों करके लिपायमान नहिहोता ॥ तैसेंसर्वत्रउत्तमअधमशरीर विषे स्थितहुवावी आत्मा तिन देहादिकसंबं

धि गुणदोषोंकरके लिपायमान नहि होता इति॥ अथवा निरस्त प्रपंचकहिये अधिष्ठानब्रह्मविषे प्रपंचनित्य निवृत्त हीहै ॥ काहेतें भूतभौतिक स्थावरजंगम नामरूपक्रियात्मक जितना जगत् है ॥ औ ताके गुणदोषहै सो सारे ब्रह्मविषे शुक्तिरजतकी न्याइ कल्पितहै ॥ कल्पितवस्तु अधिष्ठानकूं विगारेनहीं ॥ जेसें रज्जुविषे कल्पित सर्प रज्जुकूं विषसहितनहीं करेहै ॥ औ मृगतृष्णाका जलभूमिकूं गिलीनहीं करेहै ॥ तेसें मिथ्या प्रपंच सत्यस्वरूप ब्रह्मकूं दूषित नहीं करेहै ॥ सो जगतका मिथ्यापणा "नेहनानास्तिकिंचन । वाचारंभणंविकारो नामधेयं" इत्यादि श्रुतियोंने प्रसिद्धकहाहै ॥ तेसें "अयं प्रपंचो मिथ्यैव सत्यं ब्रह्माहमद्वयं" इत्यादि शास्त्रोंमेबीकहाहै ॥ यातें यहसिद्धभया कि ब्रह्म निष्प्रपंच सत्यस्वरूप है ॥ फेरसो ब्रह्मकेसाहै ॥ परिच्छेदशून्यमिति ॥ परिच्छेदशून्य कहिये देशकृतपरिच्छेद कालकृत परिच्छेद औ वस्तुकृतपरिछेदसें रहित है ॥ तिनत्रिविध परिछेदोंके लक्षण यहहै ॥ अत्यंताभावप्रतियोगित्वं देशपरिच्छेदत्वं ॥ प्रागभावप्रध्वंसाभावप्रतियोगित्वं कालपरिच्छेदत्वं ॥ अन्यो

स देशविषे विद्यमान घटहोवे तासें अन्यदेशवि
षे घटका अत्यंताभाव होवेहै ॥ तिस अत्यंताभा
वका प्रतियोगिपणा घटविषे रहेहै ॥ यातें घट दे
शपरिच्छेदवालाहै ॥ औ उत्पत्तिसे पूर्वघटका
अभावहोवेहै ॥ औदंडसें भंजनकिये अनंतर घट
काअभाव होवेहै ॥ तिन प्रागभावप्रध्वंसाभाव
का प्रतियोगिपणा वर्त्तमानघटविषेहै ॥ याते घ
ट कालपरिच्छेदवालाहै ॥ औ घटका पटमें अभा
व औ पटका घटमें अभाव होवेहै ॥ तहां घटा
भावका प्रतियोगिपणा घटविषेहै ॥ औ पटाभा
वका प्रतियोगिपणा पटविषेहै ॥ काहेतें अभाव
काअभाव सो अभावका प्रतियोगि कहियेहै ॥
याते पटविषे घटके अभावका प्रतियोगि घटहो
नेतें सो घट वस्तु परिच्छेदवालाहै ॥ तैसें देहादि
जडपदार्थ सो त्रिविध परिछेदवालेहै ॥ औ ब्र
ह्म त्रिविध [illegible] च्छेदसें रहितहै व्यापकहोनेतें दे
शकृत प[illegible] [illegible]ीं ॥ औ नित्यहोनेतें कालकृ
त परि[illegible] [illegible]र्वात्माहोनेतें वस्तुकृत
परि[illegible] परमात्माकाशवत्सर्व गतश्च नित्यः
स[illegible] तें दोष[illegible]यादि श्रुतिविषे अर्थवा
तव्य इतिह [illegible]रणा प्रसिर्णयविषेहै
॥ तत्रापराक्रवेदो [illegible]नें रहित ताकाहि अं
[illegible]रूपताहै

॥ जैसें छांदोग्यके षष्ठप्रपाठमें " सदेवसौम्य " यह उपक्रमकरि " ऐतदात्म्यमिदंसर्वं " यहउपसंहारकियाहै॥ औ उपदेश असकृदावृत्ति अभ्यासकहियेहै ॥ जैसेंतहांहि " तत्वमसि तत्वमसि " एसा नव वारउपदेश कियाहै ॥ औ प्रमाणांतरानधिगमता अपूर्वताहै ॥ जैसें " तंत्वौपनिषदं " यह उपनिषदगम्यकहनेसें अद्वयवस्तु प्रमाणांतरका अविषय कहाहै ॥ औ अनर्थनिवृत्तिद्वारापरमसुखकी प्राप्तिफलकहियेहै ॥ जैसेंतहां " तरतिशोकमात्मवित् " यहज्ञानसेंसमूलशोककी निवृत्तिफल कहाहै ॥ औ विरोधिकी निंदावांछितकाकथनअर्थवाद कहियेहै ॥ जैसेंतहांहि " मृत्योःसमृत्युमाप्नोति " एसेंनानादर्शीकीनिंदाकरके " येनाश्रुतंश्रुतं " इत्यादिवांछितार्थकी स्तुतिकरीहै.॥ औ अर्थानुकूलदृष्टांतकूंउपपत्ति कहेहै ॥ जैसेंतहांहि ॥ वाचारंभणं विकारोनामधेयं ॥ इत्यादिप्रपंचमिथ्यात्वका दृष्टांतकहाहै ॥ जैसेंछांदोग्यकेषड् लिंगोसें अद्वैतब्रह्मजान्याजावेहै ॥ तेसेंसर्वोपनिषदोंकेजानने ॥ यहहीश्रवणकास्वरूपहै॥ तदुक्तं ॥ " वेदांतानामशेषाणामादिमध्यावसानतः ॥ ब्रह्मात्मन्येव तात्पर्यमितिधीः श्रवणंभवेदिति "॥अर्थयह॥ समग्रउपनिषदनका आदिमध्यअंततेंब्रह्मात्मके एकत्वमेंही तात्पर्य हैएसनिश्चयश्रवणहोवेहैइति॥

औ " वेदार्थपरमाद्वैतं । वेदाब्रह्मात्मविषयाः " इ
त्यादि वाक्यनसेंबी वेदका अद्वैतविषेही तात्पर्य
निश्चयहोवेहै ॥औ अज्ञातअबाधित फलवान् अर्थ
विषेही श्रुति प्रमाणहै इस रीतिसें तात्पर्य निश्चय
रूपश्रवणसें वेद अद्वैतप्रतिपादन करेहै वाअन्यअ
र्थकूं प्रतिपादन करेहै इसप्रमाणगत संशयकीनि
वृत्ति होवेहै ॥ यहश्रवण शारीरकके समन्वयाख्य
प्रथमाध्यायमें कहाहै ॥ अबमननका स्वरूपदि
खावेहै ॥ श्रवण संभावित तत्वका युक्तिसे अनु
संधान मननकहियेहै ॥ तदुक्तं॥ युक्त्यासंभावित
त्वानुसंधानं मननंतुतदिति ॥ तथाच ॥ मननं
तु स्वयुक्तिभिरिति ॥ अर्थस्पष्टहै ॥ श्रुति अनुकू
ल युक्तियहै ॥ श्रुति विषे ब्रह्मात्माका एकत्व क
हाहै ॥ औ भेदमानेंतो श्रुतिसें विरोधहोवेगा सो
इष्टनही एसेंतर्कसें भेदशंकाका परिहार करना ॥
अनिष्टापादनकूं तर्ककहेहै ॥ औ आत्माकूं ब्रह्मसें
भिन्नमानेतो आत्माकूं घटकीन्याइ परिच्छन्नता
की प्राप्तिहोवेगी ॥ औ ब्रह्मकूं आत्मासें भिन्नमा
नेतो ब्रह्मकूंदेहादि पदार्थनकीन्याइ अनात्मापणे
की प्राप्तिहोवेगी ॥ सोइष्टनहीं ॥ प्रयोगयुक्ति यह
है ॥ जीवो ब्रह्माभिन्नःचेतनत्वात् यत्रयत्र चेतन
त्वं तत्रतत्रब्रह्माभिन्नत्वं यथाब्रह्मणि इत्यादि ॥
एसें सतचेतन आनंदआत्माकाबी परस्परभेदन

हीं ॥ तदुक्तं ॥ " सदानंदप्रकाशेभ्यो नात्माभिन्नः कथंचन ॥ तथात्वेऽसदनानंदा ज्ञानानि स्युस्तवात्मनः " इति ॥ अर्थयह ॥ सत्आनंद प्रकाशतें आत्माकिसिप्रकारसें भिन्नहोवेनहीं अन्यथा हेवादीन् तेरे आत्माकूं असत् अनानंद अज्ञानताकी प्राप्तिहोवेगी इत्यादि युक्तियोंसें अद्वयब्रह्मकेचिंतनका नाम मननहै ॥ सोशारीरकके अविरोधाख्य द्वितीयाध्यायमें कहाहै औ साधनफल संज्ञकतृतिय औ चतुर्थाध्यायमें साधन औ फलकानिर्णयहै॥ ताके विचारसें साधनगत औ फलगत संशयकीनिवृत्तिहोवेहै ॥ औ शारीरकके प्रत्येक अध्यायमें च्यारि च्यारिपादहै ॥ तिनपादनकी संज्ञा औ सूत्रसंख्या यहहै ॥ स्पष्टसंज्ञकपादमें सूत्र ३१ एकतीसहे ॥ अस्पष्टपाद॰ ३२ ॥ ज्ञेयपाद॰ ४३ ॥ चिंतापाद॰ २८ ॥ इतिप्रथमाध्याय ॥ स्मृतिपाद॰ ३७ ॥ तर्कपाद॰ ४५ ॥ भूतपाद॰ ५३ ॥ लिंगपाद॰ ३० ॥ इति द्वितीयोध्याय ॥ वैराग्यपाद॰ २७ ॥ तत्वविवेकपाद॰ ४१ ॥ गुणोपसंहारपाद॰ ६६ ॥ साधनपाद॰ ५२ ॥ इति तृतियोध्याय ॥ जीवन्मुक्तिपाद॰ १९ ॥ उत्क्रांतिपाद॰ २१ ॥ ब्रह्मप्राप्तिपाद॰ १६ ॥ ब्रह्मलोकपाद॰ २२ ॥ इति चतुर्थोध्यायः ४ ॥ तिनषोडश पादनविषे यथासंज्ञक पदार्थनिरूपणकियाहै ॥

सर्वमूलसूत्र श्रीमद्व्यासभगवान कृतहै ॥ ताका भाष्य पूज्यपादपद्म श्रीशंकराचार्यनेकियाहै ॥ सूत्रतथाभाष्यका लक्षणशास्त्रोंमें यहकहाहै ॥ तदुक्तं ॥ " अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारवद्विश्वतोमुखं ॥ अस्तोभ्यमनवद्यं चसूत्रं सूत्रविदोविदुः ॥ १ ॥ सूत्रार्थो वर्ण्यते यत्रवाक्यैः सूत्रानुकारिभिः ॥ स्व पदानिच वर्ण्यते भाष्यं भाष्यविदोविदुः " इति ॥ अर्थयह ॥ जामें अल्पाक्षर औ असंशय औ स र्वत्रसारार्थवाला औ अनिरुद्ध औ निर्दोषहोवेता कूं सूत्रज्ञाता सूत्र कहतेहै इति ॥ औ जामें सूत्र अनुकारि समानवाक्योंसें सूत्रार्थवर्णनकिया हो वे औ स्वपदनका सपर्याय वर्णनकियाहोवेताकूं भाष्यवेत्ता भाष्य जानतेहै इति ॥ तिसशारीरक भाष्यउपरबहुत व्याख्यानहै॥तिसशारीरककेच्या रि अध्यायके विचारसें ईश्वरगतसंशय जीवगतसं शय औ साधानगत संशय औ फलगत संशय इस चतुर्विध प्रमेयके संशयका परिहारहोवैहै ॥ सोच तुर्विध संशयका स्वरूप औ निवृत्तिका विचार शास्त्रोंमे प्रसिद्धकहाहै ॥ विस्तार भयसें इहांलि ख्या नहीं यहसफलमननका लक्षण कहा ॥ अब निदिध्यासनका लक्षणकहेहै ॥ विजातीय वृत्ति के तिरस्कार पूर्वक सजातीय वृत्तिका प्रवाह निदि ध्यासन कहियेहै ॥प्रमाण संशय विकल्प निद्रा स्मृ

ति वृत्यांसारी इहां विजातीयहै॥तिनोंका अनादर करके तैलधारावत् निरंतर ब्रह्माकार वृत्तिका प्रवाह करनाताकूं प्रत्यय संतति औ एकतानत्व कहेहै ॥ तिस निदिध्यासनसें विपर्ययवासनाकी निवृत्ति होवेहै ॥ येपूर्वोक्त श्रवणादि तीनसाधनोंसें प्रतिबं धरहित प्रसूत विद्यारूपचरमा वृत्तिसें ब्रह्मगम्य है ॥ सो "दृश्यतेत्वग्र्यावुद्धया मनसैवानुद्रष्टव्यं" इत्यादि श्रुतियों विषे संस्कृत बुद्धिवृत्तिवा मनोवृ त्तिसें ब्रह्मद्रष्टव्य स्पष्टकहाहै ॥ संस्कृतबुद्धिकह नेसें शास्त्रोक्ततनुता प्रत्यक्ता संस्कारवति औ निर्मलयेच्यारि ब्रह्माकारवृत्तिके गुन जानणे ॥ ननुब्रह्मवृत्तिका विषय अंगीकारकिये ब्रह्मकूं दृश्य त्वाप्तिहोवेगी ॥ याशंकाका समाधान यहहै ॥ वृत्तिकूं आवरणभंगतारूप चेतनविषे फलहोनेतें वृ त्तिवेद्यता कहिहै ॥ तदुक्तं ॥ वृत्तिव्याप्तिमपेक्षैव वेद्यत्वं प्राहुरात्मनः इति ॥ अर्थस्पष्टअभिप्राय य हहै ॥ वृत्तिदोप्रकारकीहै ॥ एक वृत्तिव्याप्ति दूस री फलव्याप्ति ॥ बाह्यघटादिजड पदार्थके ज्ञानमें फलव्याप्तिका उपयोगहै काहेतें वृत्तिसें आवरण कें भंगहुवेबी तिसवृत्तिगत फलकहियेचिदाभास सेविन्याघटादिकनका प्रकाश होवेनहीं ॥ जैसें मृत्तिकाके पात्रसें ढंप्यालोहेका गोला होवेताके आ वरण रूपपात्रकूं दंडसें भंजनकियेबी दीपकसें वि

नागोलेका प्रकाश होवै नहीं ॥ किंतुदीपकसैंहीं प्र
काशहोवेहै ॥ तैसें वृत्तिसें घटादिकनका आवरण
भंग होयके आभाससें घटादिकनका प्रकाश होवे
है ॥ औ ब्रह्मज्ञानविषे फल जो आभास ताका
उपयोग नहीं ॥ काहेतें जैसें मृत्पात्रसें ढंपिमणि
होवे ॥ तहां दंडसे पात्रका ध्वंस किये मणि आ
पहीं प्रकाशे है ॥ तिसके प्रकाशनेमें दीपककी अ
पेक्षा नहीं ॥ तैसें महावाक्यके विचारजन्यवृत्ति
सें वा वृत्तिआरूढ चेतनसें अज्ञानकृतावरणके भं
गहुवे ब्रह्म स्वयंप्रकाशरूपसें वृत्तिमें भान होवे है॥
तहां आभासका उपयोग नहीं ॥ तदुक्तं ॥ "ब्रह्म
ण्यज्ञाननाशाय वृत्तिव्याप्तिरपेक्षिता ॥ स्वयंप्रका
शरूपत्वान्नाभासउपयुज्यते इति" ॥ अर्थयह ॥ ब्र
ह्मविषे अज्ञाननाशार्थ वृत्तिव्याप्तिकी अपेक्षाहै ॥
औ ब्रह्म स्वयंप्रकाशरूप होनेतें तहां आभासका
उपयोग नहीं इति ॥ यातें ब्रह्मकूं दृश्यात्ति होवे
नहीं ॥ सो अहं ब्रह्मयावृत्तिसे गम्य क्या वस्तु है॥
या जिज्ञासाकें हुवे कहेहै ॥ तुरीयमिति ॥ जाग्र
दादि तीनोंवस्थाविषे वाविश्वादितीनोंविषे अथवा
विराटआदितीनोंविषे जो अनुस्यूतचेतनमात्रहै ॥
ताका नाम तुरीय है ॥ तदुक्तं ॥ "सत्वाज्जागरणं
विद्याद्रजसा स्वप्नमादिशेत् ॥ प्रस्वापंतमसाजंतो
स्तुरीयंत्रिषुसंततमिति ॥ १ तथाच ॥ यदिजाग

रितप्रभृति त्रितयं परिकल्पितमात्मनिमूढ धिया॥ आभिधानामिदंतद पेक्ष्यभवेत्परमात्मपदस्य तुरीय मिति ॥ तथाच ॥ विराट् हिरण्यगर्भश्च कारणंचे त्युपाधयः ॥ ईशस्य यस्त्रिभिर्हीनं तुरीयं तत्पदं विदुः " इति ॥ अर्थयह ॥ प्राणिकूं सत्वतें जाग्रत रजसें स्वप्न तमसें सुषुप्ति होवे है ॥ तीनोमें निरंत र व्यापकूं तुरीय जाने इति ॥ जब मूढ बुद्धि कर के आत्माविषे जाग्रदादि तीन कल्पि जावे है ॥ तब तिनोकी अपेक्षा करि परमात्मपदका तुरीय एसा नाम होवे है इति ॥ औ विराट हिरण्यगर्भ औ अव्याकृत ये ईश्वरकी तीन उपाधि है तासें र हित जो चेतन मात्र ताकूं तुरीय पद विद्वान् जान ते है इति॥तात्पर्य यह तत्पद औ त्वंपदके लक्ष्या र्थका नाम तुरीय है ॥ सो वृत्तिगम्य जो तुरीयआ नंदरूप प्रकाशरूप निष्प्रपंच अपरिच्छेद्य नित्य परंब्रह्महै सो मैंहू इति ॥ ३ ॥ इति श्रीसुबोधनो डुपाभिधटीकायांबोधाख्यप्रथमोद्देशः ॥ १ ॥

पूर्व तृतीयश्लोकमें ज्ञेय वस्तुका प्रतिपादनकिया तहां ज्ञेयतत्वके ज्ञानहुवेबी विश्वके विद्यमानहु या अनर्थकी निवृत्ति संभवेनहीं ॥ याशंकाकेहु वे जगतकूं ज्ञान निवर्त्यत्वसें मिथ्यात्व दिखा वताहुवा अब परमार्थतत्वका याश्लोकसें आचा र्य प्रतिपादन करेहै ॥ यद ज्ञानतो भातीति ॥

यदज्ञानतो भाति विश्वं स मस्तं विनष्टं च सद्यो यदा त्मप्रबोधे ॥ मनोवागती तं विशुद्धं विमुक्तं परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ४ ॥

जिस ब्रह्मकें अज्ञानते सारा विश्वप्रतीति होवैहै ॥ औ जिस प्रत्यगभिन्न ब्रह्म स्वरूपके ज्ञानहुवे सद्य विनाश होवेहै ॥ औ जो मनवाणितें अतीतहै औ विशुद्धहै विमुक्तहै ॥ सो नित्य परं ब्रह्ममेहूं इति पदार्थः ॥ टीका ॥ जिस ब्रह्मके विशेषरूपसें अज्ञानतें भूत भौतिक स्थावर जंगम सारा नामरूप क्रियात्मक विश्व भासताहै ॥ इहां जगत् प्रतीतिका कारण अज्ञान कहनेसें प्रधान परमाणु आदिक अन्यमतों अभिमत कारणोका निरास किया ॥ औ कोइ कहे श्रुति शास्त्रोंते शुद्ध ब्रह्म कारण सुनियतहै ॥ तहां सुनो ॥ जहां ब्रह्म कारण कहाहै ॥ तहांभी अज्ञानकी अपेक्षासें कहाहै ॥ काहेतें शुद्ध ब्रह्म असंगहै ताकेविषे कार्यकारणभाव संभवे नहीं ॥ यातें अज्ञानही मुख्य कारणहै ॥ तदुक्तं ॥ " अस्य द्वैतें

द्र जालस्य यदुपादनकारणं ॥ अज्ञानं तदुपा श्रित्य ब्रह्म कारणमुच्यते ॥ अज्ञानमेवास्य हि मूलकारणमिति ॥ अज्ञानाद्ब्रह्मणो जातआका शोबुद्बुदोपमइति॥आत्माज्ञानाज्जगद्भाति ॥ इत्या दि शास्त्रवचनोंसें अज्ञानही कारण कहाहै ॥ इ नोंका अर्थ यहहै॥ इस इंद्रजाल उपमेयद्वैत प्रपं चका जो उपादानकाण अज्ञानहै ॥ ताका आ श्रयकरके ब्रह्मकूं कारण कहतेहै इति ॥ इस सं सारचक्रका मूल कारण अज्ञानहीहै इति ॥ औ ब्रह्मके अज्ञानतें बुद्बुदोपम, आकाश उत्पन्नभ या इति ॥ औ आत्माके अज्ञानसें जगत भास ताहै इति ॥ औ देशकालादि तथा भूतन विषे कारणता औ देहादिकविषे कार्यता जो प्रती ति होवेहै ॥ सोबी स्वप्नके पदार्थन गत कारण कार्यताकी न्याई संपूर्ण विश्व अविद्या कल्पित है ॥ तदुक्तं ॥ "निद्राकल्पितदेशकालविषयज्ञा तादि सर्व यथा मिथ्या तद्वदिहापि जाग्रति ज गत्स्वाज्ञानकार्यत्वतः" इति ॥ याका अर्थ यहहै ॥ जैसें स्वप्नविषे निद्राकल्पित देशकालविषय ज्ञातादि त्रिपुटी मिथ्या प्रतीति होवेहै ॥ तैसें इ स जाग्रत्विषेबी सर्व आत्माके अज्ञानका कार्य हो नेतें सारा जगत् मिथ्या प्रतीतिहोवेहै इति॥ औ स्वप्नजाग्रत दोनोंविषे जो अल्पकालस्थायिता

औ बहुकालस्थायितारूप भेद प्रतीतिहोवेहै सो
बी अविद्यासें प्रतीतिहोवेहै ॥ औ शास्त्रकारोंने
स्वप्नकी प्रातिभासिकसत्ता औ जाग्रतपदार्थन
की व्यवहारिक सत्ता कहिहै ॥ सो जगत्का
मिथ्यात्व जिज्ञासुकूं बोधहोवें ताके उदाहरण नि
मित्त सत्ताका भेद मान्याहै ॥ अन्य प्रयोजननहीं
॥ औ सिद्धांतविषे व्यवहारि सत्ताका अंगीकार
नहीं ॥ किंतु चेतनकी परमार्थसत्ताहै ॥ तासें भि
न्नसारे अनात्म पदार्थनकी प्रतिभासिकसत्ताहै॥
काहेतें सिद्धांतविषे दृष्टि सृष्टि वादहीं प्रधानहै ॥
दृष्टिरेव सृष्टि वा दृष्टि अनुसृष्टि कहिहै ॥ औ कोइ
कहें वेदविषे क्रमसें सृष्टि सुनियतहै ॥ तहां सुनो
सृष्टिके क्रम कहनेमें वेदका तात्पर्य नहीं किंतु
जगत्का किसि तरहसें अध्यारोपकरके जिज्ञा
सुकूं अद्वैत ब्रह्म जनावनेविषे अथवा क्रमसें विप
रीतलय चिंतन करायके अद्वैतविषे चित्तस्थापन
करावनेविषे तात्पर्यहै ॥ सृष्टिके क्रमकथनमे अ
भिप्रायनहीं ॥ औ जगतउत्पत्यादिके ज्ञानसें प्र
योजनबी सिद्धहोवेनहीं ॥ तदुक्तं ॥ " नहिसर्गा
दिज्ञानेन किंचित्प्रयोजनंश्रुतं ॥ अद्वीयब्रह्मात्म
तात्रज्ञानंहि प्रयोजनवदिति " ॥ याकाअर्थ यहहै
॥ सर्गादि ज्ञानसें किंचित्बी प्रयोजन सुनानहीं ॥
किंतु अद्वयब्रह्मात्मताका ज्ञानही प्रयोजनवानहै

इति यातें यह साराद्वैत प्रपंच रज्जुसर्पकी न्याइ प्रतीतिमात्रहै ॥ तात्पर्य यहकि अनिर्वचनीय रूपप्रतीति होवे है ॥ औ रज्जुसर्प वा शुक्तिरजतादि भ्रमस्थलविषे कोइ सत् ख्याति कोइ असत् ख्याति कोइ आत्मख्याति कोइ अन्यथाख्याति मानेहैं ॥ तिन पांचों मतनका सिद्धांत ग्रंथनविषे खंडन किया है ॥ परिशेष अनिर्वचनीय ख्याति ही मानी है ॥ यातें जगत् शुक्तिरजतकी न्याइ अनिर्वचनीय है ॥ औ ताका ज्ञानबी अनिर्वचनीय है ॥ सत् असत्से विलक्षणका नाम अनिर्वचनीय है ॥ तात्पर्य यह कि अधिष्ठानके ज्ञानसे पूर्वजाकी प्रतीति होवै औ बाध्य योग्य होवैं सो पदार्थ अनिर्वचनीय कहिये है ॥ यातें यह जगत् अविद्याका परिणाम औ चेतनका विवर्त है ॥ ताका आश्रय अधिष्ठान औ भावाभावका द्रष्टा एकचेतनहींहै ॥ यहश्लोकके प्रथम पादसे विश्व प्रतीतिका हेतु कहा ॥ अब द्वितीयपादसें ताकी निवृत्तिका हेतु आचार्य कहेहै ॥ विनष्टमिति ॥ जिस ब्रह्मका विशेष रूपसें जिसकालविषे बोध हुवे तिसिहिकालमें विश्वका समूल विनष्ट कहिये विनाश होवे है ॥ जो कोइ कहे प्रलयविषे विश्वका नाश सुनियत है ज्ञान करके क्या है ॥ तहांसुनो ॥ यद्यपिप्रलयविषे जगतकी निवृत्ति क

हि है ॥ तथापि ताकी अत्यंत निवृत्ति होवे न
ही ॥ किंतु, नित्यप्रलय निमित्तिकप्रलय कल्पप्र
लय औ महाप्रलयविषे जगत्की कारणविषे ल
यरूपनिवृत्ति होवे है ॥ फेरबी जब जीवनके
प्राक् कर्मफल देनेकूं सन्मुख होवे तब बीजतें
अंकुरकी न्याइ वा ददुर उजिवनकी न्याइ सृष्टि
होवे है ॥ औ नाना क्लेशप्रतीति होवे है ॥ औ
ज्ञानसें संसारकी अत्यंत निवृत्ति होवे है ॥ जांकी
फेर उत्पत्ति होवे नहीं ताका नाम अत्यंत निवृ
त्ति है ॥ कारणसहित जगत्की निवृत्ति हुया
फेर जन्मादि संसार होवे नहीं ॥ साज्ञानसेंही हो
वे है ॥ तदुक्तं ॥ " ऐक्यज्ञानं यदोत्पन्नंमहावाक्येन
चात्मनोः ॥ तदाविद्यास्वकार्यैश्वनश्यत्येवनसंश
यः" इति ॥ याका अर्थ यह है ॥ जब महावाक्यसें
ब्रह्मात्माका ऐक्यत्व, ज्ञान उत्पन्न होवे ॥ तब स्व
कार्यों करके सहित अविद्या नाश होवे है याके
विषे संशय नहीं इति ॥ ननु विचित्र शक्तिमान
कर्म होनेतें किसिकर्मविशेषसेंहि अविद्याकी नि
वृत्ति होवेगी क्लेशसाध्यज्ञानायास करके क्या है ॥
या शंकाका समाधान यह है, कर्म अविद्याका वि
रोधि नहीं यातें कर्मसें अविद्याकी निवृत्ति संभ
वे नहीं ॥ तदुक्तं ॥ " अविरोधितयाकर्मनाविद्यां
विनिवर्तयेत्॥ विद्याऽविद्यांनिहंत्येवतेजास्तिमिरसं

घवदिति ॥ याका अर्थ यह है ॥ कर्म अविद्या अ
विरोधितासें अविद्याकी निवृत्ति नहि करे है ॥
औ विद्याअविद्याकी विरोधि होनेते नाश करे है।
जैसें तिमिर समुदायकूं प्रकाश नाश करेहे इति॥
इहां कर्मके निषेधसें विकल्पवादकाबी निषेध कि
या ॥ तात्पर्य यहाकि कोइ पंचप्रकारकी सामग्री
के अभावते आत्माविषे संसारबंध सत्य कहेहै ॥
औ तिस संसारबंधकी निवृत्ति ज्ञानसें होवे नहीं
किंतु कर्मसेंही निवृत्ति होवेहै ॥ एसें केवल कर्मसें
संसार अनर्थकी निवृत्ति मानेहैं ॥ औ कोइ एसें
कहेहै ज्ञान कर्म दोनो वेदविषे मोक्ष निमित्त कहाहै
॥यातें कोइ ज्ञानसंपादन करो अथवा कोइ कर्म सं
पादन करो विकल्पतें दोन निर्पेक्ष मोक्षका हेतुहै॥
सो केवल कर्म वा विकल्प दोनो वाद समीचीन न
हीं॥काहेतें कर्मकूं अविद्याका अविरोधि होनेतें प्र
त्युत संसारका साधक है॥औ ज्ञानकर्म दोना तुल्य
नहीं यातें विकल्पवादबी संभवे नहीं ॥ औ को
इ कर्मज्ञानका समुच्चयमोक्षका हेतु मानेहै सोबी
संभवे नहीं ॥ काहेते जो पदार्थ आपसमें विरोधि
नहीं होवेतिनदोनोंका समुच्चय बनेहै ॥ औ ज्ञा
नकर्म दोनों तेजातिमिरकी न्याइ विरोधिहै ॥ या
तें ताका समुच्चय संभवे नहीं॥ तदुक्तं॥ “ विद्यावि
रोधान्न समुच्चयो भवेदिति ॥ अर्थयह ॥ कर्म

का विद्यासें विरोध होनेंतें समुच्चय होवेनही इ
ति औ कोइ कहे श्रुति स्मृतिविपे बहुतस्थानमे
समुच्चय देखियतहै ॥ तहां सुनो ॥ जहां श्रुति
स्मृतिमे समुच्चय कहाहै ॥ तहां सम समुच्चयका
ग्रहननहीं ॥ किंतु क्रम समुच्चयका अंगीकारहै ॥
यह अर्थ उपनिपदभाष्य औ गीताभाष्यविपे ब
हुतस्थानोंमें आचार्यने प्रतिपादनकियाहै ॥ या
तें प्रथम अंतःकरणशुद्धि निमित्त पुरुप कर्म करें
चित्तशुद्धिहुवे कर्मकासंन्यास करके ज्ञान निमि
त्त यत्नकरे ॥ सो पूर्वस्पष्टकहाहै ॥ यातें समूल
जगत निवृत्तिका साधन केवल ज्ञानहै ॥ ननु
ज्ञानसें सविलास अज्ञानकी निवृत्तिहोवो तो
वी अज्ञानकूं चिरकालिक होनेतें ताकी जटित
निवृत्ति संभवेनहीं ॥ या शंकाका समाधान यह
है ॥ अज्ञानके विरोधि ज्ञानके उदयहुवे तिसि
कालमेंही अज्ञानका नाशहोवेहै ॥ जैसें गिरि
गुहाका अंधेरा चिरकालिकहै तोवी मसाल प्रका
सके किये सद्य निवृत्ति होवेहै ॥ तैसें चिरकालि
क अज्ञानवी ज्ञानसें ततकाल नाशहोवेहै ॥ तदु
क्तं ॥ " अज्ञानतोऽध्यासवशात्प्रकाशते ज्ञाने वि
लीयेतविरोधतः क्षणादिति " ॥ याका अर्थ यह
है ॥ संसार औ तत्संबंधी दुःखादि आत्मा
अज्ञनकृत अध्यास वशतें प्रतीतिहोवेहै ॥

तिस अज्ञानके विरोधिज्ञानके उदयहुवे क्षणमात्रमें विलयहोवेहै इति ॥ प्रसंगसे अध्यासका संक्षेप निरूपनकरेहै ॥ अधिष्ठानसें विषमसत्तावाला अवभास अध्यास कहियेहै ॥ सो अर्थाध्यास औ ज्ञानाध्यास भेदसे दोप्रकारकाहै ॥ तिनमें अर्थाध्यास अनेक प्रकारकाहै ॥ कहूं केवल संबंधमात्रका अध्यासहै ॥ कहूं संबंधि विसिष्ट संबंधीका अध्यासहै ॥ कहूं केवल धर्मका अध्यासहै ॥ कहूं धर्म विसिष्ट धर्मीका अध्यासहै॥ कहूं अन्योन्याध्यासहै ॥ कहूं अन्यतर अध्यासहै अन्यतराध्यासवी दोप्रकारकाहै ॥ एक आत्मामें अनात्म अध्यासहै ॥ दूसरा अनात्मामें आत्माध्यासहै ॥ इसरीतिसें अध्यास अनेक प्रकारका है ॥ तिनोंविषे उक्त लक्षण सर्वत्र समन्वयहै ॥ औ स्वरूपाध्यास संसर्गाध्यास भेदसे अध्यास दोप्रकारकाहै ॥ जैसें शुक्तिमें रजतका स्वरूपाध्यासहै ॥ तैसें आत्माविषे अनात्म पदार्थनका स्वरूपाध्यासहै ॥ तिसविषेवी अज्ञानके अध्यासकूं कारणाध्यास कहेहै ॥ तिस अज्ञानके अध्यासें अन्य निमित्तनहीं किंतु अपने अध्यासमें आपहि निर्वाहक कहाहै ॥ औ अहंकारादि पदार्थनके अध्यासकूं कार्याध्यास कहेहै ॥ यह दोनों स्वरूपसें आत्माविषे कल्पितहै ॥ औ जाका

स्वरूपतो पूर्वहीं सिद्धहोवें औ संबंधमात्र अनिर्वचनीय उपजें सो संसर्गाध्यास कहियेहै॥ जैसें दर्पणमें मुखका अनिर्वचनीय संबंध उपजेहै ॥ तैसें चेतनरूप आत्माके संबंधका अनात्मारूप अहंकारादिकविषे अध्यासहै ॥ स्वरूपसेनहीं ॥ औ अनात्मपदार्थनका कोइ केवल धर्माध्यास होवेहै ॥ कोइ धर्मसहीत धर्मीअध्यास होवेहै ॥ इंद्रियोंका केवल धर्माध्यास होवेहै ॥ औ अंतःकरणका धर्मसहित धर्मीअध्यास होवेहै ॥ देहादि आंतर पदार्थनमें जैसें अहंताध्यासहोवेहै ॥ तैसें बाह्य स्त्रीपुत्रादिकनमें ममत्वाध्यास होवेहै ॥ एंहि संसारबंधहै ॥ ताकी कारणसहित निवृत्ति ज्ञानसें होवेहै ॥ औ कोई ऐसें कहेकि सो ज्ञान किसकालविषे होवेहै ॥ तो ताका नियमनहीं ॥ काहेतें कि उत्तम संस्कारवालेकूं शीघ्रहीं ज्ञानहोवेहै ॥ जैसें जनकराजाकूं बगिचेमें वृक्षारूढ अदृष्ट सिद्धोंके स्वानुभवगीतवाक्यनके श्रवण मात्रसें ज्ञान हूवाहै ॥ ऐसें पट्वांगरहुगण यदुराजासें आदिदे अनेक पुरुषनकूं श्रवण मात्रसें सद्य ज्ञान हूवाहै ॥ औ उत्तम पुरुष ब्रह्मविद गुरुके उपदेश पायके उपपत्तिसें सर्वत्र गुरुबुद्धिसें हे यांशकूं त्यागिके उपादेय गुणोंका ग्रहन करेहै ॥ जैसें दत्तात्रि मुनिने पृथ्वी गगन पवन

अनल चंद्र रवि कपोतादि चतुर्विंशविषे गुरु बुद्धिसें गुनोका ग्रहन किया औ अवगुनोंकूं त्याग किया है ॥ औ जाके चित्तविषे कोइ प्रतिबंध होवे ताकूं साक्षात् ब्रह्मवित्तम गुरुके उपदेशसें बी जटितबोध होवे नहीं ॥ जैसें निदाग राजाकूं ऋभु रिषीनें दशसहस्र वर्ष पर्यंत तत्वका उपेशाकिया तोबी तत्काल ज्ञानहुवा नहीं ॥ किंतुजबनरककाभय दिखाया तबतिसिनें स्वप्नविषे यमपुरी देखिके फेरजागिके गुरुउपदेशकूं संपादनकीया यहगाथा ग्रंथांरतरमें प्रसिद्ध है ॥ यातें किसि प्रतिबंधकेहुवे सम्यज्ञानहोवैनेहीं ॥ सो प्रतिबंध तीनप्रकारकाहै ॥ भूत भावी औवर्तमान ॥ तामें वर्त्तमान विषयासक्ति प्रज्ञामांद्यता कुतर्क औ दुराग्रह याभेदतें च्यारिप्रकारका है ॥ तिनोंकी निवृत्तिहुया ज्ञानहोवैहै ॥ तदुक्तं ॥ "कुतस्तज्ज्ञानमितिचे त्तद्धिबंधपरिक्षयात् ॥ असाव पिचभूतोवाभावी वा वर्तते ऽथवा ॥ १ ॥ प्रतिबंधोवर्तमानो विषयासक्तिलक्षणः ॥ प्रज्ञामांद्यं कुतर्कश्च विपर्ययदुराग्रहः " इति ॥ याकाअर्थयहहै ॥ सो तत्वज्ञान कब होवे है तहांसुनो सो ज्ञानप्रतिबंधके क्षयतें होवैहै॥ सोवी भूतवा भावी अथवा वर्तमानहै॥तामें वर्त्तमान प्रतिबंधबी विषयासक्ति लक्षण औ प्रज्ञामांद्य औ कुतर्क औ वि

पर्यय दुराग्रहहै इति ॥ भूतप्रतिबंध जैसें भिक्षु कूं महिषीस्नेहसें तत्वकाबोध नहि भया ॥ फेर ध्यानसें प्रतिबंधके क्षयहुवे तत्वकूं जानताभया यहगाथा प्रसिद्धहै औ भावी प्रतिबंधके हुयाइति देहमें ज्ञानहोवेनहीं किंतु सोयोग भ्रष्टहोवेहै ॥सो वासिष्ठवागीतामें योगभ्रष्टका प्रसंग प्रसिकहाहै ॥ सो कर्म शेषवा काम शेषरूप भावि प्रतिबंध के क्षय हुवे अन्य जन्मविषे ज्ञान पायके मोक्ष होवेहै ॥ जैसें वामदेववा भरतकूं भयाहै ॥ औ वर्तमान चतुर्विध प्रतिबंध यथोचित उपायोंसें निवृत होवेहै ॥ वैराग्य शमादिके संपादनसें विषयासक्ति निवृत्त होवे है बुद्धिमांद्यताकुतर्क औ दुराग्रह ये तीनो यथाक्रम श्रवण मनन औ निदिध्यासनसे दूरी होवे है ॥ यातें ज्ञान विषे कालकी अपेक्षा नहीं किंतु ताके अधिकार की अपेक्षा है ॥ औ अधिकारसें विना तत्व उपदेश करनावी व्यर्थ है ॥ तदुक्तं ॥ "अकालेहि यथा वृष्टिर्यथादीपोदिवाकरे ॥ अन्नंयथा त्वजीर्णे स्याद्वित्तं वापिगतस्पृहे ॥ अधिकारं विना तद्वद्विफलं ब्रह्मबोधनमिति" ॥ याकाअर्थ यहहै ॥ जैसें अकालवृष्टिहोवे औ सूर्यके आगेदीपककरे ॥ औ अजीर्णकूं अन्नदेवैं आ निस्पृहकूं पदार्थदेवें सो विफलहै तैसें अधिकारविना ब्रह्मबोधनवी विफ

लहोवेहै इति ॥ या अभिप्रायतें दधिचिनें अश्वि
निकुमारोंकूं अधिकार विनाउपदेशनहि कीया ॥
फेरअधिकारपायके आया तबउपदेश किया ॥
औ अधिकारसें विनाइंद्रकूं दधीचिनेउपदेशकी
यातासें बडाउपद्रवभया यहगाथाउपनिषदोंमें त
था ताके व्याख्यानरूप आत्मपुराणके चतुर्थाध्या
यमें प्रसिद्धहै ॥ औ सोइ इंद्र तपकरके चतुर्वेरि
ब्रह्मापास जायके तासें तत्वोपदेशपायके कृतार्थ
भया ॥ औ विरोचन अधिकार रहितहोनेंते पि
तामहसें परमतत्वकूं नहिपाया ॥ किंतु देहात्म
बुद्धि हि करता भया ॥ यातें जाकूं तत्वबोधकी
इच्छाहोवे सो प्रथम दैविसंपत् संपादनकरे औ आ
सुरी संपदसर्वथा परित्यागकरे॥तिस देवी आसुरी
दोनों संपदाके लक्षण गीताके षोडशेध्यायमें भ
गवानने विस्तरकहाहै ॥ तिसदैवी संपद्विषेत्री स
त्यदया शुचिये मुख्यगुनहै ॥ आसुरी संपद्विषे
कामक्रोध औ लोभयें तीनमुख है ॥औ वाह्यजोवे
दाध्यन यागादिकरेहै ॥ औ अंतरसत्यदयादिसें
शून्यहै ॥ सोवीराक्षसोंके तुल्यहै ॥ काहेतें वेदाध्य
नादिक राक्षसों विषेवी सुनियतहै॥तदुक्तं ॥ "अ
ग्निहोत्राणिवेदाश्च राक्षसानां गृहे गृहे ॥ सत्यंदया
च शौचंचराक्षसानां नविद्यते" इति ॥ याकाअर्थ
यहहै ॥ अग्निहोत्र औ वेदाध्यनपाठादितो राक्ष

सोंके गृहगृह विषे होवेहै ॥ परंतु सत्य दया औ शौच तिनो विषेनहिहै इति ॥ यातें यहजनाया कि आसुरी राक्षसीसंपदावालाहीं असुर औ राक्षस है ॥ शरीर मात्रनहीं ॥ काहेतें देहतो प्रल्हाद बलि आदिकोंकावी तिनोंके कुलमें भयाहै परंतु महाभागवत औ तत्वनिष्ठभयेहै ॥ यातें मनहीं दैत्यदेवता मनुष्यहै ॥ औ मनहीं सर्वधर्मका धारक औ बंधमोक्षका कारण शास्त्रोमें कहाहै ॥ यातें यह नियमहै सम्यक् तत्वज्ञानदैवी संपदावानकूं होवेहै आसुरी संपदावालेकूं होवेनहीं ॥ वर्णाश्रम स्त्री पुरुष वय कालकर्मदेशका नियम नहीं ॥ औ जिसकूं ईश्वर गुरु श्रुति औ स्वरूपासें ज्ञान होवेहै ॥ ताकाशीघ्रहीं समूल संसार निवृत्तहोवेहै ॥ याकेविषे संशय नहि करना ॥ काहेतें संसार कछु पदार्थ नहीं मिथ्या भ्रांति मात्र है ॥ अधिष्ठानरूप अद्वय ब्रह्मविषे पूर्वहि कौरवकुलकी न्याइ उपमर्दित है ताका ज्ञानसें उपचार मात्र नाश कह्या जावेहै ॥ तदुक्तं ॥ "नित्यबोधपरि पीडितं जगद्विभ्रमं नुदति वाक्यजामतिः ॥ वासुदेवनिहतं धनंजयो हंति कौरवकुलं यथेति" ॥ याका अर्थ यहहै ॥ जैसें वासुदेव करके हनन हुवे कौरवकुलकूं अर्जुनने हनन किया ॥ तैसें नित्य बोधस्वरूप ब्रह्मसें [illegible]

हांवाक्यजन्य ज्ञाननाश करे हैं इति ॥ यह श्लोकके पूर्वार्द्धसें विश्वप्रतीका हेतु औ ताकी निवृत्तिका उपाय कहा ॥ अब उत्तरार्धसें अवशेष वस्तु आचार्य दिखावेहै ॥ मनोवागतीतमिति ॥ सोवस्तु मन वाणितें अतीत कहिये रहितहै ॥ सो"यन्मनसानमनुते । यद्वाचाऽनभ्युदितं । यतो वाचोनिवर्तंते अप्राप्य मनसा सह" इत्यादि श्रुतियों विषेबी कहाहै ॥ श्रुत्योंका अर्थ यहहै ॥ जिस ब्रह्मकूं लोक मन करके मननका विषय करि नहीं शकते इति॥औ जा ब्रह्मकूं वाणिसे नहीं कथन करि शकते इति॥औ जाकूं मन सहितवाणि न पायके जिसतें निवृत्त होवेहै इति ॥ यातें ब्रह्ममन वाणिका विषय नहीं ॥ औ "यन्मनसाध्यायति तद्वाचा वदति" इस न्याय करकेबी जाका मनसें पुरुषध्यान करहे ताकावाणिसें कथन करे है ॥ ब्रह्मध्यानका विषय नहीं याते कथनका बी विषय नहीं ॥ औ जाति गुणक्रिया संबंध वाला पदार्थ वाणिका विषय होवे है ॥ ब्रह्म जात्यादिसें रहित है ॥ यातेंबी वाणिका विषय नहीं॥औ मनवाणिका व्यापारबी जिसे चेतन ब्रह्म करकेही सिद्ध होवे है ॥ यातेंबी सो मनवाणिका विषय नहीं ॥ सो "येनाहुर्मनोमतं। येन वागभ्युद्यते" ॥ इत्यादि श्रुति विषे प्रसिद्ध कहा है

॥ याका अर्थ यह है ॥ जिस ब्रह्मकरके मन मन
न करनेमे समर्थ होवे है एसे ब्रह्मविद् कहते है
इति ॥ औ जिस करके वाणि प्रकाशत्ति हैं इति
॥ औ कोइएसें कहै जो " मनसैवेदमवाप्तव्यं ॥
तंत्वौपनिषदंपुरुषं" ॥ इत्यादि श्रुत्योंसें ब्रह्म मन
करके प्राप्तव्य औ पुरुष कहिये परमात्मा उप
निषद् गम्य सुनियत है ॥ तिन श्रुत्योंसें विरो
ध होवेगा ॥ तहां सुनो ब्रह्म ज्ञानविषे आवरण भं
गमात्र वृत्तिका उपयोग होने ते मन करके प्राप्त
व्यता कही है ॥ ब्रह्म मनका विषय है या अर्थ
कहनेमें श्रुतिका तात्पर्य नहीं ॥ तैसें वेदवाक्यवी
ब्रह्मकूं लक्षणा वृत्तिसें बोधन करे है सक्तिवृत्तिसें
नहीं यातें वाणिका विषय ब्रह्म होवे नहीं ॥औ
श्रुतिसेंवी विरोध नहीं ॥ तात्पर्य यह है ॥ अंतः
करण औ शब्दकी दोदो वृत्ति है ॥ फल व्याप्ति
औ वृत्ति व्याप्ति येदो वृत्ति अंतःकरणकी है ॥ ज
हां मनका ब्रह्मविषयतामें निषेध किया है ॥ तहां
फल व्याप्तिका निषेधहै ॥ औ मनवा बुद्धिकरके
गम्य ब्रह्म जहां कहा है ॥ तहां वृत्तिव्याप्ति मात्र
आवरणभंग निमित अंगीकार करी हैं ॥ औ ज
हां शब्दका निषेध कीया है ॥ तहां शक्तिवृत्तिका
निषेध है ॥ औ शब्दसें ज्ञेयता कहि हैं तहां ल
क्षणा वृत्तिका ग्रहन है ॥ यातें श्रुत्योंका आपसे

में विरोध नहीं ॥ औ ब्रह्ममनवाणिका विषय वा नहीं ॥ फेरसो ब्रह्म कैसाहै ॥ विशुद्धं कहिये विशेष करके शुद्ध है ॥ अर्थ यहकि माया अविद्या औ ताके गुणदोषतें रहित है ॥ औ विमुक्तं कहिये विशेष करके मुक्त है ॥ अर्थ यहकि सदा मुक्तहै ॥ औ कोइ कहे तब बंधप्रतीतिक्युं होवे है ॥ तहां सुनो मिथ्या बंधमोक्ष मूढपुरुष स्वबुद्धिकृत दोषारोप करेहै ॥ तदुक्तं ॥ "बंधश्चमोक्षश्चमृषैव मूढाबुद्धेर्गुणंवस्तुनिकल्पयंति ॥ दृगावृतिंमेघकृतां यथारवौयतोद्वयासंगचिदेतदक्षरमिति ॥" याका अर्थ यह है ॥ बंध औ मोक्ष दोनों मिथ्याहि बुद्धिके गुण मूढ लोको वस्तुविषे कल्पन करेहैं ॥ जैसें लोकमेघकृत नेत्रोका आवरण सूर्यविषे कल्पे है ॥ तैसें वस्तुविषे कल्पे है ॥ यातें ब्रह्म अद्वय असंग चेतन अविनाशी रूपहै इति ॥ या कहनेसें यह जनायाकि कूटस्थ ब्रह्मका सदा अभेदहै ॥ तिस विषे बंधमोक्ष ज्ञान अज्ञानकोइबी धर्म नहीं किंतु अज्ञानादि सप्त अवस्था अंतःकरण सहित आभ की कहि है ॥ बंधमोक्षबी तिनअवस्थाविषे हैं ॥ तदुक्तं ॥ "अज्ञानमावृतिस्तद्वद्विक्षेपश्चपरोक्षधीः ॥ अपरोक्षमतिःशोक मोक्षस्तृप्तिर्निरंकुशा ॥ १ ॥ सप्तावस्था इमाः संति चिदाभासस्य तास्वि मौ बंधमोक्षौ स्थितौतत्र तिस्रो बंधकृतःस्मृताः

इति ॥ " याकाअर्थ यहहै ॥ अज्ञान आवरण तद्वत् विक्षेप चपुनः परोक्षज्ञान अपरोक्षज्ञान शोकनिवृत्ति औ निरंकुशातृप्ति ॥ येसप्तअवस्था चिदाभासकी हैं तिनों विषे यह बंध मोक्ष दोनों स्थितहै ॥ औ तिनसप्तोंमें आदि तीनबंधकी हेतु सुनियत हैं इति ॥ मैं अद्वयब्रह्मकूं नहि जानुहुं या व्यवहारका हेतु अज्ञानहै ॥ ब्रह्मन अस्ति न भाति या असत्त्वापादक औ अभानापादक दोनों अंशका नाम आवरणहै ॥ औ मे कर्त्ताभोक्ता संसारीहूं या भ्रांतिकानाम विक्षेपहै॥ ये तीन बंधकी हेतुहै ॥ औ ब्रह्म अस्ति या ज्ञानका नाम परोक्षज्ञानहै ॥ तासें ब्रह्म नास्ति इस आवरणांशकी निवृत्ति होवेहै ॥ औ ब्रह्म मे हूं या ज्ञानका नाम अपरोक्षज्ञानहै तासें सारी अविद्या जाल नाश होवेहै ॥ औ मेरे विषे जन्मादि संसार नहीं या निश्चयका नाम शोक नाशहै औ मैं कृतकृत्यहूं प्रापणीय पायाहूं या हर्षविशेषका नाम निरंकुशा तृप्तिहै ॥ सो शोक नाश औ परम सुखकी प्राप्तिहीं मोक्षहै ॥ इसरीतिसें बंध मोक्ष कल्पना बुद्धि सहित आभासविषे है ॥ सा स्वप्नकी न्याइ मिथ्या अविद्या कृतहै॥ जैसें किसी राजाकूं स्वप्नभया ताके विषे जान्या कि अन्य किसिने मेरा राज्यलेलीया मैं राज्यते

भृष्ट होइ देशांतरमें गया तहा भिक्षा ते जीवन करुंहूं तहांबी दुर्भिक्ष हुवा तब क्षुधाके मारे कि सि राजाके बगीचेमें चौर बुद्धिसे फल तोडा त व तहां रक्षकने पकडके कंटक वृक्षसें वांध्या फेर किसि दयालुने छोडा या फेर स्वराज्य वि पे स्थापन किया ॥ जब जागि देख्या तब जा न्या कि न किसिनें बंध्याथा न किसिनें छोड्याहै ॥ में ज्युकात्युं सदा स्थितहुं ॥ तैसें अविद्या रूप निद्रा विषे सारी कल्पनाहै ॥ परमार्थ दृष्टिसें देखियें तो न कोइबंधहै नमुक्तहै न जन्मताहै न मरताहै ॥ तहांश्रुति ॥ "न निरोधो न चोत्पत्तिर्नब द्धो नच साधकः ॥ न मुमुक्षुर्नवैमुक्त इत्येषा पर मार्थता" इति॥याका अर्थ यहहै ॥ वैनामनिश्चय करके न किसिका नाशहै न उत्तिचिहै न कोइबंधहै न साधकहै न मुमुक्षुहै न मुक्तहै यहपरमार्थताहै इति ॥ यातेंयह सिद्धभया ब्रह्मनित्यमुक्तहै ॥ एसा जगत्का अधिष्ठान मन वाणि अतीत सदा शुद्ध मुक्तस्वरूपजो नित्य परं ब्रह्महै सोइ मेंहूं इ ति संबंध ॥ ४ ॥

पूर्वे ब्रह्म वाणिका अविषयकहा तिस अर्थकूं स्प ष्ट करता हुवा समाधिस्थित जीवन्मुक्तों करके अ नुभूय तत्वका या पंचमें श्लोकसें आचार्य प्रति पादन करेहै ॥ निषेधे-कृते इति ॥

निषेधे कृते नेति नेतीति वाक्यैः समाधिस्थितानां यदा भाति पूर्णं ॥ अवस्थात्रयातीतमद्वैतमेकं परंब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ५ ॥

नेति नेति इनवाक्यनसें निषेध किये हुवे परिशेष जो तत्व समाधि स्थित जीवन्मुक्तोंकूं पूर्ण भान होवेहै ॥ औ अवस्था त्रयतें अतीत है ॥ औ अद्वैत एक वस्तु है ॥ सोई नित्य परंब्रह्म मैं हूं ॥ इति पदार्थः ॥ टीका॥नेति नेति इनवाक्यनसें सर्व दृश्यका निषेध कियेतें ही वस्तुका बोध होवेहै ॥ तात्पर्य यहहै ॥ वेद विषे ज्ञेय ब्रह्मके उपदेशका द्वार दो है ॥ एक विधिमुख दूसरा निषेधमुख ॥ प्रथम विधिमुखसें सोपाधिक ब्रह्मका बोध करके फेर वेद निषेध मुखसें ब्रह्मका बोध नकरे है ॥ औ जोकोइ कहे " सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म। "आनंदो ब्रह्म" इत्यादि विधिमुख वाक्य नसें बी शुद्ध वस्तुका बोध करियत है ॥ तहां सुनोसत्य ज्ञानादिक पदवी साक्षात् शुद्ध वस्तुका बोधक नहीं ॥ किंतु [illegible]

दुःख इन विरोधांशकी व्यावृत्ति पूर्वक लक्षणा वृत्तिसें ब्रह्मका बोधन करे है॥किंवा महावाक्यन विषे जैसें लक्षणा मानिहै ॥ तैसें सत्य ज्ञान आनंद पदकी लक्षणासेंही शुद्धका बोधन करेहै॥ मायाकी सत्ता औ चेतनकी सत्ता दोनो मिलके सत्य पदका वाच्य है ॥ औ निरपेक्षित सत्य लक्ष्यहै ॥ औ वृत्ति ज्ञान औ स्वयंप्रकाश रूप ज्ञान दोनो ज्ञान पदका वाच्या । औ स्वयंप्रकाश ज्ञान लक्ष्यहै ॥ औ प्रियमोदादि वृत्ति आनंद औ परम प्रेमका आस्पद सुख दोनो आनंद पदका वाच्य । औ वृत्ति भाग त्यागके केवल सुख लक्ष्यहै ॥ ऐसें सर्व वाक्यनमे जानि लेने॥ यातें विधि मुखका बी पर्यवसान निषेध मुखमें है ॥ सोनिषेधमुख बोधक वाक्यो यह हे" अर्थात आदेशो नेतिनेतीति । अस्थूल मनण्व म्हस्व मदीर्घ मलोहितमस्नेह मच्छाय मतमोऽवाय्वनाकाशमसंगम रस मगंध मचक्षुष्कम श्रोत्र मवागमनोऽतेजस्कमप्राणमसुखममात्रम नंतरमवाह्यमिति " अर्थ यहहै ॥ अध्यारोपानंतर नेति नेति एसा उपदेश है ॥ अक्षर ब्रह्मन घटकी न्याइ स्थूलहै ॥ न परमाणुकी न्याइ सूक्ष्महै ॥ न तृणकी न्याइ ह्रस्वहै ॥ न लताकी न्याइ दीर्घहै ॥ न अग्निकी न्याइ लोहितहै ॥ न

ठकी न्याइ स्नेहहै ॥ न कृष्णभूमिकी न्याइ छायाहै ॥ न अंधेरेकी न्याइ तमरूपहै । न वायु वत् गतिवानहै ॥ न सो शून्य आकाश रूपहै ॥ न संगवानहै ॥ न रसहै ॥ न गंधहै ॥ रसगंधके निषेधसें शब्द स्पर्श रूपकावी निषेध जानणा ॥ औ नचक्षुहै नश्रोत्रहै ॥ चक्षु श्रोत्रके निषेधसें त्वक् रसना घ्राणकावी निषेध जानना ॥ न वाक्है ॥ इहां वाक् इंद्रियके निषेधसें सर्व कर्मेंद्रियोंका निषेध जानणा ॥ नमनहै ॥ नतेज कहिये वुद्धिहै ॥ इहां मन वुद्धिके निषेधसें चित्त अहंकारकावी निषेध जानणा ॥ न मुख शब्द वाचि सूक्ष्म देह है॥नमात्रशब्दवाची कारणदेह अविद्या है॥न वाह्यहै न अंतरहै ॥ तात्पर्य यहहै ॥ सैंधव घंनवत् एक रस ब्रह्म होनेतें वाह्यवा अंतरकया जावेनहीं पूर्व कहे नेति नेति तहां दोनोनकार का अर्थ यहहै ॥ एक नकारसें मूर्तका निषेध दुसरे नकारसें अमूर्तका निषेधहै ॥ अग्नि जल औ पृथ्वी ये तीनभूत मूर्तहै ॥ औ वायु तथा आकाशये दोभूत अमूर्तहै ॥ अथवा स्थूल प्रपंच मूर्त्तहै ॥ औ सूक्ष्म प्रपंच अमूर्त्तहै अथवा स्थूल सूक्ष्म दोनो प्रपंच कार्य रूप होनेतें मूर्त्तहै औ कारण रूप अव्याकृत अमूर्तहै ॥ तिनमूर्ता ऽमूर्त दोनों का दोनोनकारसें निषेध कियाहै ॥ अथवा एक

नकारसें कार्य कारणरूप भावका निषेध है ॥ औ दूसरेसें निस्तत्व रूप अभावका निषेध किया है ॥ तदुक्तं। "नकार एको भावाख्यं स्थिरं यत्कार्यकारणं ॥ तं निषेधयति चान्योपि द्वयाभावमनात्मक मिति" ॥ अर्थ स्पष्टहै ॥ यातें ब्रह्म विधि मुख गोचर नहीं ॥ किंतु निषेधमुखसें ही वेद प्रतिपादन करेहै ॥ जा पदार्थका इदं एता दृश्य रूपसें बोध होवे सो विधि मुखका विषय होवेहै तेसाब्रह्मनहीं॥तदुक्तं॥"तदिदं तादृशमीदृशमेतावत्तावदिति चगन्न भवेत् ॥ ब्रह्म तदित्यवधेयं नोचेद्विषयो भवेत्परोक्षं चइति ॥ अर्थयह ॥ तत् इदंतादृश ईदृश एतावत् तावत् इन षट् विध शब्द प्रत्यार्थ जो नहिहोवे सो ब्रह्म एसे जानणा॥ अन्यथा ब्रह्मविषय रूपवापरोक्ष होवेगा सोसें भवेनहीं इति ॥ यहकहनेंसें ब्रह्मलौकिक षट् प्रमाणोका अविषय जनाया ॥ काहेते प्रत्यक्ष परोक्ष सारा दृश्य पदार्थ षट् प्रमाणोका विषय होवेहै ॥ एसाब्रह्म नहीं ॥ तथाहि ॥ प्रत्यक्ष अनुमान शब्दउपमान ॥ अर्थापत्ति औ अनुपलब्धि या भेदते प्रमाण षट्विधहै ॥ प्रमाणजन्यज्ञानका नाम प्रमाहै ॥ सोबी प्रत्यक्ष अनुमिति शाब्दी उपमिति अर्थापत्ति औ अभाव प्रमाया भेदसें षट् विधहै ॥ प्रत्यक्ष प्रमा श्रौत्र त्वाचचाक्षुपरासन औ

घ्राणजभेदसें पंच प्रकारकीहै ॥ तार्किक पष्टीमा
नस प्रमावी प्रत्यक्ष मानेहै॥तापंचपादिकाके अनु
सारीने अंगीकार नहिंकरेके पष्ठीशाब्दी प्रत्यक्ष
प्रमामानीहै ॥ अनुमान स्वार्थ परार्थ भेदसें दोप्र
कारका होनेतें अनुमिति प्रमाबी दोप्रकारकीहै॥
केवलव्याप्ति ज्ञानादिसें अनुमिति होवेसा स्वार्थ
है ॥ औ वाक्य प्रयोगसें होवेसा परार्थ है ॥तामें
परार्थानुमानके तार्किक प्रतिज्ञा हेतुदृष्टांत उपनय
औ निगमन ये पंचावयव मानें है ॥ औ वेदांत
विषे प्रतिज्ञा हेतु औ उदाहरण ये तीनवाक्य मा
न्याहै ॥ साध्य विसिष्टपक्षबोधक प्रतिज्ञा वाक्य
है लिंगबोधक हेतुवाक्य है ॥ औ हेतुसाध्यस
हचार बोधक उदाहरण वाक्यहै ॥ अयंपर्वतो व
न्हिमान् धूमात् यथामहानस इत्यादि॥ शाब्दी प्र
मा व्यवहारिक परमार्थि भेदसें दोप्रकारकी कहिहै
॥व्यवहारिकवी लौकिक वैदिक वाक्यभेदसे दोप्र
कारकी है ॥ औ शब्दबोधके सहकारी आकांक्षा
योग्यता तात्पर्य इनोका ज्ञान औ आसत्ति येच्या
रि मान्याहै ॥ औ सादृश्य ज्ञानजन्य ज्ञान उप
मिति प्रमाहै ॥ जैसें गौके ज्ञानसें गवयका ज्ञान
है ॥ सो सादृश्य ज्ञानसें होवेहै ॥औ तार्किक वि
धर्मज्ञानसें वीउपमिति मानेहै ॥ जैसें उष्ट्रविधर्म
खड्गमृगका ज्ञान होवेहै ॥ औ संज्ञाका संज्ञीमें वा

च्यताज्ञान उपमिति कहिहै ॥ औ संपादकज्ञान कूं अर्थापत्तिप्रमा कहेहै ॥ तिस संपादकके कल्पनका हेतुसंपाद्य ज्ञान उपमान प्रमाण कहिये है ॥ जैसें दिवाअभोजि पुरुष रात्रमें भोजनकरे है ॥ तहांस्थूलता रात्रभोजनका संपाद्यहै ॥ औ रात्रभोजन संपादकहै ॥ सो अर्थापत्तिवी दृष्टार्थापत्ति औ श्रुतार्थापत्तिभेदसें दोप्रकारकीहै ॥ औ अनुपलब्धि प्रमाणसें अभाव प्रमाहोवेहै ॥ निषेधमुखप्रतीतिका विषयवा प्रतियोगि सापेक्षप्रतीतिका विषयहोवेसो अभावकहियेहै ॥ येप्रमासहित षट्प्रमाणोका संक्षेपसे निरूपन किया ॥ तिनषट् प्रमाणोका विषय ब्रह्महोवे नहीं ॥ काहेतें "अशब्द मस्पर्शमरूपमव्ययं" इसश्रुत्युक्त ब्रह्मशब्द स्पर्शादितें रहित होनेतें प्रत्यक्ष प्रमाणका विषय नहीं ॥ औ "नैवचतस्य लिंगं" याश्रुत्युक्त ब्रह्मलिंगरहित होनेते अनुमानकावी विषय नहीं ॥ औ "यत्तद्दृश्यमग्राह्य मगोत्रं" याश्रुत्युक्त जात्यादि रहितहोनेतें ब्रह्मशब्दगोचर नहीं ॥ औ "नतत्समश्चाभ्यधिकंच दृश्यते। नतस्यप्रतिमा" इत्यादि श्रुत्युक्त सादृश्यके अभावतें उपमानकावी ब्रह्मविषय नहीं ॥ औ "न तस्यकार्यं करणंच विद्यते" याश्रुत्युक्त संपाद्यकार्यके अभाव अर्थापत्तिका विषयवी नहीं ॥ औ

"नित्यो नित्यानां" याश्रुत्युक्त ब्रह्मसदाभाव रूपहोनेतें अनुपलब्धि प्रमाणकाबी विषयनहीं॥ इसरीतिसें ब्रह्म षट्प्रमाणोंका विषयनहीं.॥ औ वेदांत ग्रंथनमें षट्प्रमाणोंकूं यद्यपि विचार विषे सहकारी मान्याहै ॥ तथापि ब्रह्म तिनोंका विषयनहीं॥प्रत्युत स्वसिध्यर्थ सो चेतनकी अपेक्षा करेहै॥सो "प्रमाणम प्रमाणं वा प्रमातरमपेक्षते। यतोमानानि सिध्यंति" इत्यादिवाक्यनसें शास्त्रोंमें प्रसिद्धकहाहै॥ यातें यह सिद्धभया ब्रह्म किसि प्रमाणका विषयनहीं॥औ वेदबी नेतिनेति वाक्यनसें अतद्व्यावृत्तिकरके बोधनकरे है ॥ जैसें सीतानें रामका ऋषिपत्नीयोंको बोधनकिया औ वृद्धने बालककूं सेना निषेधकरके राजा दिखाया तैसें श्रुतिदिखावेहै ॥ सो ब्रह्म किसपुरुषकरके अनुभव करियतहै ॥ याजिज्ञासाके हुयाआचार्य कहेहै ॥ समाधिस्थितानामिति ॥ समाधि स्थितानां कहियेसमाधि विषे स्थित जीवन्मुक्त पुरुषोंकूं पूर्णभानहोवेहै॥ तहांसमाधिका लक्षणदिखावेहै ॥ निरोध संस्कारकी प्रगटता हुयाचित्तका एकाग्रह परिणामसमाधि कहियेहै॥ सो संप्रज्ञात असंप्रज्ञात भेदसें दोप्रकारकीहै ॥ अहंकृतिसें विना ब्रह्माकार मनोवृत्ति संप्रज्ञात समाधि कहियेहै ॥ सो "ब्रह्माकार मनोवृत्ति" या श्रुतिमेंबी कहिहै

॥ औ प्रशांत चित्तवृत्ति असंप्रज्ञातहै ॥ सो
" प्रशांत वृत्तिकं चित्तं परमानंद प्रदीपकं " यां
श्रुतिमें कहिहै ॥ औ सविकल्प निर्विकल्प भेद
सेंवी समाधि द्विविधहै ॥ त्रिपुटी भान सहित
ब्रह्मविषे चित्तकी स्थिति सविकल्प समाधि क
हियेहै ॥ सोवी शब्दानुविद्ध औ शब्दाननुवि
द्ध भेदसें द्विविधहै ॥ औ त्रिपुटी भान रहित
अखंडाकार निर्वात दीपवत् चित्तकी स्थिति नि
र्विकल्प समाधि कहियेहै ॥ सो " ध्यातृध्याने
विहाय निवातस्थितदीपवत् ध्येयैकगोचरं चि
त्तं समाधि " इति ॥ " यथा दीपो निवातस्थः।
ध्यातृध्यानें परित्यज्य क्रमाद्ध्येयैकगोचरं नि
वातदीपवच्चित्तं " इत्यादि श्रुति स्मृति शास्त्रों
मे प्रसिद्ध कहिहै ॥ सो निर्विकल्प समाधिवी
अद्वैत भावनारूप औ अद्वैतावस्थान रूपया भे
दसे द्विविधहै ॥ अद्वैत ब्रह्माकार अज्ञात वृत्ति स
हित अद्वैत भावनारूपहै ॥ औ वृत्ति रहित अ
द्वैतावस्थान रूपहै ॥ प्रथम समाधि साधनरूप
दूसरी फलरूपहै ॥ औ सैंधव जलका औ तप्त
लोह परजल बिंदुवत् इत्यादि वृत्तिका दृष्टांत जा
नणा ॥ सो " सलिले सैंधवं यद्वत् ।'याशिला
वदवस्थिति । वृत्ति विस्मरणं सम्यक् । वासना
तृणपावकः " इत्यादि श्रुत्योंमेवी कहाहै ॥ तिस

निर्विकल्प समाधिविषे लय विक्षेप कषाय औ रसास्वाद ये च्यारि विघ्नके हुवे " लयेसंबोधये च्चित्तं विक्षिप्तं समयेत् । सकषायं विजानीयात् नास्वादयेत् " इन गौडपादाचार्योक्त उपायनसें दूरीकरै ॥ औ समाधिके साधन यम नियमादि अष्टयोग अंगहै ॥ सो आगे कहेंगे ॥ औ मुख्य साधन श्रवण मनन निदिध्यासनहै ॥ काहेतें निदिध्यासनकी परि पक्कावस्थाकूं समाधि कहे है ॥ श्रवणादिक पूर्व प्रतिपादन कियाहै ॥ औ श्रवणसें उत्तर मनन निदिध्यासन औ समाधि निमित्त अधिक यत्न करे ॥ तदुक्तं ॥ " श्रुतेःशतंगुणं विद्यान्मननं मननादपि ॥ निदिध्यासं लक्षगुणमनंतं निर्विकल्पकमिति ॥ अर्थ यह ॥ श्रवणतें शतगुन अधिक मनन औ मननसें लक्षगुन अधिक निदिध्यासन औ तासे अनंतगुन निर्विकल्प समाधिजाने " इति ॥ तिस समाधिविषे स्थित जीवनमुक्तकूं सो निषेधावधि परमानंदघन ब्रह्मका निरावरण परिपूर्णमान होवेहै ॥ तिससमाधिस्थितजीवन्मुक्तकूं स्थितप्रज्ञकहतें है ॥ ताके लक्षणगीताके द्वितीयाध्याय में " प्रजहाति यदाकामान् " इसश्लोकसें आदिलेके " विहाय कामान्यः सर्वान् " इसश्लोक पर्यंत भगवानने काहहै ॥ सो जानने तिनास्थि

त प्रश्न जीवन्मुक्तोंकूं परमानंदका लाभहोवे है ॥ तदुक्तं ॥ "संसिद्धस्य फलंत्वेतज्जीवन्मुक्तस्य योगिनः ॥ बहिरंतः सदानंदरसास्वादनमात्मनि। इति ॥ अर्थयह ॥ संसिद्ध जीवन्मुक्त योगीकूं जीवन्मुक्तिका फलविशेष यहहै बाह्याभ्यंतर सदाबुद्धिमें परमानंद रसका अनुभवहि होवेहै इति औ इतर जो अनुभूति विना केवल ब्रह्मके कथन करनेहारे ब्रह्मानंदका अभिमान करेहै सो व्यर्थहै ॥ तदुक्तं ॥ अनुभूतिं विनामूढो वृथा ब्रह्मणि मोदते ॥ प्रतिबिंबितशाखाग्रफलास्वादनमोदवदिति ॥ अर्थयह ॥ जलगत प्रतिबिंबित शाखाग्रफलके आस्वादनका मोदमकरादिकं माने ताकीन्याइ अनुभूति विना मूढ ब्रह्मविषे मोदक रेहै इति॥ औ दृढब्रह्म स्थितिसें विना संसारकी वी उच्छेदहोवे नहीं॥ तदुक्तं॥ "कुशला ब्रह्मवार्तायां वृत्तिहीनाः सुरागिणः॥ तेप्यज्ञानतया नूनं पुनरायांति यांतिच ॥ १ ॥ येहिवृत्तिं जहत्येनां ब्रह्माख्यां पावनींपरां ॥ तेतुवृथैवजीवंति पशुभिश्च समानराः" इति ॥ अर्थयह॥ ब्रह्मवार्तामें जो कुशलहै औ ब्रह्माकार वृत्तिसें हीनहै औ विषयोंमें रागीहै सोवी अज्ञानतासें निश्चय संसारमे जन्मेहै औ मरेहै इति ॥ औ जोइस ब्रह्मारूप परमपावन वृत्तिकी उपेक्षा करेहै सो पुरुषो

पशवोंके समान वृथाहि जीवतेहै इति॥ औ जो महात्मा प्रत्यक् प्रवणहै सो धन्यहै तदुक्तं ॥ ये हिवृत्तिं विजानंति ज्ञात्वापि वर्द्धयंतिये॥ तेवै सत्पुरुषा धन्या वंद्यास्ते भुवनत्रये इति ॥ अर्थ यह ॥ जो ब्रह्माकार वृत्तिके फलकूं जानेहै औ जो जानिके वृत्तिकी दृढता करेहै सो सत्पुरुषो धंन्यहै औ तीनोलोकनमे वंद्यहै इति ॥ अभिप्राय यह कि पराक्प्रवणता दुःखकी सीमाहै औ प्रत्यक् प्रवणता सुखकी सीमाहै ॥ तदुक्तं ॥ "समस्त दुःखसीमेयं यन्मनो दृश्यगोचरं ॥ समस्तसुखसीमेयं यन्मनो ब्रह्मगोचर मिति" ॥ यातें यहसिद्ध भयाकि समाधिस्थ पुरुषनकूं ब्रह्मका सम्यक् भान होवेहै ॥ औ कोइकहे तब उत्थानकाल विषे तोजाग्रदादि प्रपंचकाहि ताकूं भान होता होवेगा ॥ तहां कहेहै ॥ अवस्थात्रयातीत मिति ॥ काल विशेषका नाम अवस्थाहै ॥ सो अवस्था जाग्रदादि भेदसें त्रिविधहै ॥ स्वप्न सुषुप्तिसें भिन्न औ इंद्रिय जन्य ज्ञान तथा ज्ञानके संस्कारका आधार काल जाग्रत् अवस्था कहियेहै॥ औ इंद्रिय अजन्य विषय गोचर अंतःकरणकी वृत्तिका काल स्वप्नावस्था कहियेहै ॥ औ सुख तथा अज्ञान गोचर अविद्या वृत्ति काल सुषुप्ति अवस्था कहियेहै॥ जाग्रत् का व्यवहारसा

र त्रिपुटी यांसे होवेहे ॥ तीन पुटका नाम त्रिपु
टीहै ॥ पुटनाम अवयवका है ॥ अध्यात्म अधि
भूत औ अधि दैव येतीन मिलके त्रिपुटी होवेहै ॥
तदुक्तं "श्रोत्रमध्यात्ममित्याहुर्यथार्थं श्रुतिद
र्शिनः ॥ शब्दस्तत्राधिभूतं तु दिशश्चाधिदैवतं ॥
इत्यादि जानणे॥जैसें श्रोत्र अध्यात्म शब्द अधि
भूत औ दिशाधिपति देवता अधि दैव कहा ॥
तैसेंहि त्वगध्यात्म स्पर्श अधिभूत वायु अधिदै
व ॥ चक्षु० रूप० सूर्य० ॥ जिव्हा० रस० वरु
ण० ॥ घ्राण० गंध० अश्विनीकुमार० ॥ वाक्०
वक्ति० अग्नि० ॥ पाणि० आदान० इंद्र० ॥ पा
द० गति० विष्णु० ॥ उपस्थ० रति० प्रजाप
ति० ॥ गुद० मल त्याग०यम०॥ मन० मंतव्य०
चंद्र० ॥ बुद्धि० बोद्धव्य० विधि० ॥ चित्त० चेत
यितव्य० वासुदेव० ॥ अहंकार० अहंकर्तव्य०
रुद्र० येअध्यात्म अधि भूत औ अधि दैव रूप
जानने ॥ ये चतुर्दश त्रिपुटी जैसें जाग्रत्मेंहै ॥
तैसें अंतर मनो [illegible] त्रिपुटी [illegible] वें जानणी ॥

यंते सोऽध्यक्षः पुरुषः परः इति ॥ जैसें जाग्रदा
दि अवस्था त्रयसें साक्षी आत्मा भिन्नहै ॥ तै
सें तद्गतभोग्य भोक्तादीकनसेंबी भिन्नहै ॥ तहां
श्रुतिः ॥ त्रिषुधा मसुयद्भोग्यं भोक्ताभोगश्चयद्भ
वेत् ॥ तेभ्योविलक्षणः साक्षी चिन्मात्रोहं सदाशि
वः इति॥अर्थयह ॥ जाग्रदादि तीन वा चक्षुकंठ हृ
दय इन तीन धामविषे स्थूल प्रविव्यक्त औ आनंद
भोग्य औ विश्वतैजसप्राज्ञ ये भोक्ता॥औ सुख दुः
खका अनुभव रूप जो भोग होवेहै॥तासें विलक्षण
साक्षी चिन्मात्र सदाशिवरूप सोमैंहूं इति ॥इसरी
तिसें अवस्था त्रयातीत चेतनसाक्षी उत्थान काल
में विद्वानकूं स्मरणहोवे है ॥ समीप उदासीचेतन
औ तदनुकूल वृत्तिवान् होवे सो साक्षी कहियेहै॥
ननु साक्षी आत्मा तीन अवस्थातें अतीत हो
वो तोवी प्रतिशरीर विषे भिन्न भिन्न प्रतीति हो
ने तें नाना औ ब्रह्मसें भिन्नहोवेगा ॥ याशंका
केहुया ॥ जाग्रत् स्वप्न सुषुप्त्यादि प्रपंचंयत्प्रकाशते
तद्ब्रह्म " या श्रुत्युक्त जाग्रदादि प्रपंचका प्रकाश
क चेतन ब्रह्मरूपत्व औ " एकोवशि सर्व भूतां
तरात्मा" याश्रुत्युक्त सर्व भूतांतर एकात्मा ना
नात्व भेदरहित अव प्रतिपादन करेहै ॥अद्वैतमे क
मिति अर्थ यह सो प्रत्यगभिन्न एक अद्वैत स्वरू
प है॥ सो " एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" या श्रुतिमें

वी कहाहै ॥ इहां एक एव अद्वितीय इन तीन प
दनसें श्रुतिने सजातीयादि त्रिविध भेदका परि
हार किया है ॥ काहेतें सोत्रिविध भेद जडसा व
यव पदार्थनमें होवेहै ॥ चेतनमें नहीं ॥ जैसें वृक्ष
का वृक्षांतरसें भेद सो सजातीय भेद है ॥ औ
वृक्षका पाषाणतें भेद सो विजातीय भेदहै ॥ औ
स्वसाखा पत्रादिकनसें भेद सो स्वगत भेदहै ॥
एसें ब्राह्मणादिकनमेंवी जानना ॥ औ चेतन
ब्रह्मविषे तीनो भेद संभवे नहीं ॥ दूसरे सत्य व
स्तुके अभाव तें सजातीय भेदका असंभव है॥ त
दुक्तं ॥ सदंतरंसजातीय वैलक्षण्य विवर्जनादिति
॥ औ प्रति योगिके अभावते विजातीय भेदवी
संभवे नही तदुक्तं ॥ नास्यातःप्रतियोगित्वं वि
जातीया द्भिदाकुतः इति ॥ औ ब्रह्म निरवय॰
वहोनेतें ताके विषे स्वगत भेदकाबी असंभवहै ॥
तदुक्तं ॥ सतोनावयवाः इति ॥ यातें ब्रह्मस
जातीयादि तीनो भेदसें रहित है ॥ सो पूर्वोक्त
श्रुतिसें औ " भेदत्रय विवार्जितं या वाक्यसें त्रि
विध भेदका परिहार कियाहै॥औ जीव ईश्वरका
भेद जीवनका परस्पर भेद जीव जडका भेद ई
श्वर जडका भेद औ जड जडका भेद ये पंच भेद
स्वगत भेदांत पत्ति वेदांतविमुखवादी मानेहै ॥
औ तिन भेदनकी सिद्धिनिमित्त श्रुत्या भास औ

युक्तियों नानाप्रकारकी कहे है ॥ सोवादी सारे भ्रांतहै ॥ औ अन्य लोकनकूं भेद दृढायके व्याकुल किये है ॥ तदुक्तं ॥ ईशानीशादि भेदेन व्याकुलं सकलं जगदिति ॥ सो ईशानीशादि सर्व भेद असतहै ॥ प्रथम जीव ईश्वरका भेद संभवे नहीं ॥ काहेतें तत्वमस्यादि महावाक्य नविपे जीवात्मा परमात्माका एकत्व कहाहै ॥ औ जोकोई कहे जीव ईश्वरके एकत्व अंगीकार किये अधिकारी औ फलदाताके अभावहोनें ते कर्मोपासना विफल होवेंगे तहा सुनो ॥ बुद्धि विशिष्ट औ मायावसिष्ट चेतन विपे कर्मोपास न कर्तृत्व औ फल दातृत्वहै ॥ शुद्ध चेतन विपे नहीं तांका सदा अभेद है ॥ यातें दोनों व्यवस्था वनेहै ॥ सो चतुर्विधाकाशके दृष्टांतसे जानणा ॥ तदुक्तं ॥ कूटस्थो ब्रह्मजीवेशावित्येवंचिच्चतुर्विधा ॥ घटाकाश महाकाशौ जलाकाशाभ्र खे यथा इति ॥ अर्थ यह ॥ जैसें घटाकाश महाकाश जलाकाश औ अभ्रख कहिये मेघाकाश ॥ ये च्यारि आकाशके भेद है ॥ तैसें कूटस्थ ब्रह्म जीव औ ईश्वर येच्यारि चेतनके भेद कलप्या है ॥ तामे सप्रतिविंब जल औ मेघदृष्टिकूं त्यागके घटाकाश महाकाशका सदा अभेद है॥ तैसें साभासबुद्धि औ मायाका त्यागकिये कूट

स्य औ ब्रह्मकाबी सदा अभेद है ॥ तदुक्तं ॥ "यथा नभसि नैवास्ति भेदः कोप्येकरूपिणि ॥ चैतन्ये तद्वदेवात्र भेदः कोपि न विद्यते इति ॥ अर्थ स्पष्ट है" ॥ तैसे "प्रज्ञानमानंद ब्रह्म अयमात्मा ब्रह्म । क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि" इत्यादि श्रुतिस्मृतिमें औ जीवो ब्रह्मैवनापरः । मुंचमुंचेति जीवत्वं ब्रह्माहमिति निश्चय इति ॥ दुर्वासा वामदेवश्च भरतो नारदस्तथा॥ते वदंतिहि ब्रह्मत्वं जीवत्वं किं नमुंचासि॥दत्त व्यासादयश्चैव वसिष्ठ कपिलादयः । तेवदंति० रामकृष्णादयश्चेति शुकाद्याश्च मुनीश्वराः॥ तेवदंति० इत्यादि सत्शास्त्र औ रिषी मुनी ईश्वरोंनेंबी गजघंटान्यायकरके जीव ब्रह्मका एकत्व कहाहै औ अन्यथादर्शीयोंकूं "द्वितीयाद्वै भयं भवति । पशुरेवस देवानां । एतस्मिन्नुदरमंतरंकुरुते ऽथ तस्य भयं भवति । ईषदप्यंतरं कृत्वा रौरवं नरकं व्रजेत्" इत्यादि श्रुतिस्मृतियोंने महान् अनर्थ कहाहै ॥ यातें जीव ब्रह्मका भेद असंगत है॥ तैसें जीवनका परस्परभेदबी संभवे नहीं ॥ काहेतें जीवन विषे जो कर्तृत्व भोक्तृत्व औ अस्मत् युष्मदादि शब्द प्रत्यायोंसे भेद प्रतीति होवेहै सो साभासांतःकरण औ देहादिकृतभेद है ॥ चैतन्यात्माविषे नहीं ॥ औ तार्किक जो आत्माकूं कर्ता भोक्ता नानाविभु जड औ ज्ञा

न गुणवाला मानेहै ॥ औ सांख्यमतवाले असंग रूपमानिके नानात्मा कहेहै॥औ योगी ईश्वर भिन्नकर्मक्लेशादिमान नानात्मा मानेहै ॥ औ कर्मी कर्ता भोक्ता नानात्मा मानेहै ॥ सो सारे वादी भ्रांतहै ॥ औ वेदसें विरोधजल्पना करे है ॥ मिथ्याउपाधियों करके आत्मा नावत् प्रतीति होवेहै ॥ वस्तुतें सूचीपाश कलशद्रोणिमठादि विषे आकाशकीन्याई ब्रह्मादिस्तंभपर्यंत देव दनुज मनुज तिर्यगादिक विषे चेतन एकहीं अनुस्यूत है ॥ सो " आकाशवत्सर्वगतश्च नित्यं । एको देवो सर्वभूतेषु गूढः । एकधा बहुधाश्चैव दृश्यतेजलचंद्रवत् । समः सर्वेषु भूतेषु " इत्यादि श्रुति स्मृतियोंमें एकात्माहि कहाहै ॥ सो सर्व संसार धर्मसें रहितहै ॥ औ जो अन्यथा दर्शीहै ॥ तिनों कूं " मृत्योः समृत्युमाप्नोति । किंतेन नकृतं पापं । नसपश्यति दुर्मतिः । मायया वंचितोनरः " इत्यादि श्रुति स्मृति शास्त्रोंने अनर्थ फल कहा है ॥ यातें जीवनका परस्परभेद असंगहै ॥ तैसें जीवजडका भेदवी असतहै ॥ काहेतें जीव औ जडपदार्थोमें शेषी शेषवा कर्ता कार्य वा ज्ञाता ज्ञेय वा चेतन जडत्वादि भेदप्रतीति होवेहै ॥ सो स्वप्नदृक् औ स्वाप्निक पदार्थकी न्याई अविद्यारूप निद्रासें प्रतीति होवेहै ॥ परमार्थसे नहीं ॥ सो

" तस्यत्रय आवसथास्त्रयः स्वप्राः आत्माज्ञाना दिदं सर्वं " इत्यादि श्रुति शास्त्रोंमें स्पष्ट कहा है ॥ यातें जीवजडका भेदअसंगत ॥ तैसें ईश्व रजडका भेदबी संभवे नहीं काहेतें सर्वजगत् का अभिन्न निमित्तो पादानकारण ईश्वरहै ॥ औ उपादानसें भिन्नकार्यकी सत्ताहोवे नहीं ॥ जैसें मृदसें भिन्नघटादिककी सत्ता नहीं ॥ यातें ईश्वर परमार्थसें ब्रह्मरूप है ताकेविषे ज गतकी प्रतीति मिथ्याहै ॥ सो " वाचारंभण विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येवसत्यं । इंद्रोमाया भिः पुरु रूपईयते । माया मात्रमिदं सर्वं " इ त्यादि श्रुत्योंमे प्रसिद्ध कहाहै ॥ अर्थयह ॥ घटा दिकार्य व्यपदेशमात्रहि नामहै मृत्तिकाहि स त्य है ॥ परमेश्वर मायाशक्तियोंसें अनेक० रूप प्रतीति होवेहै ॥ यह मायामात्रहि द्वैत है इति ॥ यातें ईश्वर जडका भेद असंगतहै ॥ औ जडप दार्थ तो आपहीं मिथ्याहै ॥ यातें ताका परस्पर भेदबी स्वप्नके पदार्थनके भेदकीन्याइ मिथ्याही है ॥ सो " नास्तिनास्ति जगत्सर्वं । विकल्पो न हिवस्तु " इत्यादि श्रुत्योंमें प्रसिद्ध कहाहै ॥ औ जीवईश्वरका परमार्थसें भेद नहीं औपाधि कत्वात् सोयं देव दत्तवत् ॥ जीवनका परस्परभे द असत् औपाधिकत्वात् जल चंद्रवत् ॥ जीव

जडका परस्परभेद असत् अविद्यकत्वात् स्वप्नपुरुप भोग्यवत्॥ईश्वरजडका भेदअसत् मायिकत्वात् नटवाजिवत् ॥ जडजडका भेद असत् भ्रांति मूलकत्वात् स्वाप्निक पदार्थनके भेदवत् ॥ इत्यादि युक्तिसैंवी पांचोभेद असत् हैं ॥ सोगुरुमुख वेदांतके सम्यक् विचारसैं भेदोंके निरासहोयके अद्वयनिश्चय होवैहै ॥ तासैं विमुख भ्रांतवादीयोंकूं अद्वय वोध होवै नहीं॥सोवादियोंके भ्रम पंचप्रकारके है॥जीव परमात्मा विपे भेदभ्रम औ आत्मा विपे कर्तृत्व तथासंगीत्व भ्रम औ ब्रह्मविपे विकारीत्व भ्रम औ जगत विपे सत्यत्व भ्रम ॥ ताकी निवृत्तिका विचार यहहै॥भेदभ्रमका तो निरास पूर्वकियाहै॥ औ सर्वकर्मकी सिद्धि शरीररूप अधिष्ठाता औ कर्ता अहंकार औ करण इंद्रिया औ चेष्टक प्राण ॥ औ देवता इनपंचोंसे होवैहै ॥ आत्मा तिन सर्वका साक्षीहै॥ सो सदा अकर्त्ताहै ॥ताके विपे कर्तृत्व जो आरोप करैहै ॥ ताकूं गीतामें भगवाननें दुर्मति कहाहै ॥ औ आत्मा देहादिकनसें सदा असंगहै ॥ काहेतें संग नाम संबंधकाहै • संवध सजातीय विजातीय स्वगत पदार्थसें होवैहै ॥ जैसें घटका घटसें सजातीय पटसें विजातीय औ पटका तंतुसे स्वगत संबंधहै ॥ आत्मा सजात्यादिसें रहितहै ॥ यातें असंगहै ॥ य

ह प्रक्रिया विशेष आगे कहेंगे ॥ औ ब्रह्म परिणामी वा आरंभि जगतका उपादान नहीं किंतु विवर्त्तोपादान कारणहै॥ यातें ब्रह्म विकारी होवे नहीं॥स्व स्वरूपका त्यागनहि करके कार्यत्वरूपसें प्रती होवे सो विवर्त्तोपादान कहियेहै ॥ रज्जु सर्पकी न्याइ ॥ " सो वेदांत शास्त्रनमें प्रसिद्ध कहाहै ॥ औ जगत सर्व प्रमाणोंसें मिथ्याहै ॥ विद्युत् वत् दष्ट नष्ट स्वभावतें प्रत्यक्ष प्रमाणसें मिथ्या ॥ ज्ञान निवर्त्यत्वात् शक्ति रजतवत् इत्यादि अनुमानसें औ नेह नानास्ति । विकल्पो न हि वस्तु " इत्यादि शास्त्रसें ॥ औ गंधर्व नगर स्वप्न इंद्रजालादि उपमानतें औ " तरति शोकमात्म वित् इत्यादि श्रुत्युक्त श्रुतार्थापत्तिसें औ सुषुप्ति समाध्यादि विषे अनुपलंभ होनेतें अनुपलब्धि प्रमाणसें जगत मिथ्याहै ॥ एसें षट् प्रमाणसें जगत् मिथ्या होनेतें सत्यनहीं ॥ इस प्रकारसें भ्रम परिहारकिये विद्वानकूं जगत् अनर्थ कर होवेनहीं किंतु अन्यथा दर्शियोंकूं हि क्लेश करहै ॥ तदुक्तं ॥ " अपामार्ग लतेवासौ विषमोहि भव भ्रमः ॥ प्रत्यग्दृशां विमोक्षाय निबंधाय वहिर्दृशामिति " ॥ अर्थ यह ॥ अंगाडेकी लताकी न्याइ भवभ्रम विषमहै प्रत्यगात्मदृष्टिवाले विद्वानोंकूं मोक्ष निमित्त औ वहि जगत् दृष्टिवा

ले मूढनकूं बंध वास्तेहैं इति ॥ जैसें रज्जुविषे
सर्प देखने हारेकूं भ्रांति रूप सर्प भयका हेतु हो
वेहै ॥ औ रज्जु देखने हारेकूं भयका हेतु नहीं
॥ तैसे मूढामूढकूं विषम दृष्टिसें विषम फल
होवेहै ॥ तात्पर्य यह अस्ति भाति प्रिय नाम
औ रूप ये पंच अंश सर्व विश्वमेंहै ॥ तिनमें
आदि तीनो ब्रह्म रूपहै ॥ औ नामरूप जगत्
मायाकृत् मिथ्याहै ॥ जो जगदृष्टिसें देखने हारे
है ताकूं जगत् क्लेशकारीहै ॥ औ ब्रह्म दृष्टिसें दे
खने हारेकूं क्लेशकर होवेनहीं ॥ औ परमार्थसें
नाम रूप त्रियात्मक जगत् ब्रह्म रूपहीहै ॥ सो
" ब्रह्मै तद्धि सर्वाणि नामानि विभर्ति । ब्रह्मै
तद्धि सर्वाणि रूपाणि विभर्त्ति । ब्रह्मै तद्धि स
र्वाणि कर्माणि विभर्ति " यह वृह दारण्यकके
त्रितियाध्यायके षष्टे ब्राह्मणमें प्रसिद्ध कहाहै ॥
याते जगत् मिथ्या कल्पना मात्रहै ॥ ऐसें विचार
किये पंचभ्रमोकी निवृत्ति होवेहै ॥ याके अनुकू
ल पंच दृष्टांत यहहै ॥ बिंब प्रतिबिंबका औ ज
पाकुसुम स्फटिकका औ घटाकाशका औ रज्जु
सर्पका औ सुवर्ण भूषणका॥यातें यह सिद्धभया
ब्रह्मविषे भेद भ्रांत पुरुष कल्पहै॥औ विचार किये
किसि प्रकारसें भेदकि सिद्धि होवे नहीं ॥ कूटस्थ
ब्रह्मका मुख्य समानाधिकरणसें सदा अभेदहै ॥

औ माया औ मायाके कार्य जगत्का ब्रह्मसें बा
ध समानाधिकरण अभेदहै ॥ यातें ब्रह्म सदा
एक अद्वैत स्वरूप है सो जीवनन्मुक्त स्थित प्रज्ञोंकूं
सदा अनुभव होवेहै ॥ सोइ नित्य परब्रह्ममें
हूं इति संबंधः ॥ ५ ॥

पूर्व तृतीय श्लोकमें आनंद प्रकाश निष्प्रपंच
रूपज्ञेय ब्रह्मका प्रतिपादन किया सो सिंहावलो
कन न्यायकरि उपपत्तिसें याश्लोक विषे आचा
र्य प्रतिपादन करेहै ॥ यदानंदेति ॥

यदा नंदलेशैः समानंद
विश्वं यदाभाति सत्वे
तदाभाति सर्वं ॥ यदा
लोचिते हेयमन्यत्सम
स्तं परंब्रह्म नित्यं त
देवाहमस्मि ॥ ६ ॥

जिसके आनंद लेशो करके सर्व विश्व आनंद
वान होवे है ॥ औ जिसका जबी भान होवे तब
सर्व विश्वका भान होवेहै ॥ औ जिसके आलो
चन किये समस्त प्रपंचहेय होवे है ॥ सोइ नि

त्य परब्रह्ममें हूं इति पदार्थः ॥ ६ ॥ टीका ॥ जिस ब्रह्मानंदके लेशो कहिये लवों करके ब्रह्मादि पिपीलिका पर्यंत सर्व प्राणि आनंदीत होवे है ॥ तहां श्रुति ॥ एप ह्येवानंद याति । एतस्यैवानंदस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवंतीति ॥ याका अर्थ यहहै ॥ यह प्रत्यगभिन्न परमात्माहि सर्व जगतकूं आनंद देवेहै इति औ इसहि आनंद स्वरूपकी मात्राकहिये लेशानंदसें यहसारे भूत प्राणि जीवतेहै इति तात्पर्य यहहै ॥ यजुर्वेदके तैतरीयोपनिपदगत द्वितीयाध्याय रूप आनंद वल्लीविपे "सैपानंद स्यमीमांसा भवति" नाम ब्रह्मानंदका विचार होवेहै एसा उपक्रमकरके चक्रवर्ति राजा विपे मानुष्य सुखका अंत कहाहै ॥ तासें शतगुनाधिक सुख मनुप गंधर्वोंका एक आनंद कहाहै ॥ तिन मनुष्य गंधर्वोंसें देव गंधर्वों विपे तिनोंसे पितृन विपे तिनोंसें आजानज देवों विपे तिनोंसे कर्म देवों विपे तिनोंसें मुख्य देवों विपे तिनोंसें इंद्र विपे तासें बृहस्पति विपे तासें प्रजापति विपे तासें ब्रह्मा विपे शत शत गुनअधिकानंद कहाहै ॥ सो महाराजातें आदिदेके ब्रह्मापर्यंत सारे आनंद ब्रह्मानंदका लेशोहै ॥ जैसें समुद्रके लेश जलोंसें मेघ पुष्टहोयके सरे तृणादि स्थावरकूं औ तिस द्वारा जंग

मकूं जीवन देके मुदित करेहै ॥ तैसें ब्रह्मानंद कालेशमात्र सर्व जगत गत पसस्याहै ॥ तदुक्तं ॥ " यस्यानंद समुद्रस्य लेश मात्रं जगद्गतं ॥ प्रसृतं ब्रह्मलोका दाविति " ॥ याका अर्थ उक्त कहाहै ॥ यातें जिस ब्रह्मानंदके लवमात्रसें सारा विश्वसम्यक् आनंदवान्है॥सो ब्रह्मपरम आनंदस्वरूपहै ॥ जो ब्रह्म आनंदस्वरूप नहि होवे तो विश्वमें आनंदकासें होवेंयह उपपत्तिसें ब्रह्मकूं आनंद स्वरूप कहा ॥ औ उक्त श्रुतियोंका गूढाभिप्रायदेखियेंतो लोकांतरों विषे अधिक आनंद प्रतिपादनमें तात्पर्य नहीं ॥ किंतु लोकों करि अनुभूत विषयानंदका अनुवाद करके ब्रंह्मानंद निरातिशयजनावनेमें औ श्रोत्रिय अकामहत ज्ञानीकूं संपूर्ण सुखकी प्राप्ति दिखावमें ही तात्पर्य है ॥ सो ब्रह्मानंद अक्षय अनं तादि खायके ब्रह्म लोकपर्यंत मूढोंकरि आरोपित तुच्छ सुखतें परांडमुखहि करावेहै ॥ सो "योवै भूमांतत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति " याश्रुतिने स्पष्टब्रह्महि सुखरूपकहाहै ॥ तासें भिन्नपरिच्छिन्न प्रपंच विषेसुखका निषेध कियाहै जैसें जगत् विषेसुखनहीं"॥ तैसें विश्वकी सत्ताभानवी स्वतः नहीं ॥ किंतु याचेत मंडनन्याय करि चेत्तनकी सत्तासें ही सत्तकी न्याइ प्रतीति होवेहै ॥ या अर्थकूं अब द्वितीयपा

दसें प्रतिपादन करेहै ॥ यदा भाति सत्वे इति ॥ यदा भाति सत्त्वे कहियेजिस अधिष्ठान ब्रह्मके सामान्य रूपसे भान हुवे अनंतर सर्व जगत्का भान होवेहै ॥ तहां श्रुति तमेव भ्रांत मनु भाति सर्व मिति ॥ याका अर्थ यहहै ॥ तिस स्वयंज्योति परमात्माके भानसें अनंतर सर्वका भान होवेहै इति ॥ तात्पर्य यहकि जैसें रज्जुशुक्त्यादिकनके सामान्य रूपसें भानहुवे अनंतर कल्पित सर्प रजतादिकनकी प्रतीति होवेहै ॥ तैसें सर्वाधिष्ठान ब्रह्मकी प्रतीति अनंतर घटोस्ति पटोस्ति एसें अस्तित्व व्यवहारके योग्य सर्व पदार्थ होवे हैं ॥ यातें सर्व व्यवहारकी सिद्धि ब्रह्म करके होवेहै ॥ तदुक्तं॥ "सर्वोपि व्यवहारस्तु ब्रह्मणा क्रियते जनैः ॥ अज्ञानान्न विजानंति मृदेवहि घटादिकं ॥ १ ॥ सदैवात्मा विशुद्धोस्ति ह्यशुद्धो भाति वै सदा ॥ यथैव द्विविधा रज्जु र्ज्ञानिनोऽ ज्ञानिनोऽ निशमिति ॥ याका अर्थ यहहै ॥ जनोंकरके सर्व व्यवहार ब्रह्मसेंहि किया जावेहै ॥ जैसें मृत्तिकासे घटके स्वरूपकी सिद्धिवा व्यवहार सिद्धि होवेहै ॥ तांवी मूढलोकोनहि जानते इति ॥ अज्ञानिकूं आत्मा शुद्धहिहै ऐसा भासेहै ॥ औ अज्ञानिकूं भ्रांतिसें आत्मा अशुद्धहै ऐसा भासे है जैसें रज्जु द्विविध भासेहै ॥ रज्जुके स्वरूपे

नणे हारे ज्ञानिकूं सर्पा भावतासें निर्विषयता कर के भयकूं नही करेहै ॥ औ अज्ञानिकूं भ्रमसें सर्प रूपतासें रात्रिमें भय करनेहारि होवेहै इति ॥ याते यह सिद्धभयाकि जगत् परमार्थसें नहीं किंतु रज्जु सर्पकी न्याइ प्रतीति मात्रहै ॥ सो अधिष्ठानरूप ब्रह्मके ज्ञानसें वाध होवेहे ॥ या अर्थकूं तृतीय पा दसें कहेहै ॥ यदा लोचिते इति ॥ यदा लोचिते कहिये जिस ब्रह्मके विचार कियेहुवे, अन्यत् स मस्त जगत हेय कहिये त्यागका विषय होवेहै ॥ इहां त्रिकालिक मिथ्यात्व दर्शनहीं त्यागहै ॥ जैसें आकाश विषे गंधर्व नगर तीनोंकालमें न हीं ॥ तैसें आत्मा विषे जगतूबी तीनों कालमें नहीं है ॥ तदुक्तं ॥ गंधर्व नगरं यद्वन्नासीदस्ति भवष्यति ॥ गगने तद्ददेवेदं विश्वमात्मनि सर्वदा इति ॥ याका अर्थ यहहै ॥ जैसें गगन विषे गंध र्व नगरन पूर्व हुवाहै न अब है न आगे होवेगा ॥ तैसें आत्मा विषे विश्वका सर्वदा अभाव है इ ति ॥ तात्पर्य यहकि गंधर्व नगरकी न्याइ आका शादि भूत औस्थावर जंगम सर्व भौतिक मि थ्या प्रतीति होवेहै ॥ चेतन सत्ताका विचारसें अपसरण किये आकाशादि भूत औ भौतिक नि स्तत्व होवेहै ॥ सोविचार भूत विवेक संज्ञक ग्रंथ में प्रसिद्ध कहाहै ॥ ग्रंथके विस्तार भयसे इहां

सो लिख्यानहीं ॥ यातें यह सिद्धभयाकि सत्य स्वरूप ब्रह्मके आलोचन जन्य सम्यक् बोधहुवे विश्वका बाध होवेहै ॥ अपरोक्ष मिथ्यात्व निश्चयका नाम बाधहै ॥ तदुक्तं ॥ अध्यस्य मानं नास्तीति बाध इत्युच्यते बुधैरिति ॥ याका अर्थ यहहै॥अध्यस्यमान प्रपंच परमार्थसें नहीं एसा निश्चय पंडितों करके बाध एसें कह्या जावेहै इति ॥ ननु तत्वज्ञानसें समूल प्रपंचके बाधहुवे ज्ञानीके व्यवहारका लोप प्रसंग होवेगा ॥ याशंकाका समाधान यहहै ॥ ज्ञानीकी दृष्टि विषे व्यवहार हेवी नहीं ॥ औ जो लोकदृष्टिसें कहेतो प्रारब्ध निमित्तसें शरीरकी स्थिति पर्यंत प्रतिभास मात्र लौकिक वैदिक व्यवहार होवेहै ॥ यातें विद्याउपदेशरूप संप्रदायें व्यवहारका लोपबी होवे नहीं ॥ औ तासें ज्ञानीकी हानीबी होवे नहीं ॥ काहेतें तत्वबोधसें सर्व अनर्थ ताका निवर्त भयाहै ॥ ज्ञानसें सर्व अनर्थोंकी निवृत्ति विद्वानोंके अनुभव सिद्धहै ॥ औ "ज्ञात्वा देवं सर्व पाशा पहानिः क्षीणैः क्लेशैर्जन्म मृत्युप्रहाणिः" याश्रुतिनेंबी परमात्मा देवके ज्ञानसें सर्व पाशोंकी हानी औ क्लेशोंके क्षीणतासें जन्मादिक अनर्थकी अत्यंत निवृत्ति-प्रसिद्ध कहिहै इति ॥ श्रुतिनें ज्ञानसें पाश औ क्लेशोंकी निवृत्ति कहिहै ॥ सोपाश चतुर्विध मान

णा ॥ तदुक्तं ॥ पाशाश्चतुर्विधाश्चैव शास्त्रेषु प्र
तिपादिताः ॥ मलो माया कर्मतत्व तिरो धानं
चते मताः इति ॥ याका अर्थ यहहै ॥ पाश चतु
र्विध शास्त्रोंमे प्रतिपादन कियाहै ॥ मल माया
कर्म औ तत्व तिरोधानये च्यारि मान्याहै इति॥
ज्ञान क्रिया शक्ति आछादक दोष विशेषका नाम
मलहै ॥ राग द्वेषादिककी हेतु माया कहिहै ॥ पु
ण्यपाप औ मिश्रितये त्रिविध कर्महै ॥ औ मूढों
करके तत्वका तिरोधान सो सर्वकूं अनुभव सि
द्धहै ॥ औ क्लेश अविद्यादि पंच विधहै ॥ सो
" अविद्या ऽस्मिता राग द्वेषाभि निवेशाः पंचक्ले
शाः " इस सूत्रसें पतंजलि भगवानने प्रसिद्ध क
हाहै ॥ तिनमें अविद्या चतुर्विध कहिहै ॥ अनि
त्य में नित्य बुद्धि अशुचिमे शुचबुद्धि ॥ दुःखमे
सुख बुद्धि॥अनात्मामें आत्मबुद्धि॥सा " अनि
त्याशुचि दुःखानात्म सुनित्यशुचि सुखात्मख्या
ति " इस सूत्रसें कहिहै ॥ अनित्यरूप जगतहै
सो सर्व श्रुति स्मृतियों कहेंहै॥ विद्वानोके अनुभ
व सिद्धहै ॥ औ प्रत्यक्षादिक प्रमाणोकरी वी
प्रपंचका अनित्यपणा सिद्ध होवेहै ॥ गंधर्व नगर
स्वप्नकी न्याइं दृष्टनष्टहै यातें प्रत्यक्ष प्रमाणसें अ
नित्य ॥ औज्ञाननिवृत्य होनेतें रज्जु सर्पवत् अनु
मानसेंवी मिथ्या ॥ औ " नेहनानास्ति । नेति ने

ति " इत्यादि श्रुतिरूप शब्द प्रमाणसेंबी अनि
त्य ॥ औ स्वप्नोपममिदं सर्वं इत्यादि उपमान
सेंबी अनित्य ॥ आत्मज्ञानसें निवृत्ति होवेहै नि
त्य वस्तुकी ज्ञानसे निवृत्ति होवे नहीं ॥ यातें अ
र्थात् जगत् मिथ्या है ॥ औ, परमार्थसें जगत्
नित्यहोवेतो व्यवहारि प्रतीतिकी न्याई परमा
र्थसे प्रतीति होनी चाहिये सो होवे नहीं ॥ यातें
अनुलब्धिसेंबी प्रपंच अनित्यहै ॥ ताके विषे नि
त्यत्व बुद्धिअविद्याहै ॥ औ शरीरो सारे अशुचिहै
तामें हेतुबी जात् स्थानात् उपष्टंभात् निष्पंदात्
निधनात् येपंचहेतु व्यासभगवानने कहाहै ॥ आ
धेय शुचता भ्रांतिसे है ॥ तामें शुचता बुद्धि अ
विद्याहै ॥ औ विषयसारे दुःखरूपहै ॥ सो परि
णामताप संस्कार इससूत्रसें विवेकिकूं सर्वदुःख
हि कहाहै ॥ औ सर्व शास्त्रबी कहतेहै ॥ तामेंसु
खबुद्धि अविद्या है ॥ औ अनात्मरूपपंचको
शनमें ज्ञानहीनेकूं आत्मबुद्धिहै साभी अविद्या॥
येचतु विधकार्या विद्याकहिताकी कारण मूला
विद्या है॥औ दृक्दृश्यका तादात्म्यरूप अस्मिता
सुखानुशायी रागः॥दुःखानुशायी द्वेषः॥स्वरसानु
वाही अभिनिवेशः ये च्यारि क्लेशबी वृक्षके बीज
अंकुर स्कंधशाखा कीन्याइ प्रसुप्ततनु विच्छिन्न
उदार इन च्यारि अवस्थावाला पतंजलीनें क

हाहै ॥ औ पूर्व कहि अविद्यासाउत्तर च्यारि क्ले शोकाक्षेत्रहै ॥ सो " अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषां " इस सूत्रसें कहाहै ॥ येपंचोक्लेश औ पूर्व कहे चतुर्विध पाशसमूह ज्ञानसें निवर्त हुवेविद्वान्कूं जन्मादिक होवेनहीं ॥ सुख दुःखका कारणजीव सृष्टिहै ईश्वर सृष्टि नहीं अहंता ममता अध्यास जाग्रदादि मोक्षपर्यंत सर्वजीव सृष्टिहै ॥ औ ईक्षणादि प्रवेशांत ईश्वरसृष्टि है ॥ सो जीव ईश्वरकी सृष्टि । द्वैतविवेकाख्यग्रंथमें मणी औ दूरदेशगामी पुत्रादिकोंके दृष्टांसें स्पष्टप्रतिपादन करीहै ॥ औ जीव द्वैतका अवांतर भेद शास्त्रीय अशास्त्रीय औ अशास्त्रीयवी मंद तीव्र तहां कहाहै ॥ सो इहां विस्तार भयसें लिख्या नहीं ॥ तिस अनर्थकर जीवद्वैतके निवृत्त हुया ईश्वसृष्टि मिथ्यात्व निश्चयकिये शरीरके प्रारब्ध क्षयपर्यं बाधितानुवृत्तिसें शरीर निर्वाहक लौकिक औ विद्या उपदेशादिक शास्त्रीय व्यवहारसें ज्ञानवानकी कछुवी हानी होवे नही ॥ हानीकरनेहारी जो अविद्यासा ज्ञानकालमें बाधभइहै ॥ औ ताकाकार्य प्रपंचसोपाधिक भ्रमहोनेतें मृगतृष्णाके जलकीन्याइ प्रतिभास मात्र प्रतीति हुवे ताके विषेसत्यत्व भ्रम वा निज स्वरूप विषे द्वैता पतिज्ञानीकूं होवेनहीं॥या तेंयह सिद्धभयाकि अधिष्ठान ब्रह्मके साक्षात् हुवे

अन्यसर्व हेय कहिये बाधहोवेहै॥तातें जिसब्रह्मके लेशानंदते विश्वआनंदवान होवेहै॥औ जाकी स त्तास्फुरतिसें जगतका भान होवेहै ॥ औ जाके विषेसर्व प्रपंच बाध होवेहै ॥ सो बाधावधि नित्य परंब्रह्ममें हूं इतिसंबंधः ॥ ६ ॥ इत्यनुभवोडुपाभि धटीकायां द्वितीयेदेशः ॥ २ ॥

पूर्वज्ञेय वस्तुब्रह्मका प्रतिपादन किया सोइ अब स्वरूप लक्षण औ तटस्थलक्षणसें औ विचारा क्षमकूं उपायांतर गम्यतासेंया श्लोक विषे आचा र्य प्रतिपादन करेहै ॥ अनंत मिति ॥

अनंतं विभुं सर्वयोनिं नि रीहं शिवं संगहीनं यदोंकार गम्यं ॥ निराकारमत्युज्व लं मृत्युहीनं परं ब्रह्म नि त्यं तदेवाहमस्मि ॥ ७ ॥

यो अनंत है औ व्यापक है औ सर्वका कारण है औ निरीह है औ शिवरूप है औ संगते हीन है औ ओंकारसें गम्यहै ॥ औ निराकार है औ अति उज्वलहै औ मृत्युरहित है ॥ सोइ नित्य प रंब्रह्ममें हूं इति पदार्थः ॥ ७ ॥ टीका ॥ जो ब्रह्म

अनंत कहिये ईयतासें रहित हैं ॥ ईयता नाम प
रिच्छेदका है ॥ सो परिच्छेद त्रिविध होवेहै ॥ ता
का लक्षण पूर्व कहाहै ॥ सोतीनो परिच्छेद कहिये
अंत ब्रह्मविषे नही यातें अनंत हैं ॥ तदुक्तं ॥
नव्यापित्वाद्देशतोंतो नित्यत्वान्नापिकालतः ॥
नवस्तुतोपि सार्वात्म्यादानंत्यं ब्रह्मणि त्रिधा इ
ति ॥ याकाअर्थ यहहै ॥ ब्रह्म सर्वव्यापि होनेतें
ताका देशतें अंत नहीं ॥ औ नित्य होनेतें का
लतें ताका अंत नहीं ॥ औ सर्वात्मा होनेतें
वस्तुतेंबी ताका अंत नहीं ॥ यातें तीनो प्रकारसें
ब्रह्मविषे अनंतता है इति ॥ जो अनंत होवे सो
इ सत्यरूप औ ज्ञानरूप होवेहै ॥ यातें ब्रह्म स
त्यज्ञान अनंतरूप है ॥ सो " सत्यं ज्ञानमनंतं
ब्रह्म " याश्रुति विषे प्रसिद्ध कहाहै ॥ सो सत्य
ज्ञान अनंतता ब्रह्मका स्वरूप लक्षण है॥जो अन्य
ते व्यावृतक स्वलक्ष्यका स्वरूपही होवें सो स्वरूप
लक्षण कहिये है ॥ जैसें धवलतादि ग्रहका स्वरू
पही होनेतें सो धवलादि ग्रहका स्वरूप लक्षण
है ॥ तैसें सत्यज्ञान अनंततावी ब्रह्मका स्वरूपही
होनेतें स्वरूपलक्षण है॥अनृतादिकोका व्यावृतक
होनेतें औ विभु कहिये व्यापक रूपहै॥फेर सो ब्रह्म
सर्व योनि कहिये सर्व प्रपंचका कारण है॥सो "ज
न्माद्यस्य यतः " नाम जिस ब्रह्मतें इस जगत्का

जन्मादि होवेहै इस व्यास सूत्रसें औ " यतो वाइमानि भूतानि जायंते " नाम जिस ब्रह्मतें यह भूत प्रानि उपजतेहै इत्यादि श्रुतियोंमें ब्रह्म कूं जगतका कारण प्रसिद्ध कहाहे ॥ यद्यपि शुद्ध ब्रह्मविषे कारणता कहना असंभवहैं ॥ तथापि सबल ब्रह्मविषे कारणता संभवेहै ॥ सो कारण दोप्रकारका होवेहै ॥ एक उपादान कारण दूसरा निमित्त कारण होवेहै ॥ जाका कार्यमें प्रवेश होवे सो उपादानकारण कहियेहै ॥ जैसें घटका कारण मृत्तिकाहै ॥ औ जाका कार्यमें प्रवेश नाहिहोवे किंतु तटस्थ होई कार्यकूं रचें सो निमित्त कारण कहियेहै ॥ जैसें घटकानिमित्त कारण कुलालहै ॥ इहां जगत्का उपादाननिमित्त दोनोप्रकारसें कारण एक परमेश्वर हीहै ॥ जैसें जालेका उपादान निमित्त दोनों एक मकरीहै ॥ औ मुख्य दृष्टांत स्वप्नकाहै ॥ तैसें जगत्का उपादान निमित्त दोनों एक ईश्वरहै ॥ मायाकरके उपादानता औ चेतनकरके निमित्तता है ॥ तहांश्रुति ॥ " मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरमिति " ॥ याका अर्थ यहहै ॥ मायाकूं उपादान जाने माया पतिकूं महेश्वर कहिये निमित्त जाने इति ॥ औ सांख्यशास्त्रवाले जो केवल प्रधान जगत्का कारण कहेहै ॥

ताका सूत्रकार भाष्य कारने खंडन कियाहै औ " सत्यानृते मिथुनी करोति " याश्रुतिनें सत्य प रमा औ अनृत माया मिथुन जगत्‌का कारण कहाहै ॥ चेतनकी सत्ता पायके तम प्रधान मा यासें प्रथम शब्दगुण सहित आकाश होवेहै तासें वायु तासें अग्नि तासें आपः तासे पृथ्वी ये पंचभू त गुणसहित उपजेहै ॥ तिनभूतनसें सूक्ष्म स्थूल सृष्टि क्रमसे उपजेहै ॥ इस रीतिसें ईश्वरसें ज गतकी उत्पत्ति शास्त्रोंमें कहिहै ॥ यातें विश्वका कारण सबल ब्रह्महै॥औ अन्य जो कारण वादी जगत्ककारण विवध कल्पेहै ॥अभाव कोई असत् कोई शून्य कोई प्रधान कोई परमाणु कोई कर्म कोई काल कोई कालादिसंयोग कोई असंगपु रुप कोई यदृच्छा कोई पंचभूत इत्यादि माने है ॥ सो सारेमत असंगत है ॥ काहेतें अभावसे का र्य होवेनहीं किंतु लोकविषे भावरूप मृत्तिकादि कनसेंही घटादिकार्योंकी उत्पत्ति देखीयत है ॥ यातें अभाव वादविषे दृष्ट विरोध दोषहै ॥ औ असत् वंध्या पुत्रादिसें संतति होवे नहीं यातें असत् वाद असंगत है ॥ औ शून्यनिस्तत्व होनेतें तासें कार्यकी उत्पत्ति सर्वथा संभ वे नहीं ॥ यातें शून्यवाद असंगत है ॥ औ प्र धान जडहोनेतें तासें निरपेक्ष कार्यकी उत्पत्ति सं

भवे नहीं॥औ जड परमाणुके संयोगके असंभवतें ताके विषे कारण कल्पना असंगतहै॥औ कर्म स्व तः जडहोनेतें तासें निरपेक्ष कार्य होवेनहीं॥ यातें कर्मवाद असंगत है ॥ औ कालके कारणत्वां गिकारसें सर्वदा सृष्टि होइचाहिये सो नहिंदे खीयतहै ॥ यातें कालवाद असंगत है ॥ औ कालादि स्वभावसेंही जड होनेतें ताका निरपेक्ष सं गादिकके अभावतें कार्योत्पादनता संभवे नहीं यातें कालादि संयोगवाद असंगत है॥ औ पुरुष कूं असंग होनेतें ताकेविषे कार्यजनन व्यापार संभवे नहीं यातें पुरुषवाद असंगत है ॥ औ जी वकूं सर्वज्ञ स्वतंत्रादिके अभावते जगत रचनेमें समर्थता नहीं ॥ किंतु सर्वज्ञ स्वतंत्रसेंही जगत की उत्पत्ति संभवेहै ॥ यातें जीववाद असंगत है ॥ औ धर्मीनिरपेक्ष केवल धर्मसें कार्योत्पादन के असंवते यदृच्छा वाद असंगत हे ॥ औ भूत नकूं कार्यत्व औ जडत्व होनेतें निरपेक्ष कार्यो पादनके असंभवते भूतवादबी असंगत है ॥ इ त्यादि जगत्के कारण वादों विषे दोष सिद्धांत ग्र थनमें विस्तर कहाहै॥यातें यह सिद्ध भयाकि ज गतका कारण एक परमेश्वर है औ श्वेताश्वेतर उप निषदमेंबी कालस्वभावनियति यदृच्छा भूत पं चक प्रधान औ जीव इनसबों विषे कारणताका

निषेध करके माया शक्तिवाला परमात्माहि जग
तका कारण कहाहै॥यातें ब्रह्म सर्वका योनिइहां
कहाहै तासें ब्रह्मका तटस्थ लक्षण दिखाया है॥
जो लक्षण लक्ष्यके किसी देश विषे औ कादाचि
तक होवे औ स्वलक्ष्यकूं अन्योंते भिन्नकरके ज
नावे सो तटस्थ लक्षण कहिये है ॥ जैसें काकवा
ला देवदत्तका ग्रहहै ॥ इहां काक ग्रहके किसिदेश
विषे औ कादाचितकहोइके अन्य यज्ञदत्तादि
कोंके गृहतें देवदत्तके गृहकूं भिन्नकरके जनावे है
॥ यातें काकगृहका तटस्थ लक्षणहै. ॥ औ न्या
यमतसें जैसें गंधवती पृथ्वीहै इहां गंध पृथ्वीका
तटस्थ लक्षणहै॥ तैसें जो जगतका कारण है सो
ब्रह्म है ॥ इहां जगत्का कारणपणा ब्रह्मका तट
स्थ लक्षण है ॥ काहेतें कारणपणा जगत उत्प
त्तिकालमें है ॥ औ जितने अंशमें मायाकी क
ल्पना है तितने देशमें है ॥ जैसें पृथ्वीके किसि
देशमें घटोत्पत्ति योग्यमृत्तिका होवेहै सर्वदेशमें
नहीं ॥ तैसें सर्वत्र ब्रह्मविषे कारणता नहीं ॥ औ
सो अन्य प्रधानादि कारणोंकी व्यावृत्ति करके ति
नोंसें भिन्नस्वलक्ष्य ब्रह्म जनावेहै ॥ यातें जगत
योनित्व ब्रह्मका तटस्थ लक्षण है ॥ सो मंद बु
द्धि पुरुषनके बोधार्थ परमदयालु आचार्यनें इहां
दिखाया है औ परमार्थसें ब्रह्मविषे जगतयोनि

पणावा सर्वज्ञतादि धर्म नहीं ॥ किंतु मायाकर
के आरोप होवेहै ॥ तदुक्तं ॥ " मायोपाधिजग
द्योनिः सर्वज्ञतादि लक्षणः इति ॥ याकाअर्थ स्प
ष्टहै॥ऐसें अंशकल्पन औ इक्षणा प्रवेशत्वनियाम
कतादि सारे धर्म मायाकल्पित है ॥औ तैतिरीयो
पनिषदमें ॥ जो कामनालोचनस्रष्टत्व भोग्याकार
परिणाम परमात्माविषे कहाहे सो सत्यत्व ज्ञाप
क हेतु है तद्धर्मवानकहनेमे तात्पर्य नहीं॥वस्तुत
स्तुतें सत्तास्फुरति देनें विना अन्यकछुबी ऐश्वर्य
ताका तामें संभव नहीं॥तहां हेतुकहेहै॥निरीहमि
ति ॥ ईहा नामचेष्टाका है ॥ तासें ब्रह्मरहित है
॥ काहेंतें " यद्यद्धि कुरुते जंतुस्तत्तत्कामस्य चे
ष्टितं " यान्याय करके जीवोंकी काममूल क हीं
चेष्टा कहिहै ॥ औ " आप्तकामस्यकास्पृहा "
या न्यायकरके परमात्मा विषे आप्त कामतासे स्पृ
हाका अभाव कहाहै ॥ यातें ब्रह्मनिरीह है ॥
औ सर्वभूतनकी अभिलाषा औ चेष्टा दुःखकी
निवृत्ति औ सुखकी प्राप्ति निमित्त होवेहै औ ब्र
ह्मविषे दुःखका लेशबी नहीं ओ सदा आनंदस्व
रूपहै ॥ सो अब पंचम विशेषणसें आचार्य
कहते है ॥ शिवमिति ॥ शिवनाम मंगल
काहै ॥ याकूं कल्यान कहेहै ॥ सो ब्रह्म परम मं
गलरूप है ॥ तहां श्रुति ॥ ब्रह्म तन्मंगलं वि

इति ॥ स्मृतिश्च ॥ मंगलानां च मंगलमिति ॥ याका अर्थ यह है ॥ तिस ब्रह्मकूं मंगलरूप मुनि जानते है इति ॥ औ मंगलोका मंगल है इति ॥ जो कोई कहै कैलासवासी बी शिव सुनियत है तहां सुनो यद्यपि ताके विग्रहका नाम शिवकहा है ॥तथापि ताकाविग्रह देशपरिच्छेदवाला होनेतें शिवरूप नहीं किंतु मूर्त्ति माया रचित शास्त्रमें कहिहै॥औ ताका निजस्वरूप जो व्यापकहै सोइ शिवरूप है ॥ तहां श्रुति ॥ सर्व व्यापी स भगवान् तस्मात्सर्व गतः शिवः इति ॥ अर्थ यह सो भगवान् सर्व व्यापी है तिस कारण तें सर्वगत शिव है इति॥औ वासिष्ठ ग्रंथमें स्वमुखसेवी महादेव नें अपना निरवयव्यापक स्वरूप परमपूज्य कहा है ॥ औ पुराणोमें ताकी मूर्तिकी अद्भुत महिमा कहिहै सो ताके ध्यान करने हारेकूं परम तत्वकी प्राप्तिका कारण है यातें विग्रहकूं परमेश्वरत्व कहाहै ॥ औ कैवल्य शास्त्रामेंबी परमध्येयता कहि है ॥ तोबी ताका निजस्वरूपहीं शिवरूप कहने में तात्पर्य हैं ॥ सोइ ब्रह्म है॥ननु सो ब्रह्म शिव रूप होवदु तोबी सर्वांतर व्यापक होनेतें संगी होवेगा ॥ याशंकाके हुवे आचार्य कहेहै ॥ संगहीनमिति ॥ संगहीनं कहिये सो ब्रह्म असंग है किसीसें ब्रह्मका संग नहीं ॥ यातें संगजन्य विका

र औ नाशसेंवी रहितहै॥काहेतें संग दो प्रकारका होवेहै ॥ प्रत्यासत्ति औ संयोगादि सो दोनो जड पदार्थों विषे संभवेहै ॥ प्रतिकहिये अभिमुख्यतासें आसत्ति कहिये लाभ ताका नाम प्रत्यासत्तिहै ॥ तात्पर्य यहकि इतर प्रति गुणीभावता ताका नाम प्रत्यासत्ति है ॥ जैसें अग्निसंगसें जलकूं उष्ण तासे वन्ह्यात्मकता होवेहै ॥ सो सजातीय विजातीय स्वगत संवधसें फल शालिता संभवेहै ॥ ब्रह्म सजातीयादिसें रहितहै ॥ औ संयोगादि संवधवी द्रव्यपदार्थन विषे संभवेहै ॥ सो न्याय रीतिसें संयोग समवाय औ तादात्म्य या भेदसें संबध तीन प्रकारका है ॥ अव छेदक भेदकरि स्वात्यंता भावाधिकरणवृत्ति संयोग संवंध कहिये है सोवी अन्योन्य अन्यतर संयोगज संयोग औ सहज संयोग या भेदसें चतुर्विध मानेहै ॥ औ नित्य एक अनेक द्रव्यसमवेत समवाय संवंध कहियेहै॥सोवी जाति व्यक्तिका गुण गुणिका क्रिया क्रिया वानका औ कार्य कारणका या भेदसें समवाय चतुर्विध मानेहै ॥ इहां कारण पदसेंउपादाने कारण जानणा ॥ औ दोपदार्थोंकी परस्पर अभेद प्रतीति सो तादात्म्यसंवंध है ॥ सोवी मुख्य औ कल्पित भेदसें दो प्रकारका होवे है ॥ अग्नि लोहेका मुख्यतादात्म्य

होवे है ॥ औ रज्जु सर्पका कल्पित तादात्म्य है ॥ तिस कल्पित तादात्म्यकूं मिथ्या तादात्म्य कहेहैं॥सो मिथ्या तादात्म्य ब्रह्म औ प्रपंचका मानेंतो तासें असंगताकी परमार्थसें हानी होवेनहीं औ अन्यतीनों संबधोंका ब्रह्म विपे संभव नहीं॥ काहेतें सो निरवयव है ॥ औ द्रव्यगुण क्रिया जात्यादिसें रहित है ॥ सो " निष्कलं निष्क्रियं शांतं । केवलोनिर्गुणश्च " इत्यादि श्रुतिमें कला अवयव रहित औ क्रियाक्षोभ रहित औ निरुपाधिक निर्गुणहि कहाहै ॥ औ योग्यंयोग्येन संबध्यते यान्याय करि परि च्छिन्न मूर्त्त पदार्थनमें हि संबंध संभवेहै ॥ अमूर्त्त ब्रह्म विपे संभवें नहीं याते ब्रह्म प्रत्यासत्ति औ संयोगादिक संगसे रहितहै ॥ तदुक्तं ॥ प्रत्यासत्ति भवेत्संगः संयोगादि रथापिवा । मूर्तेहि संगवद्दृष्टं परिच्छिन्नं च वादिभिः। तस्माद्विलक्षणस्यास्य संगः स्यात्केन हेतुना इति ॥ याका अर्थ यहहै ॥ प्रत्यासत्ति वा संयोगादिसंग होवेहै इति ॥ सो मूर्त्त पदार्थ औ परिच्छिन्नहि वादियों करके संगवाला देख्याहै औ तिस मूर्त परिच्छिन्नतासें विलक्षण अमूर्त व्यापक रूप सर्वाधिष्ठानकूं किस हेतुसें संग होवेगा ॥ अर्थात् किसि प्रकारसेंबी संगनहीं हेइति ॥ औ " असंगोह्ययं पुरुषः । असंगोनहि स

जते ” इत्यादि श्रुतियों विषेवी पुरुष परमात्मा असंग औ असंग किसिसें जुडता नहीं एसें संग रहितहि कहाहै ॥ यातें ब्रह्मसंग तेंहीन कहिये रहित है ॥ या श्लोक विषेषट् विशेषणों करके ज्ञेयवस्तुका प्रतिपादन किया॥अबमहा वाक्यके विचार अक्षम पुरुषनके निमित्त परम दयालु आचार्यताकूं ध्येय रूपसें प्रतिपादन करेहै ॥ यदोंकार गम्यमिति॥ओंकारगम्य कहिये प्रणवो पासनसेंवी श्रुतिमें ब्रह्मकी प्राप्ति कहिहै॥तिस ओंकारका ध्यान “परंचा परंच ब्रह्मयदोंकारः ” याश्रुतिनें परब्रह्म औ अपरब्रह्म रूपसें प्रणवो पासन द्विविध कहाहै ॥ निर्गुन ब्रह्मकूं परब्रह्म कहेहै ॥ औ निर्गुन ब्रह्मकूं अपर ब्रह्म कहेहै ॥ तामें प्रथम सगुन उपासनाका संक्षेपसें प्रकार कहेहै ॥ तिस सगुन उपासना केवी सप्तसिद्धांत है ॥ एक हिरण्यगर्भकासिद्धांत ॥ दूसरा कपिल मुनिका ॥ तीसरा आपांत मुनिका ॥ चतुर्था सनत्कुमारका ॥ पंचमा ब्रह्मनिष्ठोंका ॥ षष्ठा पशुपतिका ॥ सप्तमा पंचरात्रका ॥ ये सप्त सिद्धांत है ॥ तामें हिरण्य गर्भका सिद्धांत यहहै ॥ त्रिमात्र ॥ त्रिब्रह्म ॥ औ त्रिअक्षररूपओंकार जानिके चिंतन करे॥ अग्नि वायु औ सूर्य ये तीन मात्रहै ॥ ऋक्यजुस् ॥ औ साम ये तीनवेदरूप तीन ब्रह्महै ॥ अकार उकार औ मकार ये तीन

अक्षर है ॥ ये सर्व ओंकार स्वरूपहै ॥ सो ओं
कार मेरा स्वरूपहै ॥ एसे जानिके चिंतनकरे सो
इ वेदवित् है सो "त्रिस्थानश्च त्रिमार्गश्च त्रिब्र
ह्म च त्रिरक्षरम् । त्रिमात्रश्चार्द्धमात्र श्चयस्तं वेद
सवेदविदिति" या अथर्वण वेदकी श्रुतिमें प्रसिद्ध
कहाहै इति ॥ १ ॥ कपिल देवका यह सिद्धांत
है त्रिज्ञान त्रिगुण औ त्रिकरणरूप ओंकारहै ॥
व्यक्तज्ञान अव्यक्तज्ञान औ ज्ञेयज्ञानये तीन ज्ञा
नहै ॥ सत्व रजो औ तमः ये तीनगुणहैं ॥
मन बुद्धि औ अहंकारये तीन करणहै ॥ ये सर्व
व्यष्टि समष्टिरूप ओंकारहै ॥ सो ओंकार मेरा
स्वरूपहै ॥ ऐसें चिंतनकरे ॥२॥ आपांतर मुनिका
यह सिद्धांतहै ॥ त्रिमुख त्रिदेवता औ त्रिप्रयोजन
रूप ओंकारहै॥ गार्हापत्याग्नि दक्षिणाग्नि ॥ औ आ
हवनीयाग्निये तीन मुखहै ॥ ब्रह्माविष्णु औ रुद्र
ये तीन देवताहै ॥ धर्म अर्थ काम ये तीन प्र
योजनहै ॥ ये सर्व ओंकाररूपहै सो ओंकार ब्र
ह्म मेरा स्वरूपहै इति ॥ ३ ॥ औ सनत्कुमार
का सिद्धांत यहहै॥ त्रिकाल त्रिलिंग औ त्रिसंज्ञा
रूप ओंकारहै ॥ भूत वर्त्तमान औ भावी ये ती
न कालहै ॥ स्त्री पुरुष औ क्लीव ये तीनलिंगहै ॥
विश्व तैजस औ प्राज्ञये तीन संज्ञाहै ॥ ये सर्व
ओंकाररूपहै सो ओंकार ब्रह्म मेरा स्वरूपहै ॥

ऐसें चिंतनकरे इति ॥ ४ ॥ औ ब्रह्मनिष्ठोंका सिद्धांत यहहै ॥ त्रिस्थान त्रिपद औ त्रिप्रज्ञारूप ओंकारहै ॥ हृदय कंठ औ तालु ये तीन स्थानहै ॥ जाग्रत् स्वप्न औ सुषुप्तिये तीन पदहैं ॥ वहिः प्रज्ञा अंतरप्रज्ञा औ घनप्रज्ञाये तीन प्रज्ञाहै ॥ ये सर्व ओंकार रूपहै सो ओंकार ब्रम्हमेंहूं एसें चिंतन करे इति ॥ ५ ॥ औ पशुपतिका सिद्धांत यहहै॥त्रिअवस्था त्रिभोग औ त्रिभोक्तारूप ओंकार है ॥ शांतघोर औ मूढये तीन अवस्थाहै ॥ अन्न जल औ सोमये तीन भोगहै ॥ प्राण अग्नि औ सूर्यये तीन भोक्ताहै ॥ येसर्व ओंकार रूपहै॥ सो ओंकार ब्रह्म मेरा स्वरूपहै ॥ एसें चिंतनकरे इति ॥ ६ ॥ औ पंच रात्रका सिद्धांत यहहै ॥ त्रिआत्मा त्रिस्वभाव औ त्रिव्यवहार रूप ओंकार है ॥ वल वीर्य औ तेजये तीन आत्माहै ॥ ज्ञान ऐश्वर्य औ शक्तिये तीन स्वभावहै ॥ संकर्षण प्रद्युम्न औ अनिरुद्धये तीन व्यवहार है ॥ येसर्व ओंकार रूपहै ॥ सो ओंकार ब्रह्म मेराहि स्वरूपहै एसें चिंतन करे इति ॥ ७ ॥ येसप्त सिद्धांतोक्त त्रयसंठ भेदसें सगुन ब्रह्मका ओंकार रूपसे उपासन कहाहै ॥ औ चौसठवा अमात्र रूप निर्गुन उपासनहै ॥ औ मात्राभेदसें भीओंकारका चिंतन वहुत प्रकारका कहाहै ॥ वाष्कल रिषी ए

क मात्रासें चिंतन करेहै ॥ शालरिषी दोमात्रासें नारद सार्द्ध दोमात्रासें औ माडव्य तीन मात्रासे औ वहुत रिषी सार्द्ध तीन मात्रासें औ परसरा दि च्यारि मात्रासें ॥ औ वसिष्ठादि सार्द्ध च्यारि मात्रासें ॥ औ याज्ञवल्क्य अमात्र रूपसें ॥ इत्यादि मात्राभेदसें ओंकार कारकी उपासना कहि है ॥ एक मात्र रूप विराट हैं ॥ दोमात्रा रूप जाग्रत्स्वप्न है ॥ औ तीन मात्रा जाग्र त्स्वप्न सुषुप्तिवा विश्वानर हिरण्यगर्भ औ ईश्वर है ॥ औ सार्द्ध दो मात्रा वीयाके अंतर्भूत हैं ॥ औ सार्द्ध तीन मात्रा अकार उकार मकार औ अर्द्ध मात्र चेतन तुरीय रूप है ॥ च्यारि मात्रा रूप जाग्रदादि तीन प्रपंच औ नाद रूप शक्ति ॥ सार्द्ध च्यारि मात्रा अकार उकार मकार रूप स्थूल सूक्ष्म कारण प्रपंच औ नाद औ अर्द्ध मात्र बिंद चेतन ॥ एसें षटसप्त अष्टमात्रादि भेदसें सगुन उपासना वहुत प्रकारकी होवेहै ॥ औ कार्य ब्रह्म तथा कारण ब्रह्मकी सारी उपास ना सगुन रूप है ॥ औ तिस ओंकारकी सगुण उपासनसें ब्रह्म लोककी प्राप्ति होवेहै ॥ औ ओं कारके श्रुत्युक्त दश नाम है॥तिनोंका अर्थ सहित चिंतन किये सर्वाभिष्टका लाभ होवेहैं ॥ ते नाम दश यह हैं ॥ ओं प्रणव सर्व व्यापी अनंत तार

शुक्र वैद्युत हंस तुरीय परब्रह्म इति ॥ यह ओं कारके सगुन उपासनका प्रकार कहा अब निर्गुन उपासनका प्रकार संक्षेपसें कहे हैं॥ओंकारकू पर ब्रह्म रूप जानिके ध्यान करे ॥ काहे तें ओंकार ब्रह्मका वाचक है औ ब्रह्म ताकावाच्य है ॥ वाच्य वाचकका अभेद होवेहै ॥ वा ओंकार ब्रह्म की न्याई सर्व व्यापी है ॥ सो "ओमित्येदक्षर मिदं सर्वं " या श्रुतिनें प्रसिद्ध कहा है ॥ किंवा ओं वरण ब्रह्म विषे अध्यस्त है ॥ अध्यस्तका अधिष्ठानसें भेद होवे नहीं ॥ किंवा ब्रह्म औ आत्माकी न्याई ओंकारकावी च्यारि मात्रा रूपपाद है॥यातें ब्रह्मात्मासे ओंकारकूं अभेदरूप जानिके चिंतन करे ॥ ताका प्रकार संक्षेपसे कहे है॥ विराट ॥ हिरण्यगर्भ ॥ ईश्वर ॥ औ ईश्वर सा क्षीये च्यारि पाद ब्रह्मके हैं॥ विश्व ॥ तैजस ॥ प्राज्ञ ॥औजविसाक्षीये च्यारिपाद आत्माके है ॥ ताका अभेद जाने ॥एसें ओंकारकेवी अकार ॥ उकार॥ मकार॥ औ अमात्ररूप तुरीय ये च्या रि मात्रारूप पाद जानणे ॥ तिनोंसें ब्रह्म औ आत्माके पादनकूं अभेद जानिलय चिंतन करे॥ स्वर्गादि सप्तांग सहित विराटकूं एकोनीश मुख वाले विश्वसें अभेद जाने ॥ काहेतें दोनो सम ष्टि व्यष्टि स्थूल उपाधि वाला है ॥ औ प्रथम

पादता धर्म दोनोमें समान है ॥ विश्वके भोग
का साधन दश इंद्रिय च्यारि अंतःकरण औ पंच
प्राण मुख कहिये है ॥ तिनमें इंद्रिय दश औ
च्यारि अंतःकरण त्रिपूटीरूप है ॥ औ प्राण
विषे त्रिपुटी नहीं ॥ तिस विराटरूप विश्वकूं
अकारसें अभेद जानि चिंतन करे ॥ काहेतें ती
नों प्रथम पाद है ॥ प्रथमता धर्म समान है ॥ तैसें
हिरण्यगर्भकूं तैजससें अभेद जाने काहेतें दोनों
सूक्ष्म उपाधि वाले है ॥ तिस हिरण्यगर्भ रूप
तैजसकूं उकार रूप जाने काहेतें तीनों विषे
द्वितिय पादता धर्म समान है॥तैसें ईश्वरकूं प्राज्ञसें
अभेदजानें ॥ काहेतें दोनो कारण उपाधि वा
लाहै॥तिस ईश्वररूप प्राज्ञकूं मकाररूप जाने काहे
तें तृतियपादता धर्म तीनोमें समान है॥औ ईश्व
र साक्षी तथा जीव साक्षी दोनोका तो सदा अभे
दहै॥ताकूं ओंकारकापरमार्थ रूप जो तुरीय है ॥
तसें अभेद जाने ॥ काहे तें जैसें समष्टि तीनो
उपाधि गत व्यापक चेतन रूप ईश्वर साक्षी शुद्द
है ॥ औव्यष्टि तीनोपाधि विषे अनुस्यूत चेतन
रूप जीव साक्षी शुद्द है ॥ तैसें अकारादि तीनों
मात्रा विषे अनुगत चेतनरूप अमात्र संज्ञक तुरी
यहै सोवी शुद्द है ॥ यातें ईश्वर साक्षी जीव
साक्षीका तुरीयसें मुख्य अभेद है ॥ औ पूर्वकहे

अकारादि ताकावी अमात्ररूप तुरीयसें लय चिं
तन करे॥ विराट विश्व सहित अकारका उकार वि
षे लय चिंतन करे॥ औ हिरण्यगर्भ तेजससहित
उकारका मकार विषे॥ औ ईश्वर प्राज्ञ सहित
मकारका अमात्ररूप तुरीय विषे लय चिंतन
करे॥ सो तुरीय रूप शुद्ध ब्रह्म में हूं॥ एसें गुरुमुख
सें प्रकार जानिके यत्न शीत मुमुक्षु एकांत देश
में ओंकारका परब्रह्म रूपसें चिंतनकरे॥ तासें
ज्ञान होयकें कैवल्य मोक्षकी प्राप्ति होवेहै॥ औ
कोइ कामनारूप प्रतिबंध होवेतो देव यानमार्ग
द्वारा ब्रह्म लोकमें जायके हिरण्यगर्भ तुल्यभोग
भोगिकें तहां सत्व प्रधानतासें ज्ञान होयके पि
तामह सहित विदेह मोक्षकूं पावेहै॥ यहओंका
रकी उपासना बहुत उपनिषदनेमें प्रतिपादन
करीहै॥ औ मांडुक्यमें विशेष कहिहै॥ ताकावि
सार पंची करणमें कहाहै॥ सो मूलपंचीकरण
सूत्रभूत यहहै॥ " ओंकारं सर्ववेद सारभूतं पंची
कृत महाभूतानि तत्कार्यंच सर्वं विराडित्युच्य
ते॥ एतत्स्थूल शरीर मात्मनः॥ इंद्रियैरर्थोपल
ब्धिर्जागरितं॥ तदुभयाभिमान्यात्मा विश्वएतत्त्र
यमकारः॥ अपंचीकृत पंचमहा भूतानि तत्का
र्यंच सप्तदशकं लिंगं भौतिकं हिरण्यगर्भ इत्युच्य
ते॥ तएत्सूक्ष्मशरीर मात्मनः करणेपूपसंहृते

पादन किया ॥ अब उत्तम भूमिकारूढ पुरुष न
करि अनुभूय औ सर्व सुखकी सीमा औ नि
र्विशेषरूप भूमानंदया श्लोकसें श्रीमदाचार्य
वर्णन करेहै ॥ यदा नंदसिंधाविति ॥

**यदानंद सिंधौ निमग्नः पुमा
न् स्यादविद्याविलासः स
मस्त प्रपंचः ॥ तदानस्फुर
त्यद्भुतं यन्निमितं परंब्रह्म
नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ८ ॥**

जिस आनंद समुद्र विषे जीवन्मुक्त पुरुष जब
निमग्न होवेहै ॥ तब अद्भुतहै जिनोंका निर्मित्त
एसा अविद्याका विलास समस्त प्रपंच ताकूं न
हि स्फुरता ॥ एसा सुखसागर जो नित्य परंब्रह्म
सोइ मै हूं इति पदार्थः ॥ ८ ॥ टीका ॥ पुरुष सा
ध्य अर्थ जो कैवल्य मोक्षताकूं संपादनकरे ॥ वा
शरीर रूप पुरिविषे पूरण बोध करके स्थित होवे
सोइ पुमान् कहिये पुरुष शब्दका अर्थहै ॥ तदु
क्तं ॥ संपादयति कैवल्यं स एव पुरुषोत्तमः इति॥
तासें इतर सारे नपुंसक है ॥ वास्त्रीयां है ॥ तदु
क्तं॥नपुंसकः पुमान् ज्ञेयो यो न वेत्ति हृदि स्थित

मिति ॥ अर्थ यह ॥ योस्व हृदयमें स्थित आनंद
रूप आत्माकूं नहि जानेहै तिस पुरुषकूं नपुंसक
जानणा ॥ वा ज्ञानहीन परतंत्र तासे औ चर्म
धातु रेतरूप गर्भ युक्त होनेसें वा स्त्यायतेः इस
व्युत्पत्तिसें नाना अध्यासिक शब्दजालसें सर्व
अज्ञ पुरुष स्त्रीयां है॥एक ज्ञानीहि पुरुष है ॥ ति
नो विषेवी कोइक ब्रह्मनिष्ठ समाधियत्नसें उत्तम
भूमिकारूढ ब्रह्मानंदरूप समुद्रमें महामगरकी
न्याइ निमग्न होवेहै ॥ ताकी भूमिका जनावने
निमित्त प्रसंगसें वासिष्ठोक्त सप्तज्ञान भूमिका दि
खावेहै ॥ श्लोकः ॥ ज्ञान भूमि शुभेच्छाख्या प्रथ
मा परि कीर्त्तिता ॥ विचारणा द्वितीयास्या तृती
या तनुमानसा ॥ १ ॥ सत्वापत्तिश्चतुर्थीस्यात्त
तो ऽसंसक्ति नामिका ॥ पदार्था भावनी षष्टी स
प्तमी तुर्यगा स्मृता ॥अर्थ यह शुभेच्छाख्य प्रथमा
भूमिका कहिहै ॥ विचारण द्वितीया है ॥ तनुमा
तृतीया ॥ सत्वापत्ति चतुर्थी ॥ तिसतें अनंतर अ
संसक्ति नामिका पंचमी ॥ पदार्था भावनी षष्ठी॥
औ तुर्यगाख्य सप्तमीये सप्तज्ञानभूमिका बुद्धिकी
हैं तिनोके स्वरूप कहेहै ॥ विवेक वैराग्य शमद
मादि सहित मोक्षकी इच्छा ॥ औ तत्साध्य गु
रूपसत्ति पूर्वक श्रवणरूप शुभेच्छाख्यप्रथमा
भूमिहै ॥ औ स्वयुक्तिसें तत्व चिंतन रूप मनन

का अपरपर्याय विचार ताका नाम विचारणा भूमिहै ॥ औ मननसे उत्तर निदिध्यासनसें मन की तनुता कहिये सूक्ष्म अवस्था होवेहै ॥ यातें निदिध्यासनकानाम तनुमानसा भूमिहै ॥ औ शुद्धतत्व साक्षात्कार रूपसत्वापत्ति भूमिहै ॥ औ समाधिसें मनकी निर्विकल्पावस्था हुया रागा भासका संक्षयताका नाम असंसक्ति भूमिहै ॥ औ समाधिकी दृढतासें सर्व पदार्थनके संस्का रोंका संक्षयताका नाम पदार्थो भावनी भूमि है ॥ औ परम प्रकाश आनंदघनविषे वृत्तिका विलय हुया फेर ताका अनुत्थान ताका नाम तुर्यगा भूमिहै ॥ इन सप्तभूमिका विषे आदि ती न जाग्रत् अवस्था रूप कहि जावेहै ॥ तदुक्तं ॥ भूमिका त्रितयं त्वेतत् राम जाग्रदिति स्थितमि ति ॥ अर्थ यह हेराम ये तीन भूमिका जाग्रत् वि षे स्थितहै॥तात्पर्य यहकि जितनें पर्यंत भेद बुद्धि है तितनें पर्यंत जगत् जाग्रत्रूपहि देखिय त है॥सो तीन भूमिका मेंद्वैत प्रतीति होवेहै॥औ चतुर्थी भूमिका स्वप्नरूप कहि जावेहै ॥ तदुक्तं॥ पश्यति स्वप्नवल्लोकं चतुर्थी भूमिका मता इति॥ अर्थ यह ॥ साराजगत स्वप्नकी न्याइ देखेहै सा चतुर्थी भूमिका मानीहै इति ॥ तात्पर्य यहकि ब्रह्मका अपरोक्ष ज्ञान हुवे प्रपंच स्वप्नवत् मिथ्या

विद्वान् जानेहै ॥ औ पंचमी तथा षष्ठी भूमिका सुषुप्ति तथा गाढसुषुप्ति कहि जावैहै ॥ तदुक्तं ॥ पंचमी भूमिकामेत्य सुषुप्तिपदनामिकां ॥ षष्ठीं गाढ सुषुप्त्याख्यां क्रमात्पततिभूमिकामिति ॥ अर्थ स्पष्टहै ॥ औ जाग्रत्स्वप्न सुषुप्ति रूप षट् भूमिका की अपेक्षासें सप्तमी भूमिका तुर्यगा कहि जावैहै ॥ तदुक्तं ॥ तुर्यं तुर्यः परानंदोवैदेही मुक्त एव सः इति अर्थ स्पष्ट भाव यहहै ॥ जैसें पंचमी भूमिका वालासमाधिसें स्वतः प्रारब्ध प्रेरी तउत्थान होवैहै॥औ षष्ठी भूमिकावाला परप्रयत्नसें उत्थान कादाचित्क होवैहै ॥ तैसें तुर्य कहिये चतुर्थि अवस्था संज्ञक तुर्यगा सप्तमी भूमिका रूढ स्वतः वा परप्रयत्नसेंबी उत्थान होवे नहीं ॥ परमानंदस्वरूप विदेह मुक्तहि कह्या जावे है ॥ औ पूर्व तीन भूमिका स्थित ब्रह्म जिज्ञासु कहे जावैहै ॥ औ चतुर्थी भूमिका विषे स्थित ब्रह्मवित् कह्या जावैहै ॥ औ उत्तर पंचमी षष्ठी सप्तमी भूमिका रूढ यथा क्रमसें वर वरी यानवरेष्ठ कहे जावैहै ॥ औ तीन भूमिका वालेके देहपातहुवे ज्ञानके अभावते मोक्ष होवे नहीं ॥ किंतु योग भ्रष्ट होवैहै ॥ सो उत्तर जन्मविषे ज्ञान पायके मोक्ष होवैहै ॥ सो वासिष्ठ ग्रंथमें तथा गीतामें प्रसिद्ध कहाहै ॥ औ चतुर्थी भूमिका रूढ

विद्वान्‌कूं फेर जन्म होवे नहीं ॥ काहेतें “ अविद्या काम कर्माणि जन्मारंभाणि हेतवः” इस शास्त्रोक्त जन्मके हेतु अविद्या काम कर्महे सो ज्ञानसें ताका निवर्त्त भयेहै ॥ अविद्या मूला औ तूला भेदसें दोप्रकारकी है ॥ स्वरूपावरकमूला है सा ज्ञानसें निवर्त्त होवेहै ॥ अविद्या अज्ञान माया सारे पर्याय शब्दहै ॥ पदार्थ एकही है ॥ औ कार्यावरक तूला अविद्याहै ॥ सा अकिंचित्कर है जन्मकी हेतु नहीं ॥ कार्य क्षममूला है ताकी निवृत्ति अपरोक्षज्ञानसें “ कार्य क्षम नश्यति चापरोक्षतः ” इस श्रुति विषे स्पष्ट कहिहै ॥ औ काम अनेक प्रकारकाहै ॥ सोबी तत्वज्ञानके उदयहुवे संपूर्ण निवर्त होवेहै ॥ सो “ किमिच्छन् कस्य कामाय ” इस श्रुतिने काम्यकामुक दोनोंका निषेध कियाहै ॥ इस श्रुतिका व्याख्यान रूप सारा तृप्ति दीपहै ॥ औ कर्म तीन प्रकारके है ॥ संचित आगामि औ प्रारब्ध ॥ पूर्वदेहांतरमें किया होवे औ जिसिनें फलारंभ नहि किया औ भाविजन्मके हेतु होवेसो संचित कर्म कहिये है ॥ औ जोपूर्व किया होवे औ वर्तमान शरीरकी स्थितिका हेतु फलारंभक कर्म प्रारब्ध कहियेहै ॥ सोबी इच्छा अनिच्छा औ परेच्छा भेदसें त्रिविध कह्या जावेहै ॥ तदुक्तं ॥

इच्छा निच्छा परेच्छा च प्रारब्धं त्रिविधं स्मृतमिति ॥ औ जोवर्त्तमान शरीर विषे किया भावि जन्मका हेतु सो आगामी कर्म कहिये है॥ जाकूं क्रियमाण कहेहैं तिन त्रिविध कर्मो विषे "तदधिगमे उत्तर पूर्वाधयोरश्लेष विनाशौ" इस व्यास सूत्र विषे तिस ब्रह्मके साक्षात् हुवे विद्वान्के पूर्व शब्द वाचि संचित कर्मका नाश कहा है ॥ औ उत्तर शब्दवाचि आगामी कर्मका अश्लेप कहाहै॥ तैसेंहि "तद्यथेषीका तूलमग्नौ प्रोतं प्रदूयेत । यथा पुष्कर पलाश आपोन श्लिष्यते" याश्रुत्यों विषेवी अग्निक्षिप्त इषीका तूलकी न्याइ संचित कर्मका नाश औ जलगत पद्मपत्रकी न्याइ क्रियमाण कर्मका अश्लेप स्पष्ट कहाहै ॥ तात्पर्य यहकि आगामी कर्मका स्पर्श ज्ञानीकूं होवे नहीं ॥ किंतु शुभ कर्मका फल प्रियवादी भक्तकूं होवेहै॥ औ अशुभका फल द्वेषीकूं होवेहै ॥ सो "सुहृदः साधु कृत्यां द्विषंतः पापकृत्यां । तद्द्वेषी प्रियवादिनः ।" इत्यादि श्रुति शास्त्रोंमें प्रसिद्ध कहाहै ॥ औ प्रारब्ध कर्मका तो भोगसेंही नाश होवेहै ॥ तहां व्यास सूत्रं ॥ "भोगेनत्वितरे क्षप यित्वासंपद्यते" अर्थ यह ॥ इतरे कहिये संचित आगामीसें भिन्न जो प्रारब्ध कर्म हैं सो विद्वान् भोगसे क्षेपन करके कैवल्य मोक्षकूं पावे

है इति ॥ यातें प्रारब्ध कर्मका मुक्त इषुकी न्या
इ फल दीये विना नाश होवे नहीं ॥ सो "नाभुं
क्ते क्षियते कर्म । प्रारब्धं भोगतो नश्येदित्यादि"
शास्त्रोमेंबी प्रसिद्ध कहाहै ॥ परंतु यह वादीयोंकी
शंकापरिहारार्थ लेखहै ॥ औ ज्ञानीकी दृष्टिसें
वा "क्षीयंते चास्य कर्माणि । ज्ञानाग्निः सर्व क
र्माणि" याश्रुति स्मृतिके तात्पर्य विचारेसें अद्व
य ब्रह्मके ज्ञान हुवे प्रारब्धकावी संभव नहीं ॥
औ प्रारब्धके अंगीकार किये अनेक दोषनकी प्रा
प्ति होवेहै॥सो आचार्यांने सिद्धांत ग्रंथनमें स्पष्ट
कहाहै ॥ यातें यह सिद्ध भया चतुर्थी भूमका रू
ढ ब्रम्हवितकूं फेर संसार होवे नहीं ॥ किंतु विदे
ह मोक्ष होवेहै ॥ यद्यपि मोक्ष विषेतो संदेह नहीं॥
तथापि समाधिके अभावतें औ विक्षेप सक्तिके
सदभावतें ताकूं जीवनमुक्तिके विलक्षण सुखका
लाभ होवे नहीं ॥ सो वृत्तिजन्य विशेष सुखउ
त्तर भूमिका वानकूं होवेहै ॥ काहेतें तिनोंने वै
राग्य बोध औ उपरति तीनो फलावधि पर्यंत
संपादन कियेहै ॥ औ तत्वबोध मनो नाश वास
नाक्षय इन तीनोंका चिरकाल युगपत अभ्यास
कियाहै ॥ यातें समाधि युक्त जीवन्मुक्त सदा ब्र
ह्मानंद विषे निमग्न रहैहै ॥ अब वैराग्यादिक ती
नोके हेतु स्वरूप फल औ अवधि दिखावेहै ॥

विषयोंमें दोष दृष्टि वैराग्यका हेतु है ॥ औ वि
षयोंके त्यागकी इच्छा वैराग्यका स्वरूपहै ॥ पु
नः भोगनमें अदीनता सो वैराग्यका फल है ॥
विषयोंके दोष यहहै ॥ एक एक विषयके संबधसें
मृग मातंग पतंग भृंगादिकोंका मृत्यु होवेहै॥औ
एक पुरुष जो पंचोंकूं सेवता है ताके नाश होने
में क्या कहना ॥ सो " एकः प्रमादी स कथं न ह
न्यते यः सेवते पंचभिरेव पंच ।" इत्यादि वाक्य
नसें शास्त्रोंमें प्रसिद्ध कहाहै ॥ औ विषयनके
ध्यान विषे " ध्यायतो विषयान् पुंसः संगस्तेषू
पजायते " इत्यादि वाक्यनसें गीतामें विषय
नके ध्यानमात्रसें गुणत्वबुद्धिरूप संगतासें
कामक्रोधादि षट् महान् अनर्थ कहाहै ॥ तैसें ता
के साधन स्त्री पुत्र धनादि विषेबी बहुत दोष
शास्त्रोंमें कहाहै॥ "अनृतं साहसंमाया " इत्यादि
वाक्यसें अनृत साहस माया मूर्खत्व अति लो
भिता अशौचत्व निर्दयत्व ये स्वभावि स्त्रीके अ
ष्ट दोष ॥ औ धर्म अर्थ मोक्षकी बिगारने हारी
कहिहै ॥ औ " अलभ्यमानस्तनयः पितरौ क्ले
शयेच्चिरं " इत्यादि वाक्यनसें पुत्रके अलाभ
सेमाता पिताकू चिरकाल दुःखसें आदिलेकें ग
र्भपात औ जन्मकष्ट औ विपरीत ग्रहसें औ रो
गादि निमित्तसें औ बाल्यतासें वा व्यसनादिसें

औ अलब्ध दारसें औ संततिके अभावसें वा बहु
कुटंबी हुवे धनहीनतासें औ धनहुवे स्ववशा
भावसें औ वश हुवेबी मृत्युतें महत दुःख होवेहै
इत्यादि पुत्रके अनेक दोष कहाहै ॥ औ" अर्था
नामर्जने दुःखं " इत्यादि वाक्यनसें द्रव्यके सं
पादनमें पालनमें व्ययविषे औ विनाशमें दुःख
कहाहै ॥ औ भिक्षुगीतमें हिंसादिक पंचदश अ
नर्थ द्रव्यविषे कहाहै ॥ एसें " जन्म मृत्यु जरा
व्याधि दुःख दोषानुदर्शनं " इसगीतावाक्यसें
जन्मसें आदिलेके बाल्ययौवन जरामृत्यु सप्तधातु
प्रवेश गर्भ वास नरकादि दुःख वारंवार होवे है॥इ
त्यादि दोष गर्भोपनिषद औ आत्म पुराणमेंकहाहै
औ तैसें स्वर्गादि भोगनविषेबी " क्षयातिशय दो
षेण स्वर्गोहियो यदा तदा" इत्यादि वाक्यनसें अ
नेक दोष कहाहै॥सो सारे दोष दर्शन वैराग्यके हे
तुहै वा विवेक वा स्वधर्म वा परमेश्वरानुग्रह वैरा
ग्यके हेतुहै ॥ सो वैराग्य मंद तीव्र औ तीव्रतर
याभेदसें त्रिविधहै ॥ तामेंतीव्रततरका इहां अं
गकी कारहै ॥ अथवा पर अपर भेदसें वैराग्य
दो प्रकारकाहै ॥ तामें अपर फेर चारि प्रकारका
है यतमान व्यतिरेक एकेंद्रिय औ वशीकार ॥
त्याग निमित्त उद्योगोत्कर्ष ताकानाम यतमानहै
॥ विद्यमान दोषनका भावाभाव विवेकका ना

म व्यतिरेकहै ॥-बाह्य विषयनके त्याग कियेबी
तृष्णाका औत्सुक्य मात्र मन विषे अवस्थान
ताका नाम एकेंद्रियहै ॥ औ सर्वथा वितृष्णाका
नाम वशीकार वैराग्यहै ॥ सो " दृष्टानु श्रावि
क विषयवि तृष्णस्य वशीकार संज्ञा वैराग्य मि
ति" या सूत्रसें पतंजलि भगवाननें प्रसिद्ध कहा
है ॥ यह वशीकार वैराग्य संप्रज्ञात समाधिका
अंतरंग साधनहै ॥ यातें योगियाकूं ज्ञान प्रसाद
कहेहैं ॥ अबपर वैराग्य दिखावेहै ॥ त्रिगुणात्म
क प्रधानते प्रथक पुरुषके साक्षात् हुवे सर्व मा
या गुणतैं वितृष्णका नाम परवैराग्यहै ॥ सो अ
संप्रज्ञातसमाधिका अंतरंग साधनहै सोबी यो
ग शास्त्रमें कहाहै ॥ तिस वैराग्य वानकूं जो च
क्रवर्ति राजासे आदिलेके ब्रह्मा पर्यंत शतशतगु
न सुखातिशय तासें उत्तर उत्तर सुख निमित
सर्वकूं दीनता होवेहै सो होवे नहीं यह वैराग्य
का फलहै ॥अवज्ञानके हेतु स्वरूप फल दिखावे
हैं ॥ वेदांत शास्त्रका विचार ज्ञानका हेतुहै ॥ त
दुक्तं ॥ वेदांतार्थ विचारेण जायते ज्ञानमुत्तममि
ति ॥ जो कोइ कहे अन्यशास्त्रनसें ज्ञानक्युं न
ही होता तहां सुनो ॥ ब्रह्मात्माके एकत्व ज्ञान
अन्य शास्त्रनसें संभवे नही ॥ सो " कर्मशास्त्रे
कुतो ज्ञानं तर्केनैवास्ति निश्चयः ॥ सांख्ययोगौ

धि महावाक्यका श्रवणहै ॥ औ अपरोक्ष ज्ञान
के दृढताके आभतें तिस श्रवणादिका अभ्यास क
रें ॥ असकृता वृत्तिका नाम अभ्यासहै ॥ सो
"आवृत्तिरसकृदुपदेशात्" या व्यास सूत्रमें बी
विधान कियाहै॥औ "श्रोतव्यो मंतव्यो निदिध्या
सितव्यः" या श्रुतिनेंबी ज्ञाननिमित्त श्रवण म
नन निदिध्यासनका विधान कियाहै॥यातें महा
वाक्यका श्रवण वा श्रवणादि तीनज्ञानके हेतुहै ॥
औ तत्वमिथ्याके विवेचनपूर्वक अद्वय निश्चय
ज्ञानका स्वरूपहै ॥ तिस ज्ञानसें अहंग्रंथीका भे
द न होवेहै ॥ सो "भिद्यते हृदयग्रंथिः ॥ एत
द्यो वेद निहितं गुहां सो विद्या ग्रंथि विकिरति"
इत्यादि श्रुतियोंमें प्रसिद्ध कहाहै॥तिस ग्रंथीका अ
नुदयज्ञानका फलहै॥कर्तृत्व धर्मवाला अहंकारका
औ ज्ञानस्वरूप आत्माका तादात्म्याध्यासताका
नाम अहं ग्रंथीहै ॥ तदुक्तं ॥ अहं कारस्य कर्तृत्वं
चित्यध्यस्य तथा चितः ॥ स्फुरतिं चाकृतौ ग्रंथिं
कुर्यान्मायातयोर्दृढ मिति ॥ तिस कल्पिताध्या
सकी ज्ञानसें निवृत्ति होवेहै ॥ काहेतें अहंकार
का तादात्म्य त्रिविध कहाहै ॥ भ्रमज कर्मज औ
सहज ॥ साक्षीके साथि अहंकारका भ्रमज तादा
त्म्य है औ देहके साथि कर्मजहै ॥ औ आभास
के साथि सहजहै ॥ तिनमें ज्ञानसें भ्रमज तादा

त्म्यकी निवृत्ति होवैहै ॥ औ देह पातपर्यंत अप
र दोनो रहेहै ॥ ताके विषे मिथ्यात्व निश्चय
किये ज्ञानवानकी कछुबी क्षति होवे नहीं ॥ ता
त्पर्य यह हैं ॥ अहं शब्दका अर्थ एक मुख्यहै दूस
रा अमुख्यहै ॥ कूटस्थ आभास औ देह इन ती
नोंका विवेचन नहि करके एकी भावसें जो अहं
ता सो मुख्यहै ॥ तिस विषे मूढजुडतेहै॥ तदुक्तं ॥
अन्योन्याध्यासरूपेण कूटस्थाभासयोर्वपुः ॥ ए
की भूय भवे न्मुख्यस्तत्र मूढैः प्रयुज्यते इति ॥
औ अहं शब्दका अमुख्यार्थ द्विविध है॥ ताके वि
पे पर्याय करके विद्वान् व्यवहार करेहै॥अहंगच्छा
मि इत्यादि लौकिक व्यवहार समय विद्वान् अहं
शब्दका अर्थ आभास विषे योजन करेहै ॥ औ
असंगोहं शिवोहं शुद्धोहं यावैदिक व्यवहारविषे
अहं शब्दार्थ कूटस्थ विषे योजन करेहै॥ यातें ग्रं
थीके भेदन हुवे फेर अहंकारादि दृश्यवर्गके
शोधि दधि उद्धृत सर्पिकी न्याइ तादात्म्याध्यास
होवे नहीं ॥ तदुक्तं ॥ क्षीरात्सर्पिर्यथोद्धृत्य क्षिप्तं
तस्मिन्न पूर्ववत् ॥ बुद्ध्यादेर्ज्ञस्तथाऽ सत्यान्न दे
हि पूर्व वद्भवे दिति ॥ यातें यह सिद्धभया पुनः
ग्रंथिका अनुदय ज्ञानका फलहै ॥ यह ज्ञान का
हे तुस्वरूप औ फल निरूपन किया ॥तदुक्तं॥ श्र
वणादि त्रतयं तद्वत्तत्त्व मिथ्या विवेचनं ॥ पुन

ग्रंथि रुनुदयो-बोधस्यैते. त्रयो मताः इति ॥ अ
ब उपरतिके-हेत्वादित्रय दिखावे है ॥ यमादि
अष्ट योगांग-उपरतिका हेतुहै ॥ औ बुद्धिका नि
रोध उपरतिका स्वरूपहै ॥ औ व्यवहारका परि
क्षय उपरतिका-फलहै॥तदुक्तं ॥ यमादिर्धीनिरोध
श्च व्यवहारस्य संक्षयः इति ॥ यमादि योगांग अष्ट
यहहै ॥ यम-नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार
धारणा ध्यान औ समाधि ॥ तिनविषे अहिंसा स
त्यअस्तेय ब्रह्मचर्य अपरिग्रह या भेदसें यम पंच प्र
कारकाहै ॥ औ स्वाध्याय तप शौच संतोष ईश्वर
प्रणिधान ये पंचविध नियमहै ॥ तदुक्तं ॥ अहिंसा
सत्यमस्तेय ब्रम्हचर्या परिग्रहाः । स्वाध्यायस्तपः शे
च मीश्वरध्यानमतृष्णता इति ॥ स्वाध्याय नाम इ
हां प्रणवादि जपकाहै ॥ अस्तेयनाम परद्रव्य ते
व्यावृत्ति ॥ कन्यअर्थ स्पष्टहै ॥ पद्मस्वस्तिकादी
निप्रोक्तान्यासनानि च ॥ इत्यादि शास्त्रोक्त
आसनहै ॥ औ योगग्रंथनमें चौरासी आसन
कहाहै ॥ तिनमें पद्मादि आसन प्रधान है ॥ औ
"पूरकः कुंभकस्तद्वद्रेचकश्च त्रिधा स्मृतः" यह
शास्त्रोक्त रेचक पूरक कुंभक त्रिधा प्राणायामहै ॥
कुंभक अंतर बाहर भेदसें दो प्रकारका है ॥ औ
सगर्भ अगर्भ भेदसें प्राणायाम दो प्रकारका है ॥
ओंकार उच्चार सहितका नाम सगर्भहै ॥ औ

तासें रहितका नाम अगर्भ है ॥ तामें सगर्भ प्रा
णायाम उत्तमहै ॥ औ " प्रत्याहारः सविज्ञय
इंद्रियाणां विनिग्रहः " यह शास्त्रोक्त विषयनतें
इंद्रियनका निरोध प्रत्याहार कहिये है ॥ औ "
धारणा मनसो ज्ञेया बंधनं ब्रह्म सद्मनि ॥ यशा
स्त्रोक्त ब्रह्म विषे मनका संयोजन धारणा कहिये
है ॥ इहां षट्चक्रों विषे वा तत्त्वों विषे चित्त स्था
पनकी अपेक्षा नहीं ॥ औ " ध्यानं प्रत्यय संता
नः " यह शास्त्रोक्त मनका प्रत्यय संतान कहिये
निरंतर ब्रह्माकार वृत्तिका प्रवाह ध्यानहै ॥ औ
" प्रत्ययैकतानता ध्यानं" या योग सूत्रमेंबी ए
हि लक्षण कहाहै ॥ औ समाधिका लक्षण पूर्व
कहाहै ॥ सविकल्प समाधि इहां अष्टम अंग जा
नणा ॥ ये अष्ट अंग उपरतिके हेतुहै ॥ औ स्व
रूप फल पूर्व कहाहै ॥ अब वैराग्यतत्वबोध
औ उपरातिकी अवधि दिखावे है ॥ ब्रह्मलोक
बी जरित तृणवत् तुच्छजाने यह वैराग्यकी अवधि
है ॥ औ देहात्मज्ञानवत् परात्मा विषे दृढ अभेद
निश्चय ज्ञानकी अवधिहै॥औ सुपुप्तिवत सर्व विस्मृ
ति सा उपरतिकी अवधिहै ॥ तदुक्तं॥ब्रह्म लोक तृ
णी कारो वैराग्यस्यावधिर्मतः ॥देहात्मवर्त्परमात्म
त्वदाढर्येबोधः समाप्यते ॥ सुपुप्ति वद्दिस्मृतिः
सीमा भवेदु परमस्यहीति ॥ ये वैराग्य बोध औ

उपराति तीनों परस्पर सहकारीहैं ॥ इन तीनोकी सम्यक् प्राप्ति महत् तपका फल है ॥ वा परमेश्वर तथा महतोंके अनुग्रहसे होवे है ॥ औ तिन वैराग्य बोध औ उपरतिके लाभ हुवे मनोनाश वासना क्षय औ दृढ बोधसें संपूर्ण विक्षेपकी निवृत्ति लक्षणशांति होवे है ॥ तब प्रशांत पुरुष अगाध ब्रह्मानंदसागरमें निमग्न होवेहै ॥ कदाचित् क्षोभकूं नहि पावता॥काहेतें क्षोभका निमित्त अज्ञान औ वासना औ मन सो ताके दृढाभ्याससें निवृत्त भया है॥सो मनोनाश वासना क्षय औ तत्वबोध ये तीनो परस्पर हेतु होनेते तिनोंका सहचार अभ्यास वासिष्ठमें कहा है ॥ ज्ञानका स्वरूप पूर्व कहाहै ॥ अब वासना क्षयके निमित्त वासना स्वरूप मिभाग औ मनोनाश दिखावने निमित्त मनका स्वरूप कहेहै ॥ सूक्ष्म संस्कारका नाम वासना है ॥ वा पूर्वापर विचार विना दृढ भावनासें जो पदार्थका आदान सा वासना कहिये है ॥ तदुक्तं ॥ दृढभावनया त्यक्त पूर्वापर विचारणं ॥ यदादानं पदार्थस्य वासना सा प्रकीर्तिता इति ॥ सा वासना शुद्धा शुद्धभेदसें दो प्रकारकी है ॥ तदुक्तं ॥ वासना द्विविधा प्रोक्ता शुद्धा च मलिना तथा ॥ मलिना जन्मनो हेतुः शुद्धा ,

विनाशिनीति ॥ तिन दोनोंमें मलीन वासना जन्मकी हेतु है ॥ औ शुद्ध जन्मादि संसार विनाश करने हारिहै ॥ मलीन वासना सुप्त औ प्रबुद्ध भेदसें दो प्रकारकी है वृक्षादिकोमें सुप्त वासनाहै ॥ मनुष्यादिकनमें प्रबुद्ध है ॥ सावी लोकशास्त्र औ देहभेदसें त्रिविध है॥ये तीनो दृढ बोधके प्रतिबंध कहे ॥ तदुक्तं ॥लोकवासनयाजंतु शास्त्रवासनयापि वा ॥ देहवासनया ज्ञानं यथाव न्नैव जायते इति ॥ अर्थयह॥जंतुकुं लोकवासनासें औ शास्त्रवासनासें औ देहवासनासें यथावत् नउदय होवे नही ॥ सर्व लोक मेरी स्तुति कोइवी निंदा नकरे औ लोकमें मेरी प्रतिष्ठा ह यह लोक वासना है ॥ औ शास्त्र वा पाठ वासना अर्थ वासना औ अनुष्ठान सना याभेदसें त्रिविधहै ॥ सो भरद्वाज द औ निदागकूं यथा क्रम तीनों वा शास्त्रोमें कहिहै सोतीनो त्रिविध वासना गके ज्ञानकूं प्राप्त भये ॥ औ देह वासन गुणाधान औ मलापनयन भेदसें दो प्रकार है ॥ सोवी प्रत्येक लोक शास्त्रभेदसें गुणाध औ मलापनयन वासना द्विविधहै ॥ सो ज्ञ हीन विपयी पुरुषनविषे प्रसिद्धहै ॥ सा " इ र नाश दर्शी त्वाद्वासना न प्रवर्तते " इस

नसें विद्वान्कूं देहवासना होवे नही ये सर्व वास
ना मलीनहै ॥ सो शुद्ध वासनाके उदय हुया नि
वृत्त होवेहै ॥शुद्ध वासनाबी दोप्रकारकी है ॥ एक
मैत्रि करुणा मुदितादिक दैवि संपदा रूपहै ॥
औ दूसरी अद्वैत केवल चिन्मय वासनाहै ॥
ताके अच्छि तरहसें संपादन किये मलीन वास
नाका क्षय होवेहै ॥ अब मनो नाशका प्रकार दि
खावेहै ॥ मनका नाश द्विविधहै ॥ एक स्वरूप
नाश दूसरा अरूप नाश ॥ तामें स्वरूप नाश
मनका जीवन्मुक्ति दशा विषे होवेहै ॥ तदुक्तं ॥
स्वरूपो सौ मनो नाशो जीवन्मुक्तस्य विद्यते इ
ति ॥ तात्पर्य यहकि "मनो द्विविधं प्रोक्तं शुद्धंचा
शुद्ध मेव च ॥ अशुद्धं काम संपर्का च्छुद्धं कामवि
वर्जितं " इस शास्त्र वचनसें मन शुद्ध औ अशु
द्ध भेदसें दोप्रकारका है तामें कामसंकल्प सहित
अशुद्धहै सो प्रयत्नसें नाश होवेहै ॥ औ कामादि
रहित शुद्ध मन अरूपाख्य विदेह मोक्ष पर्यंत
रहेहै ॥ यातें जीवन्मुक्तकेमनका स्वरूप नाश तू
द्धोनें कहाहै ॥ जो कोइ कहे "भीष्मोहि देवः ।
चंचलं हि मनः कृष्ण । विषमश्चित्त नियहः । च
लेच्चित्तं सतामपि । स्वभावो दुरतिक्रमः " इ
त्यादि श्रुति स्मृति शास्त्रोंमें मन भयानक चं
चल विषम ग्रह चल औ स्वभावापरिहार कहाहै॥

यातें जीवत कालमें मनका निरोध संभवे नहीं॥ तहां सुनो मनका स्वभाव जैसा श्रुति शास्त्रोंनें कहाहै ॥ एसाहिहै ॥ तोबी ताका निग्रह उपायनसें होवेहै ॥ सो मन निग्रहका उपाय कौन है ॥ तहां सुनो ॥ मनका बीज दो है एक प्राण स्पंदन दूसरी वासना सो "द्वेबीजे राम चित्तस्य। प्राण स्पंदन वासने" इस वाक्यसें वासिष्ठमें प्रसिद्ध कहा है ॥ चित्त औ मन पर्यायहि शब्दहै ताके नाशका उपायबी "द्वौक्रमौ चित्त नाशस्य योगो ज्ञानं च राघव" इस वचनसे योग औ ज्ञान कहाहै चित्त वृत्ति निरोधका नाम योगहै॥औ सम्यक् तत्त्व निरीक्षणका नाम ज्ञानहै ॥ सो पतंजलि भगवाननेंबी"योगश्चित्त वृत्ति निरोधः" या सूत्रमें योगका लक्षण कहाहै॥तहां वृत्ति प्रमाण विपर्यय विकल्पादि भेदसें पंच प्रकारकी कहिहै॥ किंवा "अभ्यासेन तुकौंतेय वैराग्येण च गृह्यते॥ इस भगवत् वचनतें औ "अभ्यास वैराग्याभ्यांतन्निरोधः" इस योग सूत्रसें अभ्यास औ वैराग्यसें मनका निरोध कहाहै ॥ असकृदा वृत्तिका नाम अभ्यासहै ॥ सो " तत्रस्थितौ यत्नोभ्यासः" इस योग सूत्रमें असंग पुरुष विषे चित्तकि स्थिति निमित्त यत्न विशेष अभ्यासकालक्षण कहाहै ॥ औ वैराग्य पर अपर पूर्व कहाहै ॥ किंवा " अ

... । विद्याधि गम साधु संगम एवच ॥ वास
ना संपरित्यागः प्राणस्पंदानिरोधनं ” यावासि
श्चोक्तिसें अध्यात्मविद्याका लाभ साधु संगम
वासनाका त्याग औ प्राण गतिका निरोध ये च
तुर्विध युक्तिसें मनका निरोध होवेहै ॥ याकूं शा
स्त्रोंमें क्रमनिग्रह कहाहै ॥ औ तासें भिन्न स्वमन
मुख प्राण पीडन औ चक्षुरादि गोलकोंके निरो
धकूं हठनिग्रह कहाहै ॥ तिन दोनोंमे क्रमनि
ग्रह श्रेष्ठहै ॥ वृद्धोंनेंबी क्रमनिग्रह अंगीकार कि
याहै ॥ इस प्रकार निग्रह किया मनवद्ध मुक्तो म
हीपाल इस न्याय करि अल्प देहयात्रामात्रसें
संतुष्ट होवेहै ॥ औ निग्रहित मनकूं समाधिज
न्य महान सुखका लाभ होवेहै ॥ यातें मननिग्रह
निमित्त अवश्य प्रयत्न कर्तव्यहै ॥ औ परमेश्व
राश्रित होइ यत्नकरे ताकू प्रतिबंधरहित अव
श्य फलकी सिद्धि होवेहे ॥ जैसें टिटभनें यत्न
बलसें सागरसें अंडा लिया ॥ सो “ उत्सेक उद
धेर्यद्वत् कुशाग्रेणैकविंदुना ॥ मनसो निग्रहस्त
द्वद्भवेदपरिखेदतः ” इस मांडुक्यकी कारिका
नें मननिग्रहार्थ उदाहरण प्रसिद्ध कहाहै औ
।च्छेद्वाङ्मनसि प्राज्ञ तद्यच्छेज्ज्ञानमात्मनि ” इ
यादि उपाय श्रुतिमें कहाहै ॥ यातें यह सिद्ध
नया उपायसें मनका स्वरूप नाश होवेहै ॥ सो

स्वरूप मनकानाश जीवन्मुक्तका कहाहै॥औ "अरूपस्तु, मनोनाशो, मयोक्त रघूद्दह विदेह मुक्तः" इस वासिष्ठोक्तिसें अरूप मनोनाश विदेहमुक्तका कहाहै ॥ यह वासनाक्षय मनोनाश दिखाया ॥ तासें दृढ बोध होवे है ॥ औ बोधसें सम्यक् वासना क्षयतासें मनोनाश होवे है॥ ऐसे तीनो परस्पर हेतु है ॥ तिनोंका सहचार, अभ्यास-करे सो " तत्वज्ञान मनोनाशो वासनाक्षय एव च ॥ मिथःकारणतां गत्वा दुःसाध्यानि स्थितान्यतः" इस वासिष्ठ वचनसें प्रसिद्ध कहाहै ॥ वासनाके नाश हुवे चिंता क्रियाकावी नाश होवे है ॥ औ क्रिया चिंता वासनारू[illegible]कके विच्छेदसें

होवे ॥ औ बाल्यपांडित्यता दोनोसें निर्वेद पा
यके अनंतर मुनि होवे ॥ औ मौन तथा अमौन
कहिये बाल्यपांडित्यता त्यागके भूमानंद ,स्थि
ति लक्षण ब्राह्मण होवे इति ॥ तिसभूमानंद
सिंधुविषे निमग्न ब्रह्मवित्तमकूं विक्षेपरूप प्रपंच
प्रती होवे नहीं ॥ या अर्थकूं अब श्लोकके द्विती
य औ तृतीय पादसें आचार्य प्रतिपादन करेहै ॥
अविद्या विलासमिति ॥ अद्भुत है जिनोका नि
मित्त एसा विचित्र गुण स्वभाव क्रियावाला अ
विद्याका विलास कहिये कार्य यह भूत भौतिकरू-
प प्रपंचसो तिस भूमानंद सागरमें निमग्न जीव
न्मुक्तकूं प्रतीति होवे नहीं ॥ स्वसत्तास्फूर्ति देके
ब्रह्म सर्व जगतका निर्वाहक होनेतें इहा निमित्त
कहेहै ॥ जैसें लोकनकी बाह्यचेष्टाका निमित्त
सूर्य है ॥ तैसें सर्व व्यवहारका निमित्त ब्रम्हहै ॥
औ सो ब्रह्म सर्व विश्वकूं धारि रहाहै औ सदा
असंगहै ॥ औ सर्व व्यापकहुवा निर्लेप है ॥ औ
सर्व शरीरोंमे।स्थित हुवा अशरीर है ॥ यातें अद्भु
त कहिये आश्चर्य रूपहै ॥ औ ताका वक्तातथा ज्ञा
तावी कठोपनिषदमें आश्चर्य रूप कहाहै ॥ तिस
ब्रह्म विषे सूर्यरश्मी आरोपित मरुजलकी न्याइ
कल्पित अविद्याका विलास है ॥ सो ब्रह्मानंदनि
मग्न पुरुषकूं भान होवेनही ॥ सो " यत्र सर्वादमें

वा भूतत्रकेन कं पश्येत् " इत्यादि श्रुतिमेंबी क
हाहै ताकूं एक भूमानंदहीं भान होवेहै ॥ तिस
भूमा विषे द्वैतकि कल्पनावी नही ॥ सो " यत्र
नान्यत्पश्यतिनान्यच्छृणोति नान्यद्विजानातिस
भूमा " या छांदोग्यगत भूम विद्यामें प्रसिद्ध
कहाहै ॥ औ तहांहिं " योवै भूमातत्सुखं " या श्रु
तिनें सो भूमा सुखरूप कहाहै ॥ सो सुख " अ
निर्देश्यं परमं सुखं " याकठश्रुतिमें अनिर्देश्य
औ निरतिशयानंद कहाहै ॥ यातें समुद्रकी
न्याइ अथाह अपरिमाण निरुपम है॥काहेतें जा-
काएक लेशमात्र सर्वाधिक हिरण्यगर्भका आनं
दहै ॥ तदुक्तं ॥ आनंदवारिधेस्तत्र विंदुमात्रमुदी
रितं ॥ अतःकथंहि निर्देश्यं भवे त्तत्परमं सुखमि
ति ॥ तिस ब्रह्मानंद समुद्रमें निमग्नकूं तुच्छ प्रपं
चका भान होवे नहीं ॥ तिस सुखका संपूर्णा
स्वादन षष्ठि भोमिकावानकूं है ॥ तासें किंचि
त् न्यून पंचमीभूमिकावानकूं औ सप्तमीभूमिका
वानकीतो तृप्तिवी रहे नहीं यातें सो अवाच्य है ॥
ये तीन जीवन्मुक्तोका रमण पदहै ॥ सो " रसो
वैसः रसं ह्येवायं लब्ध्वा ऽऽनंदी भवति। समो
दते मोदनीयं लब्ध्वा । आत्म क्रीड आत्मरतिः
क्रिया वानेष ब्रह्मविदां वरिष्ठः यंलब्ध्वा चापरंला
भंमन्यते नाधिकंततः " इत्यादि श्रुति स्मृत्यों

विषे स्पष्ट कहाहै ॥ अमृतास्वादी मूकमुनीकी न्याइ याते सो सुख अवाच्या है ॥ ऐसा जो आनंद समुद्रसो नित्य परंब्रह्मसोमें हूंइति संबंधः॥८॥ अथ भाषा टीका कृत इष्ट प्रार्थनं ॥ श्लोकः ॥ नारायण नमस्तुभ्यं निजानंदेनयस्वमां वेनाद्या स्त्वत्प्रसादेन परमानंदमागताः ॥ १ ॥ वेन गंधर्व कूं नारायन प्रसादतें परमानंदका लाभ उपनिषदमें प्रसिद्ध कहाहै ॥ ॐ

पूर्व ग्रंथ संदर्भकरि जिज्ञासुकुं जो कर्तव्य ज्ञातव्य औ प्राप्तव्य है सो विस्तारसें प्रतिपादन किया ॥ अब या अंत्य श्लोकसें या विज्ञाननौकाके पठनादिकाफल आचार्य कहेहै ॥ स्वरूपानुसंधान रूपामिति ॥

स्वरूपानुसंधानरूपांस्तुतिं यःपठेदादराद्भक्तिभावोमनुष्यः॥ शृणोतीहवानित्यमुद्युक्तचित्तोभवेद्विष्णुरत्रैववेदप्रमाणात् ॥ ९ ॥

यो मनुष्य या स्वरूपानुसंधान रूप औ स्तुत्यात्मक विज्ञाननौकाख्य ग्रंथका भक्तिभावित' उद्य

मवानचित्त हुवा नित्य इहां पढें अथवा श्रवण करे ॥ सो वेदप्रमाणसें इहांहि विष्णुरूप होवे है इति पदार्थः ॥ टीका॥नरदेहसें इतर शरीरोंविषे ज्ञानका अनधिकार सूचनार्थ इहां मनुष्य कहाहै॥ तिन मनुष्यों विषेवी जो धर्म अर्थ काम निमित्त यत्न करेहै सो पशु प्राय नराकृति है॥औ जो मोक्ष निमित्त यत्नवान है सोइ मुख्य मनुष्य है ॥ एसाजो अधिकारिया ग्रंथकूं भक्ति भावित चित्त होइ ज्ञानी गुरुसें पढें अथवा सादर श्रवण करे सो परम फल भागी होवै॥इहां भक्ति भावित कहनेसें यह जनायाकि ईश्वर गुरुकी भक्ति सहित चितवालेकूं हि सम्यक् तत्वका बोध होवेहै॥अन्यकूं नहीं॥ ईश्वर भक्ति निगुर्ण सगुण भेदसें दो प्रकारकी कहिहै ॥ ताकूं परा अपरावी कहेहै ॥ सा " परानुरक्तिरीश्वरे । मद्भक्तिं लभते परां । अहेतुक्य व्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ॥ लक्षणं भक्ति योगस्य निर्गुणस्य ह्युदाहृतं ॥ इत्यादि सूत्र स्मृति शास्त्रोंमें प्रसिद्ध कहिहै ॥ औ सगुन भक्तिवी अंगी अंग भेदसें द्विविध है ॥ प्रेम लक्षणा अंगीहै ॥ औ श्रवण कीर्तनादि नवधा अंग रूप है ॥ सानवधा " श्रवणं कीर्त्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनं ॥ अर्चनं वंदनं दास्यं सख्य [illegible] " [illegible]नसें शास्त्रोंमें प्रसिद्ध क

हिहै ॥ तिन नवधाके एक एक अंगके संपादनसें परिक्षत शुकदेव प्रल्हाद कमला पृथु अक्रूर हनुमान अर्जुन औ वलि ये नवज्ञानद्वारा कैवल्य पदकूं प्राप्त भयेहै ॥ तदुक्तं ॥ श्रीकांत श्रवणे परिक्षितिरभूद् वैय्यासकिः कीर्त्तने प्रल्हाद स्मरणे तदंघ्रि भजने लक्ष्मी पृथुः पूजने ॥ अक्रूरस्त्वभिवंदने कपिपति दास्येऽ थसख्येऽ र्जुनः सर्व स्वात्मनिवेदने बलिरभू त्कैवल्यमेकैकतः इति ॥ जैसे ईश्वर भक्तिका अद्भुत महिमा है तैसें गुरु भक्तिकाभी अद्भुत महिमाहै ॥ यातें निःश्रेयसकामी ईश्वरके तुल्य गुरु भक्तिकरे ॥ सो " यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ " याश्रुतिविषे प्रसिद्ध कहाहै ॥ ईश्वर गुरुकी भक्ति विद्या प्राप्तिका अंतरंग साधनहै ॥ यातें अध्ययन औ श्रवणविषे भक्ति भाव पद प्रयोग कियाहै ॥ औ उद्युक्त चित्त कहनेसें प्रयत्न उत्कर्षता बोधनकरिहै ॥ काहेतें सिथिल यत्न वानसें अर्थकी सिद्धि होवे नहीं ॥ किंतु प्रवल यत्नवान पुरुष व्याघ्रहो परम सिद्धिकूं पावेहै ॥ तदुक्तं ॥ इदं सुदुर्लभंज्ञानं पुरुषव्याघ्रेण लभ्यते इति॥यातें श्रवणादि साधन औ तत्साध्य ब्रह्म निष्ठामें प्रमाद नहि करना ॥ सो " प्रमादोवै मृत्यु महंब्रवीमि " इस सनत् सुजात वचनसें औ ॥ " प्रमादो ब्रह्म निष्ठायांन

कर्तव्यः कदाचन" इस शास्त्र वचनसें औ "श्रद्धा
वान् लभते ज्ञानं इसगीतावाक्यामें प्रसिद्धकहा हैं
यातें अति यत्न पूर्वक या ग्रंथका अध्ययन करें॥
औ बुद्धि मांद्यता रूप दोष हुवे सादर नित्य श्रवण
करे ॥ तासेंवी ज्ञान होयके मोक्ष होवेंहै ॥ सो
" तेपिचाति तरंत्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः "
या वाक्यसें गीतामें प्रसिद्ध कहाहै ॥ यातें वक्ता
श्रोता दोनो मोक्ष भागी सम होवेंहै ॥ औ को
इ कहे वडे शारीरकादि वेदांत ग्रंथनसें ज्ञान हो
वेंहै ॥ या अल्प स्तुति रूप ग्रंथनसें सम्यक् बोध
होवे नहीं ॥ तहां सुनो जो शारीरकादिक सर्व
वेदांत ग्रंथनका सारहै सो सर्व दधितें घृतो द्वारा
की न्याइ या विज्ञान नौका विषे स्थापन किया
है ॥ काहेतें जैसे छांदोग्योपनिषद्के षष्टे प्रपाठ
विषे तत्त्वमसिमहावाक्यका नव अभ्यास हैं॥
तैसें याके विषे यजुर्वेद गत अहं ब्रह्मास्मि यह
विद्वान्का अनुभव रूप नवअभ्यास है॥अर्थ यह
कि स्वरूपानुसंधान रूप यह विज्ञान नौका है ॥
औ संपूर्ण वेदांतकी प्रक्रियाका सूचन याके विषे
श्री आचार्यने कियाहै ॥ ताके व्याख्यान विषे
मेंने यथामति शुभकर्मसे आदिलेके संमाधि प
र्यंत सर्व साधन औ बोधोपयोगी पदार्थनका उ
देश विभाग लक्षण परीक्षापूर्वक वर्णन किया

है ॥ नामसें पदार्थका कथन उद्देश कहिये है ॥ ताके अवांतर भेद कथनका नाम विभाग है ॥ औ वस्तुका असाधारण धर्म लक्षण कहिये है ॥ जो अति व्याप्ति अव्याप्ति असंभवदोपरहित होवे सोइ यथार्थ लक्षण कहियेहै॥तासें भिन्न असत् लक्षण कहेहै आक्षेप समाधानपूर्वक प्रमाणयुक्तिसें पदार्थका निर्णयका नाम परीक्षा है ॥ औ या ग्रंथविषे प्रतिश्लोकमें स्वरूपका चिंतनहै ॥ यातें ताके पाठमात्रसेंबी सर्व पापोंकी निवृत्ति होवेहै ॥ औ जो ज्ञानी गुरूसें आदर सहित पढे अथवा श्रवण करे सो इहां जीवन दशा विषेहि विष्णुस्वरूप होवेहै ॥ औ जो कोइ कहे विष्णुकी प्राप्ति उपासनासे सुनियत है ज्ञानसें नहीं ॥ तहां सुनो यद्यपि वैकुंठवासि विष्णु विग्रहकी प्राप्ति तो उपासनासे उपनिषदनमें औ पुराणोमें कहिहै॥तथापि सो विष्णुका परमार्थस्वरूप नहीं ॥ किंतु माया रचित मूर्तिहै ॥ सो "माया एषा मया सृष्टा यन्मां पश्यसि नारद" या वचनसें आपस्वयं भगवानने कहाहै॥औ विष्णुका वास्तव स्वरूप व्यापनशील परब्रह्म है ॥ ताकूं ज्ञानवान प्राप्त होवेहै ॥ सा प्राप्तिबी उपासककी न्याइ सालोक्य सामिप्यादि चतुर्मुक्तिरूप नहीं ॥ किंतु सो व्यापक रूप विष्णु अहूं ए

सें स्वस्वरूपता करके प्राप्तिहै ॥ औ जोकोइ कहे ताके विषे प्रमाणका अभावहै ॥ सो नहि किंतु वेद प्रमाणतें ब्रह्म वेत्ताकूं विष्णु रूपता सिद्धहै॥ सो प्रमाण यहहै ॥ य एवंवेदस विष्णुरेव भवति। ब्रह्म विद्ब्रह्मैव भवति । ब्रह्म विदाप्नोति परं । तर ति शोक मात्मवित् । इत्यादि श्रुत्योंमें प्रसिद्ध कहाहै ॥ सा ब्रह्मभावकी प्राप्ति रूप कैवल्यं मो क्षवी देहपतानंतर नहीं किंतु जीवत दशामें हीं प्राप्त होवेहै ॥ सो “ अत्र ब्रह्म समश्नुते ” इत्या दि श्रुतिमें प्रसिद्द कहाहै ॥ औ “ तस्यतावच्चि रं यावन्न विमोक्षः । भूयश्चांते विश्वमाया निवृत्तिः। प्रारब्ध नाशात्प्रति भास नाशः । इत्यादि श्रुति योंमें प्रारब्धके क्षय हुविदेह मोक्ष कहाहै ॥ सो मुक्त हुवाहि ज्ञानी मोक्त पावेहै ॥ सो “ विमुक्त श्च विमुच्यते । ब्रह्मैवस न्ब्रह्माप्येति ” इत्यादि श्रुत्योंमे प्रसिद्द कहाहै ॥ तात्पर्य यहकि आवरण विक्षेप रहित प्राणसहित ब्रह्मनिष्ठ जीवन्मुक्त कहा जावेहै॥औ प्रकाश रूप ब्रह्मविषे सांतः क रण प्राणका विलय विदेह मुक्त कहा जावेहै ॥ विदेह मुक्तका प्राण देहांतर वा लोकांतरमे गमन करे नहीं ॥ किंतु इहां शरीरके अंतरही लय हो वेहै यातें ताकूं फेर संसार होवेनही ॥ सो “ नतं स्य प्राणा उत्क्रामंते । सतुतत्पदमाप्नोति यस्मा

ङ्कूयो न जायते। नस पुनरावर्तते। यद्गत्वान निवर्त्तते " इत्यादि श्रुति स्मृत्योंमेस्पष्ट कहाहै इति ॥ ९ ॥ अव ब्रह्मविद्यारूप विज्ञाननौकाख्य ग्रंथावलंबी पुरुषकी प्रशंसा करेहै ॥

विज्ञाननावं परिगृह्य कश्चित्तरेद्यदज्ञानमयं भवाब्धिं ॥ ज्ञानासिनायो हि विच्छिद्य तृष्णां विष्णोः पदं याति स एव धन्यः ॥१७॥ इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमच्छंकराचार्य विरचिता विज्ञाननौका समाप्ता॥

याका अर्थ ॥ जोकोइ पुरुष या विज्ञाननौका रूप दृढप्लवका सद्गुरु रूप कर्ण धारद्वारा आश्रय करके अज्ञान कल्पित संसाररूप सागरकूं तरेहै ॥ औ मोक्ष मार्गविषे प्रतिवंधकर भोगनकी तृष्णा रूप ग्राहकूं ज्ञानरूप कृपाणसें छेदन करके कैवल्य मोक्षरूप विष्णु [illegible]

धोरेय धन्यहे ॥ विष्णु ५८ ससाराध्वनका परं पार " तद्विष्णोः परमंपदं " या श्रुतिमें प्रसिद्ध कहाहै ॥ सोइ भवाब्धिका परंपार है ॥ इहां विष्णोः यापदमें षष्टी विभक्तिहै ॥ सा संबंधार्थ नहीं ॥ किंतुराहोः शिरः यान्यायकरि अभेदार्थ है इति॥१०॥अब भाषा टीका समाप्ति विषे मंगल करेहैं श्लोकः॥अद्वैता देश कर्तारं द्वैत ध्वांत विनाशकं ॥ नमामि भाष्य कारेनं वादि भागण भाहरं ॥ १ ॥ श्री देवाख्यं परं देवं सद्गुरुं हरिमीश्वरम् ॥ सर्व भूतहिता सक्तान्सज्जनांश्च नमाम्यहम् ॥ २ ॥ विज्ञाननौकाविनावस्य भाषेयं सामनिर्मिता ॥ भक्त्याचार्य पदे सावै पुष्पांजलिः समर्पिता ॥ ३ ॥ श्री शंकर पदांभोज सेवा मुद्दिश्य केवलं॥ कृता टीका मया तां च वीक्ष्य तुष्यंतु साधवः ॥ भक्तानां वीक्ष्यमाणानां शमातनो तु शंकरः ॥ ४ ॥ रामाब्धि नंद भूमाने विक्रम स्पातवत्सरे । मधुमासे सिते पक्षे रामजन्म तिथाविति॥५॥इति श्री साधुवर्यसामाव्ह विदुषा विरचितानुभूत्युडुपाख्य टीकासमाप्ता॥ ॐ तत्सत्॥१॥